amaj Foundation Chen

रसखान रचनावली

R
०२१
१६५

main. Gurukul Kang

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

122642

रसखान रचनावली

सम्पादक

विद्यानिवास मिश्र

सत्यदेव मिश्र

R
0-21
165

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R
0,2,9
764
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
122642
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
८९
165

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या............ आगत संख्या 122652

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित हैं। इस तिथि सहित ३०वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

122642

रसखान रचनावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाणी प्रकाशन
दिल्ली-११०००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसखान रचनावली

रसखान की सम्पूर्ण कृतियों का प्रामाणिक संस्करण
विस्तृत भूमिका और जीवन-चरित के साथ

सम्पादक
विद्यानिवास मिश्र
संयुक्त सम्पादक
सत्यदेव मिश्र

122642

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
०८१
९६४

वाणी प्रकाशन
21 ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित

संस्करण : 1998

© लेखकाधीन

मूल्य : 125.00

आवरण : शिव कुमार सिन्हा

शुभम ऑफसेट, दिल्ली-110032
द्वारा मुद्रित

RASKHAN RACHNAVALI
Ed. by Dr. Vidyanivas Mishra

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्कथन

हिन्दी-कृष्ण काव्य-धारा में रसखान का योगदान गुणात्मक एवं विशिष्ट है। उनका कृष्ण-प्रेम धर्म और सम्प्रदाय की सीमाओं से परे है। वे सच्चे अर्थ में भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि हैं। आज जाति, धर्म और समुदाय के नाम पर विखंडित राष्ट्र को ऐसे प्रातिभ-साहित्यकारों की आवश्यकता है जो भारतीय जन-मानस में प्रेम और समन्वयवादी भाव भर सकें। कहना न होगा कि मुसलमान होते हुए भी रसखान का कृष्ण-प्रेम इसका ज्वलंत उदाहरण है। इस दृष्टि से रसखान-काव्य पर पुनर्विचार समय की माँग है। 'रसखान रचनावली' के प्रणयन की यही कथा है। प्रस्तुत 'रचनावली' के प्रकाशन में एक दूसरा उद्देश्य और भी रहा है। रसखान के कई काव्य-संकलन अब तक हिन्दी-जगत् के सामने आ चुके हैं किन्तु उन्हें न तो दावे के साथ प्रामाणिक ही कहा जा सकता है, न सर्वथा पूर्ण ही। वस्तुत: क० मुं० हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय के पाण्डुलिपि अनुभाग का अवलोकन करते हुए इधर रसखान के पदों की एक पुरानी पाण्डुलिपि देखने में आई। प्रकाशित संकलनों के विश्लेषण-विवेचन के बाद देखा कि कई नये पद इस पाण्डुलिपि में हैं जो अब तक अप्रकाशित हैं और हिन्दी-जगत् के लिए अपरिचित। अत: रसखान रचनावली के प्रकाशन का मोह घनीभूत हुआ और रसखान पर कुछ लिखने का भाव इस रचनावली के रूप में मूर्तिमान हो सका।

क० मुं० हिन्दी विद्यापीठ में संगृहीत पाण्डुलिपि में यों तो पदों की संख्या शायद इस रचनावली से कहीं अधिक है, किन्तु यहाँ मात्र उन्हीं पदों को संकलित किया गया है जो पाठालोचन की दृष्टि से खरे उतरे हैं। संदिग्ध और भ्रष्ट प्रतीत होने वाले पदों को छोड़ दिया गया है। इस सम्बन्ध में रसखान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की रचनाओं पर विचार करते हुए यथा स्थान निर्देश कर दिया गया है।

प्रस्तुत रचनावली विज्ञ पाठकों को समर्पित है, इस आशा के साथ कि रसखान की काव्य-यात्रा के धीर पथिकों के लिए यह एक सोपान बने !

अन्त में मैं उन सभी विद्वानों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनके काव्य-संकलनों अथवा जिनकी ज्ञान-राशि का उपयोग इस रचनावली के तैयार करने में किया गया है।

साथ ही क० मुं० विद्यापीठ के पुस्तकालय के प्रति तथा श्री चिरंजीव पालीवाल पुस्तकालय के प्रति आधार सामग्री के लिए तथा श्री अगम प्रसाद माथुर, कुलपति आगरा विश्व-विद्यालय के प्रति प्रोत्साहन के लिए आभार व्यक्त करता हूँ।

—विद्यानिवास मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाएँ

रसखान स्वच्छंद भावधारा के कवि हैं। वल्लभाचार्य के पुत्र स्वामी विट्ठलनाथ का शिष्यत्व ग्रहण करके भी साम्प्रदायिक मत-मतांतर से वे आक्रांत नहीं रहे। प्रेम उनके जीवन का सार है, लौकिक हो अथवा अलौकिक। जिस लौकिक प्रेम में वे अपने यौवन काल में पराभूत रहे, उस का परिष्कार हुआ, उदात्तीकरण हुआ और वही राधा-कृष्ण प्रेम में परिवर्तित हो गया। यही कारण है कि उनकी भक्ति मूलतः माधुर्य भाव की है। ऐसे मधुरा भक्तों की काव्यधारा प्रबंधत्व से परे होती है। दिव्य प्रेमासक्ति से आप्लावित हृदय और वाणी से जो भी फूट पड़ा काव्य बन गया। कविता वहाँ हृदय के आवेग से प्रसूत होती है, वह भावोद्गार का सहज उच्छलन होती है।

रसखान का उद्देश्य, कदाचित् ग्रंथ-रचना न रहा होगा। स्फुट पद गाते रहे होंगे। प्रेमी जनों ने सरस पदों का संग्रह किया होगा। भावुक कवि ने प्रेम-भक्ति से आवेशित हो न जाने कितने पद रचे? कहना कठिन है। अब तक जितने पद उपलब्ध हुए हैं, निश्चित् रूप से उनसे अधिक। यह हिन्दी जगत् के लिए दुर्भाग्य का विषय ही है कि उनका समग्र साहित्य अब तक उपलब्ध नहीं है; और जो प्रकाश में आया भी है, उसकी प्रामाणिकता प्रश्नचिह्नित है। रसखान के काव्य-संग्रह प्रस्तुत करने वाले अनुसंधायकों, पाठालोचकों और समीक्षकों की प्रायः दो कोटियाँ रही हैं—ऐसे संग्रहकर्ता जिन्होंने बिना छानबीन के रसखान के नाम से बहुत कुछ जोड़ने का अतिरिक्त उत्साह प्रदर्शित किया है; दूसरे ऐसे जिन्होंने बुद्धिमत्ता की झोंक में सही को भी गलत प्रमाणित करने की कोशिश की है। प्रस्तुत रचनावली में इन दोनों भ्रवान्तों से बचने का प्रयास किया गया है।

रसखान की तीन रचनाओं—'सुजान-रसखान', 'प्रेम-वाटिका'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और 'दानलीला'—की प्रामाणिकता असंदिग्ध है। इस संकलन में इन तीन रचनाओं के अतिरिक्त कुछ स्फुट पद और प्रस्तुत किए गए हैं जिन्हें रसखान का मानना निरापद प्रतीत हुआ। यहाँ रसखान के नाम से जोड़ी जाने वाली नितांत अप्रामाणिक रचनाओं की संक्षेप में चर्चा करते हुए इस संग्रह के आधार ग्रंथों की चर्चा प्रस्तुत्य है।

नागरी प्रचारिणी सभा के संग्रहालय में उक्त रचनाओं के अतिरिक्त 'रसखान दोहावली' और 'रसखान कवितावली' नामक दो रचनाएँ रसखान के नाम से मिलती हैं। 'रसखान दोहावली' की अरबी-फ़ारसी शब्दों से बोझिल शैली[१] रसखान की नहीं हो सकती। पुस्तक का कथ्य प्रेमी-प्रेमिका का शारीरिक प्रेम-विषयक वार्तालाप है और अश्लीलता का चरमोत्कर्ष इस प्रणय-प्रसंग में पाया जाता है। रसखान की अन्य रचनाओं के भाव-व्यापार और कला-वैशिष्ट्य को दृष्टि में रखकर यह संग्रह अप्रामाणिक कहा जा सकता है। 'रसखान कवितावली' में रसखान का कोई पद संगृहीत नहीं है। बिहारी, कृष्ण कवि, ग्वाल कवि, ठाकुर आदि के सरस पद संगृहीत हैं, मात्र नाम 'रसखान कवितावली' है। अतः इसकी अप्रामाणिकता स्वयं सिद्ध है।

रसखान के नाम से 'अष्टयाम' शीर्षकांतर्गत कल्याण[२] में २६ दोहे प्रकाशित हुए हैं। इन दोहों में भाषा-शैली का सहज प्रवाह और सादगी रसखान की अन्य रचनाओं से मेल खाती है। दोहों का कथ्य भी कृष्ण की दिनचर्या (प्रातः निद्रा-त्याग से सायं निद्राधीन होने तक) है। इन दोहों में से कुछेक 'सुजान-रसखान' में लिए गए हैं इन सभी दोहों कीं प्रामाणिकता के संबंध में कहना कठिन है। प्रकाशक को ये दोहे कहाँ मिले, ज्ञात नहीं। स्रोत संबंधी कोई विवरण उन्होंने नहीं दिया है। अतः लगभग छह दोहे जो 'सुजान-रसखान' के अन्य संकलनों में भी दिये गये हैं, उन्हीं को रचनावली में स्थान दिया गया है।

रसखान-काव्य की खोज हिन्दी-साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

---

१. भाषा-शैली द्रष्टव्य है—प्रश्न : रंज उठाया है बहुत, दिल में हुआ हिरास।
दिल मेरा बेचैन है, हुई वस्ल की प्यास॥
उत्तर : दो दिन से तुझे इश्क है, हुआ तेरा यह हाल।
लानत ऐसे इश्क में, जीना तेरा मोहाल॥

२. जनवरी, १९५६, सन्तवाणी अंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल[1] से ही हो रही है। रसखान की रचनाओं का सर्वप्रथम प्रकाशन किशोरीलाल गोस्वामी ने किया। तब से अब तक रसखान के कई संग्रह—किशोरीलाल गोस्वामी द्वारा संकलित सुजान-रसखान—१९१९ ई०; प्रेम-वाटिका—१९०७; रसखान-पदावली-संकलन : प्रभुदत्त ब्रह्मचारी— संवत् १९८६ वि०; रसखान रत्नावली-संकलन : किंकर जी—१९४१ ई०; 'रसखान का अमर काव्य, संकलन : दुर्गा शंकर मिश्र—१९५८ ई०; रसखान और घनानंद, संकलन : बाबू अमीर सिंह—१९२९; रसखानि ग्रंथावली, सम्पादन : आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—संवत् २०१० आदि प्रकाशित हो चुके हैं। अधिकांश विद्वानों ने अपने-अपने संकलनों में एक-दो पद अपने पूर्व संग्रहों से अधिक देने का प्रयास किया है, भले ही उनकी प्रामाणिकता असंदिग्ध न हो। इस क्षेत्र में आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र का भगीरथ प्रयास प्रशंसनीय है। उन्होंने अब तक के संग्रहों में प्रकाशित कवित्त, सवैयों, दोहों आदि की संख्या में भी अभिवृद्धि की है। यह उनके अनुसंधान का परिणाम है। नागरी प्रचारिणी सभा की रिपोर्टों और विवरणों[2] को दृष्टि-पथ में रखकर अन्यान्य पाण्डुलिपियों का सहारा लेकर मिश्र जी ने 'सुजान-रसखान' में २१४ कवित्त-सवैये, 'प्रेम-वाटिका' में ५३ दोहे तथा 'दानलीला' में ११ पदों के साथ ही साथ प्रकीर्णक के अंतर्गत दो पद होली और सगुनौती के भी संकलित किये हैं। प्रामाणिक रूप से प्रकाशित रसखान काव्य-संग्रहों में, कदाचित्, इस संग्रह में सर्वाधिक पद हैं।

आधार-सामग्री के रूप में आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र की 'रसखानि ग्रंथावली' और बाबू अमीर सिंह के संकलन को हमने दृष्टि-पथ में रखा है। क० मुं० हिन्दी एवं भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा की लाइब्रेरी के पाण्डुलिपि अनुभाग से प्राप्त 'रसखान कवित्त' नामक पाण्डुलिपि से कई नए पद प्राप्त हुए हैं, जो आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र के संग्रह में भी नहीं हैं। वस्तुतः प्रस्तुत रचनावली के प्रकाशन की अनुप्रेरणा यही पाण्डुलिपि है। रसखान के प्रामाणिक पदों का अधिकाधिक संख्या में प्रकाशन हो सके, इस संग्रह का प्रस्थान-बिन्दु भी यही भाव रहा

१. बाबू हरिश्चन्द्र, पण्डित प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास एव राधाचरण गोस्वामी ने काफी प्रयास किया।
२. अठारहवें त्रैवार्षिक विवरण का सम्पादन भी स्वयं मिश्र जी ने किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हिन्दी साहित्य में मुसलमान कवियों का योगदान गुणात्मक एवं विशिष्ट है और इस दृष्टि से रसखान का स्थान मूर्धन्य है। ऐसे महत्त्वपूर्ण कवि की रचनाएँ अभी अंधकार के गर्त में हैं, उन्हें प्रकाश में लाने का कोई भी प्रयास अकारथ नहीं हो सकता।

उक्त पाण्डुलिपि का लिपि-काल संवत् १९०० (व्योम व्योम अरु नवधरा संवत् नवमी जानि) है और इसमें १७६ पद (कवित्त-सवैया) संगृहीत हैं। इस जीर्ण प्रति के प्रथम छह पद एवं मुख-पृष्ठ ध्वस्त हो चुके हैं। लिपिक अज्ञात है। इस उन्तीस पृष्ठीय पाण्डुलिपि के लिपिकार का हस्तलेख बहुत साफ नहीं है। भाषा संबंधी त्रुटियाँ अनेक हैं जिनका परिशोधन यथा-स्थान कर दिया गया है।

प्रस्तुत रचनावली तैयार करने में पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र और बाबू अमीर सिंह जी के संकलनों के साथ ही अन्य प्रकाशित संग्रहों से भी सहायता ली गई है। अभी तक प्रकाशित रसखान के काव्य-संग्रहों में से अधिकांश संकलनों के पाठों का विश्लेषण-विवेचन करने के उपरान्त प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत करने का प्रयास इस रचनावली में है। प्रकाशित छन्दों के अतिरिक्त जो नए कवित्त-सवैये उक्त पाण्डुलिपि में मिले हैं, उनकी प्रामाणिकता पर विचार करने के उपरान्त ही उन्हें मूल पाठ में स्थान दिया गया है। इसीलिए पाण्डुलिपि से प्राप्त कई ऐसे नए पदों को, जो भाषा की दृष्टि से अत्यन्त संक्रमित और भ्रष्ट प्रतीत हुए हैं, इस संकलन में स्थान नहीं दिया जा सका है। मात्र वे ही पद स्थान पा सके हैं जिनमें 'रसखान' की छाप है अथवा जो रसखान की भावभूमि और भाषा-शैली के निकट प्रमाणित हुए हैं। पद-ग्रहण की इस प्रक्रिया में कवि की भावधारा और भाषा-शैली को निरन्तर दृष्टि-पथ में रखा गया है। आदान की इस क्रिया में प्रकाशित संकलनों से उन पदों को भी छोड़ दिया गया है जिनकी प्रामाणिकता किसी तरह भी संदिग्ध प्रतीत हुई है। उदाहरणार्थ, प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के संकलन से निम्न पद प्रामाणिकता संदिग्ध होने के कारण छोड़ दिया गया है—

भिक्षुक तिहारे कहाँ ? बलि मख साला जहाँ
संपनि कौ संगी ? कहूँ ह्वै है क्षीर सर में
एरी बहुरंगी बैल वारो कहाँ नाचत है
कीन्हें तिरभंगी कहूँ ह्वै है सुदामा पास
विष को अहारी कहाँ ? पूतना के घर में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिन्धु सुता आनि मिली तर्के सों तर्क करी
गिरिजा मुसिक्यात जात झारा लिये कर में।[1]

उक्त पद में न तो 'रसखान' की छाप ही है और न भाव-भाषा की दृष्टि से यह छंद रसखान विरचित प्रतीत होता है। भाषा-गत माधुर्य, रसमयी पद संघटना और रसखान की सानुप्रासिकता की प्रवृत्ति का यहाँ सर्वथा अभाव है। गोस्वामी जी द्वारा संपादित 'सुजान रसखान' में मात्र १२२ कवित्त-सवैये थे। ब्रह्मचारी की ने खोज-बीन कर १३४ पद प्रकाशित किये, जो अधिकांशतः 'राग-रत्नाकर' से लिये गये हैं। यद्यपि ब्रह्मचारी जी की इस खोज से कई नए पद हिन्दी-जगत के समक्ष आए, फिर भी कुछेक पदों की प्रामाणिकता विचारणीय है। उक्त पद हमें रसखान विरचित नहीं लगा, अतः प्रस्तुत संकलन में उसे संगृहीत करने की विवशता रही है।

कोई कवित्त-सवैया किसी प्राचीन अथवा अर्वाचीन संग्रह में संकलित है इसीलिए उसे भी प्रस्तुत संकलन में स्थान मिले, ऐसा कोई विधान यहाँ नहीं अपनाया गया है। पद की प्रामाणिकता ही संग्रह की कसौटी रही है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पद अधिकांश संकलनों में नहीं मिलता, फिर भी रसखान की छाप आदि से प्रामाणिक प्रतीत हुआ। अतः इसका चयन किया गया है।

खेलिये फाग निसंक ह्वै आज मयंकमुखी कहै भाग हमारो।
तेहु गुलाल छुओ कर में पिचकारिन मैं रंग हिय मँह डारो।
भावे सुमोहि करो रसखानजू पाँव परो जनि घूंघट टारो।
वीर की सौंह हौ देखि हौ कैसे अबीर तो आँख बचाय के डारो?

कुछेक पद ऐसे भी प्रस्तुत किये गये हैं जो कुछ पाठ-भेद के साथ दूसरे कवियों के नाम के साथ भी जोड़े जाते रहे हैं, यथा—

चीर की चटक औ लटक नव कुण्डल की
भौंह की मटक नेह आँखिन दिखाउ रे।
मोहन सुजान, गुन-रूप के निधान फेरी
बाँसुरी बजाइ तनु-तपन सिराउरे।
एहो बनवारी बलिहारी जाउँ तेरी आजु।
मेरी कुंज आइ नेकु मीठी तान गाउ रे।
नंद के किसोर चितचोर मोर पंख वारे
बंसीवारे साँवरे पियारे इत आउ रे।

---

१. रसखान-पदावली, संपादन : प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, पृ० ८२, पद १२४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उक्त पद कुछ पाठ-भेद के साथ 'आदिल कवि' के नाम से भी 'शिवसिंह सरोज' में उद्धृत है, यथा—

मुकुट की चटक लटक बिबि कुंडल की
भौंहें की मटक नेकु आँखिन दिखाउ रे।
एहो बनवारी बलिहारी जाउँ तेरो
मेरी गैल किनि आइ नेक गाइनि चराउ रे।
आदिल सुजान रूप गुण के निधान कान्ह
बाँसरी बजाई तन तपनि बुझाउ रे।
नंदकिसोर चितचोर मोर पंखवारे,
वंशीवारे साँवरे पियारे इत आउ रे।[1]

वस्तुत: यह पद मूलत: रसखान की रचना है, आदिल कवि का नाम, कदाचित् कुछ पाठ-भेद के साथ बाद में जोड़ा हुआ लगता है। मध्यकालीन साहित्य के मर्मज्ञ एवं हिन्दी पाठालोचकों में शीर्षस्थ आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र भी इसे रसखान की ही रचना मानते हैं।

इसी तरह निम्न पद भी रसखान की रचना मानकर संगृहीत हुआ है—

जल की न घट भरें मग की न पग धरें
घर की न कछु करें बैठी भरें साँसुरी।
एकै सुनि लोट गई एकै लोट-पोट भई
एकनि के दृगनि निकसि आए आँसुरी।
कहे रसखानि सो सबै ब्रज बनिता बधि
बधिक कहाय हाय भई कुलहाँसुरी।
करिये उपाय बाँस डारिये कटाय
नाहि उपजेगौ बाँस नाहि बाजे फेरि बाँसुरी॥

पद की छाप, भाषा-शैली आदि, इसे रसखान विरचित प्रमाणित करते हैं। श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र एवं चन्द्रशेखर पाण्डेय प्रभृति विद्वानों ने भी इसे रसखान का मानकर अपने-अपने संग्रहों में स्थान दिया है। किन्तु शिवसिंह सरोज कुछ पाठान्तर के साथ इसे रसनायक तालिब अली बिलग्रामी, की रचना

---

१. शिवसिंह सरोज, पृ० ११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानते हैं। 'शिवसिंह सरोज' में पाठ-भेद के साथ यह पद निम्न प्रकार से है—

जल की न घट भरें मग की न पग धरें।
घर की न कछु करें बैठी भरें साँसुरी।
एके सुनि लोटि गई एके लोट पोट भईं।
एकनि के दृगते निकसि आये आँसुरी।
कहे रसखानि सो व्रज बनितनि बीच।
बधिक कहाय होई कुल हाँसुरी।
करिये उपाय बाँस डारिये कटाय।
नहि उपजेगौ बाँस नाहिं बाजे फेरि बाँसुरी॥[1]

कहना न होगा कि मध्यकालीन काव्य से चौर्य कर्म कुछ कम नहीं हुआ है। रस-सिद्ध स्थापित कवियों की रचनाओं को कुछ हेर-फेर के साथ दूसरे अविख्यात कवियों के नाम से प्रचारित करना एक आम बात रही है। रसखान के साथ ऐसी दुर्घटनाएँ कम नहीं हुई हैं। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि नीर-क्षीर विवेकिनी प्रज्ञा के साथ रसखान-साहित्य को प्रकाश में लाया जाए। प्रस्तुत रचनावली हेतु कवित्त-सवैयों आदि का चयन करते समय एक ओर जहाँ रसखान की काव्यगत विशिष्टताओं को कसौटी माना गया है, वहीं दूसरी ओर मध्यकालीन साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों की उपपत्तियों को भी ध्यान में रखा गया है। इस चयनिका में चयनित पदों की आधार-सामग्री और चयन-प्रक्रिया संबंधी दृष्टि-बिन्दुओं की चर्चा के उपरान्त रसखान की रचनाओं के संबंध में भी कुछ कहना आवश्यक प्रतीत होता है।

सुजान-रसखान

'सुजान-रसखान' सम्बन्धी सर्वाधिक पद पंडित विश्वनाथप्रसाद मिश्र की 'रसखानि ग्रंथावली'[2] में मिले। प्रायः पुराने संकलनों में पदों की संख्या २० से १३४ तक ही रही है। आचार्य मिश्र ने 'सुजान रसखान' में २१४ पदों का संग्रह अनथक प्रयास और गंभीर अध्यवसाय से किया है। मिश्र जी के संग्रह के अतिरिक्त लगभग ६० पदों का संग्रह प्रस्तुत चयनिका में किया गया है जिनमें से अधिकांश क० मु० हिन्दी

---

१. शिवसिंह सरोज, पृ० २१६

२. रसखानि ग्रंथावली—सम्पादक आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र (दूसरा संस्करण), संवत् २०१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यापीठ से प्राप्त पाण्डुलिपि से लिये गये हैं। इस पाण्डुलिपि में लगभग ८० पद ऐसे मिले जो अब तक प्रकाशित संग्रहों में नहीं दिखाई दिए। किन्तु परीक्षण पर लगभग २० पद भाषा की दृष्टि से अत्यधिक लचर और संक्रमित प्रतीत हुए।

रसखान की भाव-शक्ति, सहजानुभूति तथा रस-सिक्त मनोभूमियों को अनायास ही अभिव्यक्ति देने की उनकी क्षमता, उनका अनुप्रास-प्रेम तथा भाषागत मार्दव और माधुर्य आदि कुछ ऐसी विशिष्टताएँ हैं जो उनकी काव्य-शैली को रेखांकित करती हैं। वस्तुतः उनके पदों की प्रामाणिकता की कसौटी उनके काव्य के उक्त लक्षणों को ही मानना चाहिए। मध्यकालीन भक्तकवियों द्वारा नाम की छाप अपनी रचनाओं में छोड़ने की एक महत्त्वपूर्ण परम्परा रही है। रसखान के अधिकांश पदों में भी 'रसखान' शब्द की छाप मिलती है। किसी पद की प्रामाणिकता की जाँच के लिए न्यूनाधिक रूप में 'रसखान' की छाप को भी दृष्टि-पथ में रखा गया है।

समग्रतः भाव, भाषा-शैली, छाप आदि को ध्यान में रखकर प्राप्त पाण्डुलिपि से मात्र उन्हीं पदों को 'रचनावली' में रखा गया है जिनमें इन बातों का निर्वाह हुआ है। इस तरह प्रस्तुत रचनावली में आचार्य मिश्र एवं बाबू अमीरसिंह तथा अन्य पुराने संकलनों से संगृहीत पदों का चुनाव करके तथा पाण्डुलिपि से प्रामाणिक प्रतीत होने वाले पदों का चयन करके लगभग २७४ कवित्त-सवैया-दोहे आदि प्रस्तुत किए गए हैं।

पुराने संकलनों को केन्द्र में रखकर यथास्थान पाठ-भेद का निर्देश भी किया गया है। पाठ के थोड़े से हेर-फेर के साथ पुराने संग्रहों में पुनरावृत्ति-दोष पाया जाता है जिसके निवारण का हमने निरंतर प्रयास किया है।

प्रायः सभी संग्रहकर्ताओं ने 'सुजान-रसखान' के कवित्त-सवैयों में अनुक्रम निर्धारित किया है। रसखान-काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य कृष्ण का लीला-विलास है। कवि ने विभिन्न लीलाओं से संबंधित पदों की रचना विभिन्न मनोदशाओं में समय-समय पर की होगी जिनमें कोई विशिष्ट तारतम्य ढूंढ़ना मुझे अनुपयोगी लगा। प्रेम, भक्ति, बाल-लीला, गोचारण, चीरहरण, कुंज-विलास, रास-लीला, पनघट-प्रसंग बन-लीला, गोरस-लीला, राधा-रूप-वर्णन, वयःसंधि, सुकुमारता, वंशीवादन, पूर्वराग, अभिलाषा, रूपमाधुरी, चेतावनी, उपदेश, प्रेमलीला, दधिदान, उपालम्भ, सपत्नीभाव, मिलन, वियोग, चौपड़,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिझवार, मानवती प्रिया, विदग्धा, सुरत, सुरतांत, होली, भ्रमर गीत, हरि शंकरी, भक्ति भावना, अलौकिकत्व, नटखट कृष्ण, कृष्ण सौन्दर्य, कालिय-दमन, फाग-लीला, सखी-शिक्षा, कुवलयापीड़, उद्धव-उपदेश, ब्रज-प्रेम आदि अन्यान्य प्रसंगों का वर्णन ही रसखान-काव्य का कथ्य है। वस्तुतः उनके काव्य का मूल विषय है कृष्ण-वृत्त। अतः उक्त प्रसंगों से संबंधित पदों को अलग-अलग शीर्षकों के अंतर्गत रखना भावरश्मियों को तिरोहित करना है। इसके साथ ही इसी प्रकार अन्यान्य शीर्षकान्तर्गत पदविभाजन पूर्व संकलनों के अनुक्रम की पुनरावृत्ति भर होती। यह पिष्ट-पेषण हमें उचित प्रतीत नहीं हुआ। इसलिए इस रचनावली में कोई अनुक्रम प्रस्तुत नहीं किया गया है। जिस सहज रूप में कवित्त, सवैया, दोहा और सोरठा हमें मिले, उसी क्रम में उन्हें सँजो दिया गया है। रसखान का रचना-संसार अनंत का लीला-व्यापार है अथवा उसके क्रीड़ा-कुंज की प्रतिच्छाया है। अनंत को कौन सीमाबद्ध कर सका है, कौन अनुक्रमित कर सका है ?

प्रेम-वाटिका

रसखान के लगभग सभी प्रामाणिक काव्य-संकलनों में 'प्रेम-वाटिका' में ५३ दोहे दिये गये हैं। आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने भी ५३ दोहे प्रस्तुत किये हैं। अतः 'प्रेम-वाटिका' के उस समग्र पाठ को प्रामाणिक मानकर इस रचनावली में संकलित किया गया है।

दान-लीला

दान-लीला में ११ कवित्त-सवैया संगृहीत हैं। यह लघु-रचना राधा-कृष्ण अथवा गोपी-कृष्ण-संवाद के रूप में मिलती है। 'सुजान-रसखान' के दान-लीला संबंधी पदों से ये पद भिन्न हैं। विद्वानों ने इसकी प्रामाणिकता संदिग्ध मानी है। संदेह के कई कारण हैं। दान-लीला के ग्यारह छन्दों में से एक भी छन्द मुक्तक-रूप में नहीं मिलता। रसखान की प्रवृत्ति सवैया-रचना की ओर अधिक रही है और इसमें कुल पाँच सवैया ही हैं। रसखान ने प्रायः अपने सभी पदों में अपने नाम की छाप दी है। दान-लीला के ग्यारह पदों में मात्र एक बार (पद सं० २ में) उनका नाम आया है। अतएव इसके रसखान-रचित होने में संदेह है।[1]

---

१. रसखान : काव्य तथा भक्ति-भावना, पृ० ७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः इन कारणों से 'दान-लीला' की अप्रामाणिकता सिद्ध नहीं होती। रसखान की प्रवृत्ति सवैया की ओर अधिक है तथा सवैया-शैली उन्हें प्रिय है, इसका तात्पर्य यह नहीं कि उन्होंने अन्य छन्दों का प्रयोग ही नहीं किया है। कवित्त, दोहा, सोरठा भी उन्होंने साधिकार रचे हैं। अतः इस आधार पर दान-लीला की प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता का प्रश्न हल नहीं होता। और न ही इस दृष्टि से कि 'दान-लीला' मुक्तक-रचना नहीं है। वस्तुतः कृति में गोपी-कृष्ण अथवा राधा-कृष्ण का हास-परिहास ही है किसी गम्भीर कथ्य की प्रस्तुति यहाँ नहीं है। अतः किसी कथा और प्रबंधत्व के निर्वाह का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। संवादों में भी कोई विशिष्ट तारतम्य यहाँ नहीं है। इसलिए 'दान-लीला' को भी मुक्तक की कोटि में ही रखना होगा। पहले ही बताया जा चुका है कि रसखान प्रेमी भक्त थे। लौकिक और कालान्तर में अलौकिक प्रेमोन्माद से उन्मत्त कवि ने अपने भावावेश को, प्रेममय आवेग को सहज रूप से अभिव्यक्ति दी है। रसखान जैसे दिव्य-प्रेम से आवेशित कवि से मुक्तक के अतिरिक्त आशा करना ही भ्रामक होगा। जहाँ तक 'रसखान' नाम की छाप का प्रश्न है, तो यह कहा जा सकता है कि दान-लीला के अतिरिक्त भी ऐसे अनेक पद हैं जहाँ कवि की छाप नहीं है। अतः ऐसी किसी दृष्टि से 'दान-लीला' की प्रामाणिकता पर प्रश्न-चिह्न नहीं लगाया जा सकता।

प्रामाणिकता के पक्ष में इतना कहना ही पर्याप्त है कि 'दान-लीला' का उल्लेख रसखान की रचना के रूप में काशी नागरी प्रचारिणी की 'खोज-रिपोर्ट' में विद्यमान है। यही नहीं, हिन्दी की मध्यकालीन स्वच्छन्द काव्य-धारा के अन्यतम अनुसंधायक आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने इसे रसखान की प्रामाणिक रचना मानकर अपने संग्रह 'रसखानि ग्रंथावली' में समाविष्ट किया है। प्रस्तुत रचनावली में 'दान-लीला' के ग्यारह पद संकलित किये गये हैं।

रसखान की इन तीन रचनाओं के अतिरिक्त पाँच स्फुट पद भी चयनित किये गये हैं। हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर विद्वानों ने रसखान के कुछ नए पद प्रकाशित किये हैं। इन पदों की संख्या लगभग पन्द्रह है। ये पद 'रसखान' विरचित हैं या नहीं, यह कहना कठिन है। परन्तु इनमें कम से कम पाँच पद ऐसे अवश्य हैं जो रसखान की भाषा-शैली एवं छाप आदि की दृष्टि से रसखान के प्रतीत होते हैं। इन्हीं पाँच पदों को 'स्फुट पद' शीर्षकांतर्गत इस रचनावली में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान दिया गया है।

'रचनावली' की प्रेस कॉपी तैयार करते हुए मन भावाकुल हो रहा है—उन विद्वज्जनों के प्रति जिनकी ज्ञान-राशि का उपयोग इस संग्रह के निर्माण में हुआ है। मैं उन सभी का हृदय से आभारी हूँ।

नृप हेम-मुद्रा और रंक वराटिका समान भाव से वाग्देवता को समर्पित होते हैं। आशा है सहृदय समाज 'रचनावली' का स्वागत करेगा। तथास्तु!

—सत्यदेव मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रम

रचनाएँ / 7

रचनावली

सुजान-रसखान / 21

दानलीला / 79

स्फुट पद / 83

प्रेमवाटिका / 87

परिशिष्ट एक / 93

परिशिष्ट दो / 105

परिशिष्ट तीन / 117

परिशिष्ट चार / 131

परिशिष्ट पाँच / 147

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनावली

R 0821/164

सुजान-रसखान

सवैया

122642

मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज[1] गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तौ कहा बस मेरो चरौं नित नन्द की धेनु मँझारन* ॥
पाहन हौं तौ वही गिरि को जो धर्‌यो[2] कर छत्र पुरन्दर* धारन।
जो खग हौं तौ बसेरो करौं मिलि[3] कालिंदी कूल कदंब की डारन ॥१॥

या[4] लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवो निधि को सुख नन्द की गाइ चराइ बिसारौं॥
रसखानि[5] कबौं इन आँखिन सों ब्रज के बनबाग तड़ाग निहारौं।
कोटिक[6] रौ कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं ॥२॥

मोरपखा सिर ऊपर राखिहौं गुंज की माल गरें पहिरौंगी।
ओढ़ि पितंबर लै लकुटी बन गोधन ग्वारनि संग फिरौंगी॥
भावतो वोहि[7] मेरो रसखानि सों तेरे कहे सब स्वाँग करौंगी।
या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरा न धरौंगी ॥३॥

पाठांतर—१. नित। २. कियो ब्रज पुरन्दर धारन। ३. वही। ४. वा। ५. ए। रसखान जबै इन नैनन तें ब्रज के वनबाग निहारो। ६. कोटि कई कलधौत के धाम करील की कुंजन ऊपर वारों अथवा कोटिक ए कलधौत के धाम। ७. है तू।

***शब्दार्थ**—मँझारन=बीच में। पुरन्दर=इन्द्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक समै मुरली धुनि मैं रसखानि लियो कहुँ नाम हमारो।
ता दिन तें परि बैरी बिसासिनी झाँकन देती नहीं है दुवारो॥
होत चबाव बचाओं सु क्यों करि क्यों अलि भेंटिए प्रान पियारो।
दृष्टि परी तबहीं चटको अटको हियरे पियरे पटवारो॥४॥

गावैं गुनी गनिका* गन्धर्ब* औ सारद सेस सबै गुन गावत।
नाम अनंत गनंत गनेस ज्यौं ब्रह्मा त्रिलोचन पार न पावत॥
जोगी जती तपसी अरु सिद्ध निरंतर जाहि समाधि लगावत।
ताहि अहीर की छोहरियाँ* छछिया* भरि छाछ पै नाच नचावत॥५॥

खेलत फाग सुहाग भरी अनुरागहिं लालन कों धरि कै।
मारत कुंकुम केसरि के पिचकारिन में रँग कों भरि कै॥
गेरत लाल गुलाल लली मनमोहिनी मौज मिटा करि कै।
जात चली रसखानि अली मदमस्त मनों मन कों हरि कै॥६॥

कान्ह भए बस बाँसुरी के अब कौन सखी हमकों चहिहै।
निस द्यौस रहै संग साथ लगी यह सौतिन तापन क्यों सहिहै॥
जिन मोहि लियो मनमोहन को रसखानि सदा हमकों दहिहै।
मिलि आओ सबै सखी भाग चलैं अब तो ब्रज मैं बँसुरी रहिहै॥७॥

काह कहूँ सजनी सँग की रजनी नित बीतै मुकुंद को हेरी।
आवन रोज कहैं मनभावन आवन की न कबौं करी फेरी॥
सौतिन भाग बढ्यौ ब्रज में जिन लूटत हैं निसि रंग घनेरी।
मो रसखानि लिखी बिधना मन मारिकै आपु बनी हौं अहेरी॥८॥

---

*शब्दार्थ—गनिका=अप्सरा। गन्धर्ब=गंधर्व, संगीतप्रिय देव-योनि। छोहरियाँ=लड़कियाँ। छछिया=मिट्टी का छोटा-सा पात्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन ठगौरी* भरी हरि आजु बजाई है बाँसुरिया रंग¹ भीनी।
तान सुनी जिनहीं तिनहीं तबहीं² तिन लाज बिदा कर दीनी॥
घूमै घड़ी घड़ी³ नन्द के द्वार नवीनी कहा कहुँ बाल प्रबीनी।
या ब्रजमंडल में रसखानि सु कौन भटू* जो लटू नहिं कीनी॥९॥

आजु गई हुती भोरही हौं रसखानि रई* कहि नन्द के भौंनहिं।
वाको जियौ जुग लाख करोर जसोमति को सुख जात कह्यौ नहिं॥
तेल लगाइ लगाइ कै अंजन भौंह बनाइ बनाइ डिठौनहिं।
डालि हमेलनि हार निहारत बारत ज्यौं चुचकारत छौंनहिं*॥१०॥

बंसी बजावत आनि कढ़ो सो गली में अली कछू टोना सों डारैं।
हेरि चितै तिरछी करि दृष्टि चलो गयो मोहन मूठि सी मारैं॥
ताही घरी सों परी धरी सेज पै प्यारी न बोलति प्रानहूं वारैं।
राधिका जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पीहैं हलाहल नन्द के द्वारैं॥११॥

एक तें एक लों काननि मै रहै ढीठ सखा सब लीने कन्हाई।
आवतही हौं कहौं लों कहों कोउ कैसें सहै अति की अधिकाई॥
खायो दही मेरो भाजन* फोर्यो न छोड़त चीर दिवावै दुहाई।
रसखानि तिहारी सौं* एरी जसोमति भागे मरू करि छूटन पाई॥१२॥

लोक की लाज तजी तबहीं जब देख्यो सखी ब्रजचन्द सलोनो।
खंजन मीन सरोजन की छवि गंजन नैन लला दिनहोनो॥
रसखानि निहारि सकें जु सम्हारि कै को तिय है वह रूप सुठोनो।
भौंह कमान सों (जोहन) कों सब बेधत प्राननि नन्द को छौनो॥१३॥

पाठांतर—१. रस। २. सबहीं। ३. खरी खरी।

***शब्दार्थ**—ठगौरी=माया-जाल, जादू। भटू=सखी। रई=अनुरक्त हो गई। छौंनहिं=पुत्र को। भाजन=बर्तन। सौं=सौगन्ध।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेजं मनोहर मूरि लखै तबहीं सबहीं पतहीं* तज दीनी।
प्रान पखेरू परे तलफैं वह रूप के जाल में आस अधीनी॥
आँख सौं आँख लड़ी जबहीं तब सें ये रहैं अँसुवा रँगभीनी।
या रसखानि अधीन भई सब गोपाल की तजि लाज नवीनी॥१४॥

सुन री पिय मोहन की बतियाँ अति ढीठ भयो नहिं कानि करै।
निसि वासर औसर* देत नहीं छिनहीं छिन द्वारेही आनि अरै॥
निकसौ मति नागरि डोंड़ी बजी ब्रजमण्डल मैं इह कौन भरै।
अब रूप की रौर परी रसखानि रहै तिय कोऊ न माँझ घरै॥१५॥

बागन काहे को जाओ पिया घर बैठेही बाग लगाय दिखाऊँ।
एड़ी अनार सी मौर रही बहियाँ दोउ चंपे सी डार नवाऊँ॥
छातिन में रस के निबुआ अरु घूँघट खोलि कै दाख चखाऊँ।
टाँगन के रसके चसके रति फूलनि की रसखानि लुटाऊँ॥१६॥

अंगनि अंग मिलाय दोऊ रसखानि रहे लपटे तरु छाँहीं।
संग निसंग अनंग* को रंग सुरंग सनी पिय दै गल बाँहीं॥
बैन ज्यों मैन सु ऐन* सनेह कों लूटि रहे रति अन्तर जाहीं।
नीबी* गहै कुच कंचन कुंभ कहै बनिता पिय नाहीं जू ना नाहीं॥१७॥

धूर भरे अति शोभित स्याम जू तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरैं अँगना पग पैंजनी बाजती, पीरी कछोटी॥
वा छवि को रसखानि बिलोकत बारत काम—कला निज कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सों लै गयो माखन रोटी॥१८॥

---

*शब्दार्थ—पतहीं=मर्यादा को, प्रतिष्ठा को। औसर=अवसर। अनंग=कामदेव। ऐन=घर। नीबी=कमरबन्द।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयो हुतो नियरें रसखानि कहा कहूँ तू न गई वह ठैंया।
या ब्रज में सिगरी बनिता सब बारति प्राननि लेत बलैया ।।
कोऊ न काहू की कानि करै कछु चेटक सो जु कर्‌यो जदुरैया।
गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया ।।१९।।

बारहीं* गोरस बेंचि री आजु तूँ माइ कै मूड़ चढ़ै कत मौड़ी*।
आवत जात लौं होयगी साँझ भटू जमुना भतरौंड़* लों औड़ी ।।
ऐसे में भेंटतही रसखानि ह्वै हैं अँखियाँ विन काज[1] कनौड़ी*।
एरी बलाइ ल्यों जाइगी बाज अबै ब्रजराज सनेह की डौड़ी ।।२०।।

सोहत हैं चँदवा सिर मौर के जैसियै सुन्दर पाग कसी है।
तैसियै गोरज भाल विराजति जैसी हिये बनमाल लसी है ।।
रसखानि विलोकत बौरी*भई दृग मूंदि कै ग्वालि पुकारि हँसी है।
खोलि री घूँघट खोलौं कहा वह मूरति नैनन माँझ वसी है ।।२१।।

भौंह भरी बरुनी सुथरी अतिसै अधरानि रँगी रँग रातौ।
कुण्डल लोल कपोल महाछबि कुंजनि तें निकस्यो मुसिकातौ।
रसखानि लखै मग छूटि गयो डग भूलि गई तन की सुधि सातौ।
फूटि गयो दधि को सिर भाजन टूटिगो नैननि लाज को नातौ ।।२२।।

अँखियाँ अँखियाँ सों सकाय मिलाय हिलाय रिझाय हियो भरिबो[3]।
बतियाँ चितचोरन चेटक सी रस चारु चरित्रन ऊँचरिबो ।।
रसखानि के प्रान सुधा भरियो[2] अधरान पै त्यों अधरा धरिबो।
इतने सब मैन के मोहनी जंत्र पै मंत्र बसीकर सी करिबो ।।२३।।

पाठांतर—१. प्रेम। २. धरिबो। ३. हरिबो।

***शब्दार्थ**—बारहीं=इस पर। मौड़ी=लड़की,। भतरौंड़=मथुरा-वृन्दावन के बीच का एक स्थान। कनौड़ी=वशीभूत। बौरी=दीवानी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा दिन तें निरख्यो नन्दनन्दन कानि तजी घर बन्धन छूट्यौ ।
चारु बिलोकनि की निसि मार सम्हार गई मन मार ने लूट्यौ ।।
सागर को सरिता जिमि धावत रोकि रहे कुल को पुल टूट्यौ ।
मत्त भयो मन संग फिरै रसखानि सरूप सुधारस घूट्यौ ।।२४।।

कल कानन कुण्डल मोरपखा उर पैं बनमाल बिराजति है ।
मुरली कर मैं अधरा मुसकानि तरंग महाछबि छाजति है ।।
रसखानि लखै तन पीतपटा सत दामिनी की दुति* लाजति है ।
वह बाँसुरी की धुनि कान परें कुलकानि हियो तजि भाजति है ।।२५।।

बाँकी बिलोकनि रंग भरी रसखानि खरी मुसकानि सुहाई ।
बोलत बैन अमीनिधि चैन महारस ऐन सुने सुखदाई ।।
सजनी बन में पुर बीथिन* में पिय गोहन लागो फिरै मोरि माई ।
बाँसुरी टेर सुनाइ अली अपनाइ लई ब्रजराज कन्हाई ।।२६।।

ब्रह्मा मैं ढूंढ़्यो पुरानन गानन वेद रिचा सुनि चौगुने चायन ।
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितूं वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन ।।
टेरत हेरत हारि पर्‌यो रसखानि बतायो न लोग लुगायन ।
देखौ दुरो वह कुंजकुटीर मैं बैठो पलोटत राधिका पायन ।।२७।।

देखन कों सखी नैन भए न सने तन आवत गाइन पाछें ।
कान भए इन बातन के सुनिबे कों अमीनिधि बोलन आछें ।।
पै सजनी न सम्हारि परै वह बाँकी बिलोकन कोर कटाछें* ।
भूलि गयो न हियो मेरी आली जहाँ पिय खेलत काछिनी काछें ।।२८।।

---

*शब्दार्थ—दुति=द्युति, प्रकाश, चमक । बीथिन=गलियाँ । कटाछैं=कटाक्ष ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खंजन नैन फँसे पिंजरा छबि नाहि रहै थिर कैसहूँ माई।
छूटि गई कुलकानि* सखी रसखानि लखी मुसिकानि सुहाई॥
चित्र कढ़े से रहैं मेरे नैन न बैन कढ़ै मुख दीनी दुहाई।
कैसी करौं जिन जाव अली सब बोलि उठैं यह बावरी आई॥२६॥

उनहीं के सनेहन सानी रहैं उनहीं के जु नेह दिवानी रहैं।
उनहीं की सुनै न औ बैन त्यों सैन सों चैन अनेकन ठानी रहैं॥
उनहीं सँग डोलन में रसखानि सबै सुख सिंधु अघानी रहैं।
उनहीं बिन ज्यों जलहीन ह्वै मीन सी आँखि मेरी अँसुवानी रहैं॥३०॥

सेस गनेस महेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरन्तर गावैं।
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड अछेद अभेद सुबेद बतावैं॥
नारद से सुक व्यास रहैं पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं॥३१॥

शंकर से सुर जाहि भजैं चतुरानन ध्यान में धर्म बढ़ावैं।
नेक हिये में जो आवतही महाजड़ मूढ़ रसखान कहावैं॥
जा पर सुन्दर देवबधू नहिं वारत प्रान अबार लगावैं[1]।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं॥३२॥

दोउ कानन कुण्डल मोरपखा सिर सोहै दुकूल* नयो चटको।
मनिहार* गरे सुकुमार धरे नट भेस अरे पिय को टटको॥
सुभ काछनी बैजनी पैंजनी पामन आमन मै न लगै झटको।
वह सुन्दर को रसखानि अली जु गलीन मैं आइ अबै अँटको॥३३॥

पाठांतर—१. जा पर देव अदेव भू-अँगना वारत प्रानन प्रानन पावैं।

***शब्दार्थ**—कुलकानि=कुल की मर्यादा। दुकूल=रेशमी वस्त्र। मनिहार=मणियों का हार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंक बिलोकनि है दुखमोचन दीरघ लोचन रंग भरे हैं।
घूमत बारुनी पान किये जिमि झूमत आनन रंग ढरे हैं।।
गंडनि पै किलकै छबि कुण्डल नागरि नैन बिलोकि अरे हैं।
रसखानि हरैं ब्रजबालनि कों मन ईषत हाँसि के पानि परे हैं।।३४।।

अति लोक की लाज समूह मै घेरिकै राखि थकी भव संकट सों।
पल मैं कुलकानि की मेड़नकी नहि रोकी रुकी पल के पट सों।।
रसखानि सों केतो उचाटि रही उचटी न सँकोच की औचट सों।
अलि कोटि कियो हटकी न रही अँटकी अँखिया लटकी लट सों।।३५।।

आजु[1] सखी नँदनन्दन रो तकि ठाढ़ो है कुंजनि की परछाहीं।
नैन बिसाल की जोहन को सर बेधि गयो हियरा जिय माहीं।।
घाइल घूमि खुमार गिरी रसखानि सँम्हारत अंगन नाहीं।
तापर वा मुसिकानि की डौंड़ी बजी ब्रज मैं अबला कित जाहीं।।३६।।

जा दिन तें मुसिकानि चुभो उर ता दिन तें जु भई बनवारी।
कुण्डल लोल कपोल महा छवि कुंजन तें निकस्यो सुखकारी।।
हौ सखी आवतही बगरै* पग पैंड़ तजी रिझई बनवारी।
रसखानि परी मुसकानि के पानिन*कौन गहै कुलकानि बिचारी।।३७।।

मैन मनोहर बैन बजै सु सजे तन सोहत पीत पटा है।
यों दमकै चमकै झमकै दुति दामिनी की मनो स्याम छटा है।।
ए सजनी ब्रजराजकुमार अटा चढ़ि फेरत लाल बटा है।
रसखानि महामधुरी मुख की मुसकानि करै कुलकानि कटा है।।३८।।

पाठांतर—१. आज।
***शब्दार्थ—बगरै=मकान, घर। पानिन=हाथों।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर स्याम सिरोमनि मोहन जोहन मैं चित चोरत है।
बाँके बिलोकनि की अवलोकनि नोकनि कै दृग जोरत है।।
रसखानि महावर रूप सलोने को मारग तें मन मोरत है।
ग्रहकाज समाज सबै कुल लाज लला ब्रजराज को तोरत है ।।३९।।

नैननि बंकनि साल के बाननि झेलि सकै अस कौन नबेली।
बेधत है हिय तीछन कोर सुमारि गिरी तिय कोटिक हेली।।
छोड़ै नहीं छिनहूँ रसखानि सु लागी फिरै द्रुम सों जनु वेली।
रौर* परी छवि की ब्रजमण्डल कुण्डल गंडनि कुन्तल केरी ।।४०।।

कौन को लाल सलोनो सखी वह जाकी बड़ी अँखियाँ अनियारी।
जोहन बँक बिसाल के बाननि बेधत हैं घट तीछन भारी।।
रसखानि सम्हारि परै नहिं चोट सु कोटि उपाय करौं सुखकारी।
भाल लिख्यो बिधि हेत को बंधन खोलि सकै अस को हितकारी ।।४१।।

दोहा

मोहनछबि रसखानि लखि, अब दृग अपने नाहिं।
अँचे आवत धनुष से, छूटे सर से जाहिं ।।४२।।
मो मन मानिक लै गयो, चितै चोर नँदनंद।
अब बेमन मैं का करूँ, परी फेर के फंद ।।४३।।

सोरठा

देख्यो रूप अपार, मोहन सुन्दर स्याम को।
वह ब्रजराजकुमार, हिय जिय नैननि मैं बस्यो ।।४४।।

*शब्दार्थ—रौर= कुहराम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोहा

मन लीनो प्यारे चितै, पै छटाँक नहिं देत।
यहै कहा पाटी पढ़ी, दल को पीछो लेत ।।४५।।
ए सजनी लोनो लला, लह्यो नन्द के गेह।
चितयो मृदु मुसिकाइ कै, हरी सबै सुधि गेह ।।४६।।

सोरठा

एरी चतुर सुजान, भयो अजानहि जान कै।
तजि दीनी पहिचान, जान आपनी जान कों ।।४७।।

दोहा

जोहन* नन्दकुमार कों, गई नन्द के गेह।
मोहि देखि मुसिकाइ कै, बरस्यो मेह सनेह ।।४८।।
स्याम सघन घन घेरि कै, रस बरस्यौ रसखानि।
भई दिबानी पान करि, प्रेम मद्य मनमानि ।।४९।।

सोरठा

अरी अनोखी बाम, तूं आई गौने नई।
बाहर धरसि* न पाम,* है छलिया तुव ताक मैं ।।५०।।

सवैया

नैन लख्यो जब कुंजन तें वन तें निकस्यो अँटक्यो मटक्यो री।
सोहत कैसो हरा टटकौ* अरु जैसो किरीट लग्यो लटक्यो री।।
रसखानि रहै अंटक्यो हटक्यो ब्रजलोग फिरैं सटक्यो भटक्यो री।
रूप सबै हरि वा नट को हियरे फटक्यो झटक्यो अंटक्यो री ।।५१।।

*शब्दार्थ—जोहन=देखन। धरसि=रखना। पाम=पैर। टटकौ=ताज़ा, नया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त

दूध दुह्यो सीरो पर्‌यो तातो न जमायो कर्‌यो,
जामन दयो सो धर्‌यो धर्‌योई खटाइगो।
आन हाथ आन पाइ सबही के तबहीं तें,
जबहीं तें रसखानि तानन सुनाइगो॥
ज्यौंहीं नर त्यौंहीं नारी तैसी ये तरुन बारी,
कहिए कहा री सब ब्रज बिललाइगो।
जानिए न आली यह छोहरा जसोमति को,
बाँसुरी बजाइगो कि विष बगराइगो॥५२॥

सवैया

बजी है बजी रसखानि बजी सुनिकै अब गोपकुमारि न जीहै।
न जीहै कोऊ जो कदाचित कामिनी कानि मै वाकी जु तान कू पी है॥
कु पीहै बिदेस सँदेस न पावति मेरी व देह को मैन सजी है।
सजी है तो मेरो कहा बस है सु तौ बैरिनि बाँसुरी फेरि बजी है॥५३॥

कवित्त

अधर लगाय रस प्याय बाँसुरी बजाय,
मेरा नाम गाय हाथ जादू कियो मन में।
नटवर नवल सुघर नँदनन्दन ने,
करिकै अचेत चेत हरि कै जतन में॥
झटपट उलट पुलट हट परिधान,
जान लागों लालन पै सबै बाम बन में।
रस रास सरस रंगीलो रसखानि आनि,
जानि जोर जुगुति बिलास किये जन में॥५४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

कानन दै अँगुरी रहिबो जबहीं मुरली धुनि मन्द बजैहै।
मोहनी तानन सों रसखानि अटा चढ़ि गोधन गैहै तो गैहै।।
टेरि कहौं सिगरे ब्रजलोगनि काल्हि कोऊ कितनो समुझैहै।
माइ री वा मुख की मुसकानि सम्हारि न जैहै न जै न जैहै।।५५।।

जा दिन तें वह नन्द को छोहरो या बन धेंनु चराइ गयो है।
मीठिहीताननि गोधन गावत बैन* बजाइ रिझाइ गयो है।।
वा दिन सों कछु टोना सों कै रसखानि हिये में समाइ गयो है।
कोउ न काहु को कानि करै सिगरो ब्रज बीर बिकाइ गयो है।।५६।।

रंग भर्यो मुसकात लला निकस्यो कल कुंजनि तें सुखदाई।
मैं तबहीं निकसी घरतें तकि नैन बिसाल की चोट चलाई।।
रसखानि सो घूमि गिरी धरती हरिनी जिमि बान लगे गिरि जाई।
टूटि गयो घर को सब बंधन छूटिगो आरज* लाज बड़ाई।।५७।।

हेरत* बारहीं बार उतै तुव बावरी बाल कहाधौं करैगी।
जौं कबहूँ रसखानि लखै फिर क्यों हू न बीर री धीर धरैगी।।
मानि है काहू की कानि नहीं जब रूप ठगी हरि रंग ढरैगी।
याते कहूँ सिख मानि भटू यह हेरनि तेरेही पैंड़ परैगी।।५८।।

कवित्त

एरी आजु काल्हि सब लोक लाज त्यागि दोऊ
सीखे हैं सबै बिधि सनेह सरसाइबो।
यह रसखान दिना द्वै में बात फैलि जैहै
कहाँ लौं सयानी चन्दा हाथन छिपाइबो।।

---

*शब्दार्थ—बैन = वेणु, बाँसुरी। आरज = (आर्य) श्रेष्ठ। हेरत = खोजता, तलाशता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजु हौं निहार्‌यो बीर कलिंदी तीर
दोउन को दोउन सों मुरि मुसकाइबो।
दोऊ परें पैयाँ दोऊ लेत हैं बलैयाँ इन्हें
भूलि गईं गैयाँ उन्हें गागर उठाइबो ॥५६॥

सवैया

आजु भटू इक गोपबधू भई बावरी नेकु न अंग सम्हारै[1]।
मात अघात न देवनि पूजत सासु सयानी सयानी पुकारै॥
यों रसखानि घिर्‌यो सिगरो ब्रज कौन को कौन उपाय बिचारै।
कोउ न कान्हर के कर तें वह बैरिनि बाँसुरिया गहि जारै॥६०॥

मकराकृत कुंडल गुंज की माल वे लाल लसैं पग पाँवरिया।
बछरानि चरावन के मिस भावतो दै गयो भावती भाँवरिया॥
रसखानि बिलोकतही सिगरी भईं बावरिया ब्रज डाँवरिया।
सजनी इहिं गोकुल मैं विष सों बगरायो है नन्द के साँवरिया॥६१॥

आजु भटू इक गोपकुमार ने रास रच्यो इक गोप के द्वारै।
सुन्दर बानिक सों रसखानि बन्यो वह छोहरा भाग हमारै॥
ए बिधना जो हमैं हँसतीं अब नेकु कहूँ उनके पग धारै।
ताहि बदौं फिरि आवै घरै बिनहीं तन औ मन जोवन वारै॥६२॥

वा मुसकान पै प्रान दियो जिय जान दियो वह तान पै प्यारी।
मान दियो मन मानिक के सँग वा मुख मंजु पै जोबनवारी॥

पाठांतर—१. एक समै इक गोप बधू भई बावरी नेकु न अंग सम्हारै।
माय सुधाय कै टोना सो ढूंढ़ति सासु सयानी सयानो पुकारै॥
यों रसखानि कहैं सिगरो ब्रज आन के आन उपाय बिचारै।
कोऊ न मोहन के कर तें यह बैरिनि बाँसुरिया गहि डारै॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा तन को रसखानि पै री तन ताहि दियो नहि आन बिचारी ।
सो मुंह मोड़ि करी अब का हहा लाल लै आज समाज मैं ख्वारी*।।६३।।

कवित्त

गोरज बिराजै भाल लहलही बनमाल
आगे गैया पाछे ग्वाल गावै मृदु तान री ।
तैसी धुनि बाँसुरी मधुर मधुर तैसी
बंक चितवनि मंद मंद मुसकानि री ।।
कदम विटप के निकट तटनी* के आव
अटा चढ़ि चाहि पीतपट फहरानि री ।
रस बरसावै तन तपन बुझावै नैन
प्राननि रिझावै वह आवै रसखानि री ।।६४।।

सवैया

वह गोधन गावत गोधन मैं जबतें इहि मारग ह्वै निकस्यौ ।
तब तें कुलकानि कितीक करौ यह पापी हियो हुलस्यो हुलस्यो* ।।
अब तौ जु भई सु भई नहि होत है लोग अजान हंस्यो सु हँस्यो ।
कोउ पीर न जानत जानत सो तिनके हिय मैं रसखानि बस्यौ ।।६५।।

आजुरी नंदलला निकस्यो तुलसी बन तें बन कें मुसकातो ।
देखे बनै न बनै कहते अब सो सुख जो मुख मैं न समातो ।।
हौं रसखानि बिलोकिवे को कुलकानि कों काज कियो हिय हातो ।
आइ गई अलबेली अचानक ए भटू लाज कों काज कहातो ।।६६।।

---

*शब्दार्थ—ख्वारी = दुर्दशा । तटनी = नदी (विशेष रूप से यमुना) । हुलस्यो = उल्लसित, प्रफुल्लित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ए सजनी वह नंद को साँवरो या बन धेनु चराइ गयो है।
मोहिनी तानंनि गोधन गाइ कै बेनु बजाइ रिझाइ गयो है ।।
ताही घरी कछु टोना सो कै रसखानि हिए में समाइ गयो है।
कोऊ न काहू की बात सुनै सिगरो ब्रज बीर बिकाइ गयो है ।।६७।।

मेरी सुनो मति आइ अली उहाँ जौनी गली* हरि गावत है।
हरि लैहैं बिलोकत प्रानन कों पुनि गाढ़ परैं घर आवत है ।।
उन तान की तान तनी ब्रज मैं रसखान सयान सिखावत है।
तकि पाय धरो रपटाय नहीं वह चारो सो डारि फंदावत है ।।६८।।

समझी न कछू अजहूँ हरि सों ब्रज नैन नचाइ नचाइ हँसै।
नित सास की सीरी* उसासनि सों दिनहीं दिन माइ की कांति नसै ।।
चहुँ ओर बबा की सौं सोर सुनै मन मेरेऊ आवति री सकसै*।
पै कहा करौं वा रसखानि बिलोकि हियो हुलसै हुलसै हुलसै ।।६९।।

बाँकी कटाछ चितैबो सिख्यो बहुधा बरज्यो हित कै हितकारी।
तू अपने ढिग की रसखानि सिखावनि दै दिनहूँ पचि हारी ।।
कौन की सीख सिखी सजनी अजहूँ तजि दै बलि जाऊँ तिहारी।
नंदन नंद के फंद कहूँ परि जैहै अनोखी निहार निहारी ।।७०।।

पूरब पुन्यनि तें चितई जिन ये अँखियाँ मुसकानि भरी जू।
कोऊ रहीं पुतरी सी खरी कोउ घाट डरी कोउ बाट परी जू ।।
जे अपने घरहीं रसखानि कहै अरु हौंसनि* जाति मरी जू।
लाल जे बाल बिहाल करी ते बिहाल करी न निहाल करी जू ।।७१।।

*शब्दार्थ--जौनी गली=जिस गली में। सीरी=ठण्डी। सकसै=उलझना। हौंसनि=लालसा, उमंग, हवस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैरिन तो बरजी न रहै अबहीं घर बाहर बैर बढ़ैगो।
टोना सो नंद ढुटौना पढ़ै सजनी तोहि देखि विशेष बढ़ैगो ।।
सुनिहै सखि गोकुल गाँव सबै रसखानि तबै इह लोक रढ़ैगो।
बैस चढ़े घरही रहि बैठि अटानि चढ़ै बदनाम चढ़ैगो ।।७२।।

कवित्त

अबहीं गई खिरक गाइ के दुहाइबे कों
बावरी ह्वै आई डारि दोहनी यौं पानिकी।
कोऊ कहै छरी कोऊ भौन परी डरी कोऊ
कोऊ कहै मरी गति हरी अँखियान की।
सास व्रत ठानै नंद बोलत सयाने धाइ
दौरि दौरि जानै मानो खोरि देवतानि की।
सखी सब हाँसैं मुरझानि पहिचानि कहूँ,
देखी मुसकानि वा अहीर रसखानि की ।।७३।।

सवैया

मोहन को मुरली सुनिकै वह बौरी ह्वै आनि अटा चढ़ि झाँकी।
गोप बड़ेन की डोठि बचाइ कै दीठि* सों दीठि मिली दुहु घाँकी ।।
देखत मोल भयो अँखियान कों को करै लाज कुटुंब पिता की।
कैसे छुटाई छुटैं अँटको रसखानि दुहूँ की बिलोकनि बाँकी ।।७४।।

कवित्त

ब्याही अनब्याही ब्रजमाहीं सब चाही तासों
दूनी सकुचाई दीठि परै न जुन्हैया की।
नेकु मुसकानि रसखानि की बिलोकत ही
चेरी होत एक बार कुंजनि दिखैया की।

---

*शब्दार्थ—दीठि = दृष्टि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरो कह्यो मानि अंत मेरो गुन मानि हेरी
प्रात खात जात ना सकात सौंह भैया की।
माइ की अँटक जौलौं सासु की हटक तौलौं
देखी ना लटक मेरे दूलह कन्हैया की ॥७५॥

सवैया

बेनु बजावत गावन गावत ग्वालन के सँग गोमधि आयो।
बाँसुरी मैं उन मेरोई नाम सुग्वालन के मिस टेरि सुनायो॥
ए सजनी सुनि सास के त्रासनि नंद के पास उसासन आयो।
कैसी करौं रसखानि नहीं हित चैन नहीं चित चोर चुरायो ॥७६॥

आली पगे जु रँगे रँग संबल सोहैं न[1] आवत लालची नैना।
धावत हैं उतही जित मोहन रोके रुकैं नहिं घूंघट ऐना॥
कानन कौं कल नाहिं परै सखी प्रेम सों भींजे सुनै बिन बैना।
भई मधु की मखियाँ रसखानि[2] जू नेह को बंधन क्यों हूँ छुटै ना ॥७७॥

मो मन मोहन कों मिलि कै सबहीं मुसकानि दिखाय दई।
वह मोहनी मूरति रूपमयी सबही चितई तब हौं चितई॥
उन तौ अपने अपने घर की रसखानि भली बिधि राह लई।
कछु मोहि का पाप पर्‌यो पल मैं पग पावत पौरि पहार भई[3] ॥७८॥

पाठांतर—१. रँगे जे रँग सांवरे मो पै न। २. रसखानि भई मधु की मखियाँ।
३. मो मन मोहन सों मिलिकै मधुरी मुसकान दिखाइ दई।
मोहनी मूरति मैंनमई सबहीं चितई हम हू चितई॥
उन तो अपने अपने घर की रसखान भली विधि गैल लई।
कछु मोहि को पाप पर्‌यो पल में पग पावक पौरि पहार भई॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरो सुभाव चितैबे कों माइ रो लाल निहारि कै बंसी बजाई।
वा दिन तें मोहि लागी ठगौरी सी लोग कहैं कोई बावरी आई ॥
यों रसखानि घिर्‌यो सिगरो ब्रज जानत वे कि मेरो जियराई।
जो कोउ चाहै भलौ अपनौ तौ सनेह न काहू सों कीजियो माई ॥७९॥

तेरी गलीन में जा दिन तें निकसे मनमोहन गोधन गावत।
ये ब्रज लोग सो कौन सी बात चलाइ कै जो नहि नैन चलावत ॥
वे रसखानि जो रीझिहैं नेकु तौ रीझि कै क्यों नवनारि रिझावत।
बावरी जो पै कलंक लग्यो तौ निसंक ह्वै क्यों नहीं अंक लगावत ॥८०॥

औचक दृष्टि परे कहूँ कान्ह जू तासौं कहै ननदी अनुरागी।
सो सुनि सास रही मुख मोरि जिठानी फिरै जिय में रिस पागी ॥
नीके निहारि कै देखे न आँखिन हौं कबहूँ भरि नैन न जागी।
मो पछितावो यहै जु सखी कि कलंक लग्यो पर अंक न लागी ॥८१॥

मोरपखा मुरली बनमाल लख्यौ[1] हिय मैं[2] हियरा उमह्यौरी।
ता दिन तें इन बैरिन कों कौन न बोल कुबोल सह्यौरी ॥
तौ रसखानि सनेह लग्यौ कोउ एक कह्यो कोउ[3] लाख कह्यौरी।
और तो रंग रह्यौ न रह्यौ इक रंग[4] रँगी सोई रंग रह्यौरी ॥८२॥

मोर के चंदन मौर बन्यौ दिन दूलह है अली नन्द को नंदन।
श्रीबृषभानुसुता दुलही दिन जोरी बनी बिधना सुखकंदन ॥
रसखानि न आवत मो पै कह्यौ कछु दोऊ फँसे छवि प्रेम के फंदन।
जाहि बिलोकै सबै सुख पावत ये ब्रजजीवन हैं दुखदंद न ॥८३॥

पाठांतर – १. लखे। २. को। ३. किन। ४. रंग रँगीले सों रंग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज अचानक राधिका रूपनिधानि सों भेट भई वन माहीं।
देखत दृष्टि परे रसखानि मिले भरि अंक दिए गलबाहीं॥
प्रेमपगी बतियाँ दुहुँघाँ की दुहूँ कों लगी अतिही चितचाहीं।
मोहनी मन्त्र बसीकर जन्त्र हहा पिय की तिय की नहिं नाहीं॥८४॥

कोई है रास मैं नैसुक नाचि कै नाच नचाए किए सबको जिन।
सोई है री रसखानि इहै मनुहारिहूँ सूधें चितौत न हो छिन॥
तो मैं धौं कौन मनोहर भाव बिलोकि भयो बस हाहा करी तिन।
औसर ऐसो मिलै न मिलै फिर लंगर मोड़ो कनौड़ो करै किन॥८५॥

आज भटू मुरली बरु के तर¹ नन्द के साँवरे रास रच्यो री।
नैननि सैननि* बैननि मैं नहि कोऊ मनोहर भाव बच्यो री॥
जद्यपि राखन कौं कुलकानि सबै ब्रजबालन प्रान तच्यो री।
तद्यपि वा रसखान के हाथ बिकान को अन्त लच्यो पै लच्यो री॥८६॥

छीर जो चाहत चीर गहैं ए जू लेहु न केतक छीर अचैहौ।
चाखन के मिस माखन माँगत खाहु न माखन केतिक खैहौ॥
जानत हौं जिय की रसखानि सु काहे को एतिक बात बढ़ैहौ।
गोरस के मिस* जो रस चाहत सो रस कान्ह जू नेकु न पैहौ॥८७॥

मोहन के मन भाइ गयो इक भाइ सो ग्वालिन गोधन गायो।
तातें लग्यो चट चौहट सौं हरवाइ दै गात सों गात छुवायो॥
रसखानि लही इक चातुरता चुपचाप रही जब लौं घर आयो।
नैन नचाइ चितै मुसिकाइ सु ओट ह्वै जाइ अँगूठा दिखायो॥८८॥

पाठांतर—१. बट के तट।
***शब्दार्थ**—सैननि=भौंह से संकेत करना। मिस=लिए, बहाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागर छैलहि गोकुल मैं मग रोकत संग सखा ढिग तैहैं।
जाहि न ताहि दिखावत आँखि सु कौन गई अब तोसों करैहैं ।।
हाँसी मैं हार हर्यो रसखानि जू जो कहुँ नैकु तगा टुटि जैहैं।
एकही मोती के मोल लला सिगरे ब्रज हाटहि हाट बिकैहैं ।।८९।।

दानी भए नए माँगत दान सुनै जु पै कंस तौ बाँधि के जैहो।
रोकत हौ बन में रसखानि पसारत हाथ घनौ दुख पैहौ ।।
टूटै छरा बछरा दिक गोधन जो धन है सु सबै धन दैहो।
जैहै अभूषन काहू सखी को तो मोल छला के लला न बिकैहो ।।९०।।

आज महूँ दधि बेचन जात ही मोहन रोकि लियो मग आयो।
माँगत दान में आन लियो सु कियो निलजी रसजोवन खायो ।।
काह कहूँ सिगरी री बिथा* रसखानि लियो हँसि के मुसिकायो।
पाले परी मैं अकेली लली लला लाज लियो सुकियो मन भायो ।।९१।।

बिहरैं पिय प्यारी सनेह सने छहरैं चुनरी के झना झहरैं।
सिहरैं नवजोबन रंग अनंग सुभंग अपांगनि की गहरैं ।।
बहरैं रसखानि नदी रस की घहरैं बनिता कुलहू भहरैं।
कहरैं बिरहीजन आतप सों लहरैं लली लाल लिए पहरैं ।।९२।।

वह सोई हुती परजंक लली लला लीनो सु आय भजा भरिकै।
अकुलाय के चौंक उठी सु डरी निकरी चहै अंकनि तें फरिकै ।।
झटका झटकी में फटो पटुका दरकी अँगिया मुकता झरिकै।
मुख बोल कढ़ें रिस से रसखानि हटो जू लला निबिया धरिकै ।।९३।।

*शब्दार्थ—बिथा = व्यथा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाज के लेप चढ़ाइ कै अंग पची सब सीख को मन्त्र सुनाइकै ।
गाड़रू ह्वै ब्रज लोग थक्यौ करि औषद बेसक सौंह दिवाइ कै ।।
ऊधौ सो को रसखानि कहै जिन चित्त धरौ तुम एते उपाइ कै ।
कारे बिसारे* कों चाहै उतार्यौ अरे बिष बावरे राख लगाइ कै ।। ६४।।

रसखानि यहै सुनि कै गुनि कै हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयो है ।
सुतो जानत हैं न कछू हम ह्याँ उन वा पढ़ि मन्त्र कहा धौं दयो है ।।
सुनो साँची कहैं जिय मैं निज जानि कै जानत हौ जस कैसो लयो है ।
सब लोग लुगाई कहैं ब्रज माँहि अरे हरि चेरी को चेरो भयो है ।।६५।।

होती जु पै कुबरी ह्याँ सखी भरि लातन मूका बकोटती केती ।
लेती निकाल हिए की सबै नक छेदि कै कौड़ी पिराइ कै देती ।।
ऐती नचाइ कै नाच वा राँड़ को लाल रिझावन की फल पेती ।
सेती सदाँ रसखानि लिए कुबरी के करेजनि सूल सी भेंती ।।६६।।

जानै कहा हम मूढ़ सबै समुझी न तबै जबहीं बनि आई ।
सोचत हैं मन ही मन मैं अब कीजै कहा बतियाँ जगवाई ।।
नीचो भयो ब्रज को सब सीस मलीन भई रसखानि दुहाई ।
चेरी को चेटक देखहु री हरि चेरो कियो धौं कहा पढ़ि माई ।।६७।।

काहूँसों माई कहा कहिए[1] सहिए जु सोई रसखानि सहावैं ।
नेम कहा जब प्रेम कियो तब नाचिए सोई जो नाच नचावैं ।।
चाहत हैं हम और कहा सखि क्योंहूँ कहूँ पिय देखन पावैं ।
चेरिय सों जु गुपाल रच्यो तौ चलोरी सबै मिलि चेरी कहावैं ।।६८।।

पाठांतर— १. करिए ।
***शब्दार्थ**—कारे बिसारे=विष वाला काला सर्प ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त

ग्वालन सँग जैबो वन ऐबौ सुगाइन सँग
हेरि तान गैबौ हाहा नैन फरकत हैं।
ह्याँ के गजमोती माल वारौं गुंजमालन पै
कुंज सुधि आए हाय प्रान धरकत हैं।
गोबर को गारो सुतौ मोहि लगै प्यारौ
कहा भयो महल सोने को जटत मरकन हैं।
मन्दिर तें ऊँचे यह मन्दिर हैं द्वारिका के
ब्रज के खिरक मेरे हिए खरकत हैं ।।९९।।

सवैया

रसखानि सुन्यो है वियोग के ताप मलीन महा दुति देह तिया की।
चन्द्रमुखी तन गो मुरझाइ लगी लपटैं विस स्वाँस हिया की।।
ऐते मैं आवत कन्हाई के हुलसे सरके तरकी अँगियाँ की।
यों जग जोति उठी तन की उसकाइ दई मनौ वाती दिया की ।।१००।।

प्रान वही जु रहैं रिझि वापर रूप वही लिहिं वाहि रिझायो।
सीस वही जिन वे परसे पद अंक वही जिन वा परसायो।।
दूध वही जु दुहायो री वाही दही सु सही जो वही ढरकायो।
और कहाँ लौं कहौं रसखानि री भाव वही जु वही मनभायो ।।१०१।।

कंचन मन्दिर ऊँचे बनाइकै मानिक लाइ सदा झलकैयत।
प्रातहीं तें सगरी नगरी गजमोतिन ही की तुलानि तुलैयत।।
जद्यपि दीन प्रजान प्रजा तिनकी प्रभुता मघवा* ललचैयत।
ऐसे भए तो कहा रसखानि जो साँवरे ग्वाल सों नेह न लैयत ।।१०२।।

---

*शब्दार्थ—मघवा = कामदेव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त

कहा रसखानि सुखसंपति सुमार कहा,
कहा तन जोगी ह्वै लगाए अंग छार को।
कहा साधे पंचानल कहा सोए बीच नल,
कहा जीत लाए राज सिंधु आर पार को।
जप बार बार तप संजम बयार व्रत,
तीरथ हजार अरे बूझत लवार को।
कीन्हीं नहीं प्यार सेयो दरबार चित,
चाह्यो न निहारो जो पै नन्द के कुमार को ॥१०३॥

सवैया

संपति सों सकुचाइ कुबेरहिं रूप सों दीनी चिनौती अनंगहिं।
भोग कै कै ललचाइ पुरंदर जोग कै गंग लई धरि मंगहिं॥
ऐसे भए तो कहा रसखानि रसै रसना जो जु मुक्ति तरंगहिं।
दै चित ताके न रंग रच्यो जु रह्यो रचि राधिका रानी के रंगहिं॥१०४॥

कवित्त

कंचन के मन्दिरनि दीठ ठहरात नाहिं
सदा दीपमाल लाल मानिक उजारे सौं।
और प्रभुताई अब कहाँ लौं बखानौं प्रति
हारन की भीर भूप टरत न द्वारे सौं।
गंगाजी में न्हाइ मुक्ताहलहू लुटाइ वेद
बीस बार गाइ ध्यान कीजत सवारे सौं।
ऐसे ही भए तो नर कहा रसखानि जो पै
चित दै न कीनी प्रीत पीतपटवारे सौं॥१०५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

द्रौपदी औ गनिका गज गीध अजामिल सों कियो सो न निहारो ।
गौतम गेहिनी कैसी तरी प्रहलाद को कैसें हर्यो दुख भारो ।।
काहे कों सोच करै रसखानि कहा करिहैं रविनन्द बिचारो ।
ता खन जा खन राखिए माखन चाखनहारो सो राखनहारो ।।१०६।।

देस बिदेस के देखे नरेसन रीझि की कोऊ न बूझ करैगो ।
तातें तिन्है तजि जान गिर्यो गुन सौ गुन औगुन गाँठि परैगो ।।
बाँसुरीवारो बड़ो रिझवार* है स्याम जो नैकु सुढार ढरैगो* ।
लाड़लो छैल वही तौ अहीर को पीर हमारे हिए की हरैगो ।।१०७।।

कवित्त

अन्त तें न आयो याही गाँवरे को जायो,
माई बावरे जिवायो प्याइ दूध बारे बारे को ।
सोई रसखानि पहिचानि कानि छाड़ि चाहै,
लोचन नचावत नचैया द्वारे द्वारे को ।
भैया की रौं सोच कछू मटकी उतारे को न,
गोरस के ढारे को न चीर चीर डारे को ।
यहै दुख भारी गहै डगर हमारी माझ,
नगर हमारे ग्वाल बगर हमारे को ।।१०८।।

सवैया

दूर तें आइ दुरेहौं दिखाई अटा चढ़ जाइ कह्यौ तहाँ बारौ ।
चित्त कहूँ चितवै कितहूँ चित और सों चाहि करै चखवारौ ।।
रसखानि कहै यह वीच अचानक जाइ सिढ़ी चढ़ि सास पुकारौ ।
सूखि गई सुकवार हियो हनि सैन भटू कह्यौ स्याम सिधारौ ।।१०९।।

***शब्दार्थ**—रिझवार=शीघ्र आकर्षित होने वाला, प्रेमी। सुढार ढरैगो=प्रीति करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंस के क्रोध[1] की फैल गई जबहीं ब्रजमण्डल बीच पुकार सी।
आइ गए[2] तबहीं कछनी कसिकै नटनागर नन्दकुमार सी॥
द्वै रद को रद ऐंचि[3] लियो रसखानि इहै मन आइ बिचार सी[4]।
लागी कुठौर लई लखि[5] कलंक तमाल तें कीरति डार सी॥११०॥

कवित्त

आपनो सो ढोंटा* हम सबहीं को जानत हैं,
दोऊ प्रानी सबही के काज नित धावहीं।
ते तौ रसखानि अब दूर तें तमासो देखैं,
तरनितनूजा* के निकट नहिं आवहीं।
आन दिन बात अनहितुन सों कहौं कहा,
हितू जेऊ आए ते ये लोचन दुरावहीं।
कहा कहौं आली खाली देत सब ठाली पर,
मेरे बनमाली* कौं न काली ते छुड़ावहीं॥१११॥

सवैया

लोग कहैं ब्रज के रसखानि अनंदित नन्द जसोमति जू पर।
छोहरा आजु नयो जनम्यो तुमसो कोऊ भागभर्यो नहिं भू पर॥
वारि कै दाम सवाँर करौ अपने अपचाल कुचाल ललू पर।
नाचत रावरो लालगुपालसो काल सो व्याल-कपाल के ऊपर॥११२॥
सार की सारी सो भारी लगै धरिवै कहँ सीस बघंबर पैया।
हाँसी सो दासी सिखाइ लई हैं वेई जु वेई रसखानि मन्हैया॥
जोग गयो कुबजा की कलानि मैं री कब ऐहैं जसोमति मैया।
हा हा न ऊधौ कुढ़ावो हमैं अबहीं कहि दै ब्रज बाजै बधैया॥११३॥

पाठांतर—१. कोप। २. आय गयो। ३. खेंचि। ४. तवै मन आयो विचार हैं।
५. खेंचि। (सभी पंक्तियों का अन्तिम अक्षर 'हैं' भी मिलता है।)

***शब्दार्थ**—ढोंटा=पुत्र। तरनितनूजा=यमुना। बनमाली=कृष्ण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को रिझवारिन कों रसखानि कहै मुकतानि सों माँग भरौंगी।
कोऊ कहै गहनो अँग अँग दुकूल सुगन्ध भर्‌यों पहरौंगी।
तू न कहै यों कहैं तौ कहौ हूँ कहूँ न कहूँ तेरे पाँय परौंगी।
देखहु याहि सुफूल की माल जसोमति लाल निहाल करौंगी ॥११४॥

देखिहौं आँखिन सों पिय को अरु कानन सों उन बैन कों प्यारी।
बाँके अनंगनि रंगनि की सुरभी न सुगंधनि नाक में डारी ॥
त्यों रसखानि हिए में धरौ वहि साँवरी मूरति मैं न उजारी।
गाँव भरी कोउ नाव धरौ पुनि साँवरी हौं बनिहौं सुकुमारी ॥११५॥

काह कहुँ रतियाँ की कथा बतियाँ कहि आवत है न कछू री।
आइ गोपाल लियो भरि अंक कियो मन भायो पियो रस कूँरी ॥
ताही दिना सों गड़ी अँखियाँ रसखानि मेरे अंग में पूरी।
पैन दिखाई परै अब बावरो* दै के वियोग बिथा की मजूरी ॥११६॥

तू गरबाइ* कहा झगरै रसखानि तेरे बस बावरो होसै।
तौहूँ न छाती सिराइ* अरी करि झारइतै उतै बाझन कोसै ॥
लालहि लाल किए अँखियाँ गहि लालहि काल सों क्यों भई रोसै।
ऐ विधिना तू कहा री पढ़ी बस राख्यौ गुपालहि लाल भरोसै ॥११७॥

एक समै इक लालनि कों ब्रजजीवन खेलत दृष्टि पर्‌यौ है।
बालप्रवीन सकै करिकै सरकाइ कै मोर न चीर धर्‌यौ है ॥
यों रसही रसखानि सखी अपनो मनभायो कर्‌यौ है।
नन्द के लाड़िले ढाँकि दै सोस हहा हमरो बर हाथ भर्‌यौ है ॥११८॥

***शब्दार्थ**—बावरो=उन्मत्त। गरबाइ=गर्व करके। सिराइ=शांत होकर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोई हुती पिय की छतियाँ लगि बालप्रवीन महा मुद मानै ।
केस खुले छहरैं बहरैं कहरैं छबि देखत मैन अमानै ॥
वा रस मै रसखानि पगी रति रैन जगी अँखियाँ अनुमानै ।
चंद पै बिंब औ बिंब पै कैरव कैरव पै मुकतान प्रमानै ॥११९॥

आवत लाल गुपाल लिए मग सूने मिली इक नार नवीनी[1] ।
त्यों रसखानि लगाइ हिये भट् मौज कियो मनमाहिँ अधीनी ॥
सारी फटी सुकुमारी हटी अँगिया दरकी सरकी रँगभीनी ।
गाल गुलाल लगाइ कै अंक रिझाई बिदा कर दीनी ॥१२०॥

लीने अबीर भरे पिचका रसखानि खरो बहु भाय भरो जू ।
मार से गोप कुमार कुमार से देखत ध्यान टरो न टरो जू ॥
पूरब पुन्यनि हाथ पर्यौ तुम राज करौ उठि काज करो जू ।
ताहि सरौ लखि लाख जरौ इहि पाख पतिव्रत ताख धरो जू ॥१२१॥

कवित्त

आई खेलि होरी ब्रजगोरी वा किसोरी संग
अंग अंग रंगनि अनंग सरसाइगो ।
कुँकुम की मार वा पै रंगनि उछार उड़ै
बुक्का और गुलाल लाल लाल तरसाइगो ।
छोड़ै पिचकारिन धमारिल बिगोइ छोड़ै
तोड़ै हियहार धार रग बरसाइगो ।
रसिक सलोनो रिझवार रसखानि आज
फागुन में औगुन अनेक दरसाइगो ॥१२२॥

पाठांतर—१. प्रवीनी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

जाहु न कोऊ सखी जमुना जल रोकै खड़ो मग नन्द को लाला।
नैन नचाइ चलाइ चितै रसखानि चलावत प्रेम को भाला॥
मै जु गई हुती बैरन बाहिर मेरी करी गति टूटि गो माला।
होरी भई कै हरी भए लाल कै लाल गुलाल पगी ब्रजबाला॥१२३॥

कवित्त

गोकुल को ग्वाल काल्हि चौमुँह की ग्वालिन सौं
चाँचर* रचाइ एक धूमहिं मचाइगो।
हियो हुलसाय रसखानि तान गाइ बाँकी
सहज सुभाइ सब गाँव ललचाइगो।
पिचका चलाइ और जुबती भिजाइ नेह
लोचन नचाइ मेरे अंगहि बचाइगो।
सासहिं नचाइ भोरी नन्दहि नचाइ खोरी
बैरिन सचाइ* गोरी मोहि सकुचाइगो॥१२४॥

सवैया

फ़ागुन लाग्यो सखी जब तें तब तें ब्रजमंडल धूम मच्यो है।
नारि नवेली बचैं नहि एक बिसेख यहै सबै प्रेंम अच्यो है॥
साँझ सकारे वही रसखानि सुरंग गुलाल लै खेल रच्यो है।
को सजनी निलजी* न भई अरु कौन भटू जिहिं मान बच्यो है॥१२५॥

इक ओर किरीट लसै* दुसरी दिसि नागन के गन गाजत री।
मुरली मधुरी ध्वनि ओठन पै उत डामर नाद से बाजत री॥
रसखानि पितम्बर एक कंधा पर एक बघम्बर राजत री।
कोउ देखहु संगम लै बुड़की निकसे यह भेख विराजत री॥१२६॥

*शब्दार्थ—चाचर=होली का स्वांग, हुड़दंग। बैरिन सचाइ=बैर का बदला लेकर। निलजी=निर्लज्ज। लसै=सुशोभित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह देख धतूरे के पात चबात औ गात सों धूरि लगावत हैं।
चहुँ ओर जटा अँटकैं लटकैं फनि सैक फनी फहरावत हैं।।
रसखानि जेई चितवै चित दै बिनके दुख दुन्द भजावत हैं।
गजखाल कपाल की माल बिसाल सो गाल बजावत आवत हैं।।१२७।।

बैद की औषधि खाइ कछू न कर वह संजम री सुनि मोसें।
तो जलपानि कियो रसखानि सजीवन जानि लियो सुख तोसें।।
री सुधामयी भागीरथी निपतत्थि बनै न सनै तुही पोसें।
आक धतूर चबात फिरै विषै खात फिरै सिव तेरे भरोसें।।१२८।।

बैन वही उनको गुन गाइ औ कान वही उन बैन सों सानी।
हाथ वही उन गात सरै अरु पाइ वही जु उही अनुजानी।।
जान वही उन प्रान के संग औ मान वही जु करै मनमानी।
त्यों रसखानि वही रसखानि जु हैं रसखानि सो है रसखानी।।१२९।।

जो रसना* रस ना बिलसै* तेहि देहु सदा निज नाम उचारन।
सो करनी कर नीको कर जु पै कुंज कुटीरन* देहुँ बुहारन।।
सिद्धि समृद्धि सबै रसखानि लहौं ब्रज रेणुका अंग सँवारन*।
खास निवास मिलै तो सही उहि कालिन्दी फूल कदम्ब की डारन।।१३०।।

सेस सुरेस* दिनेस* गनेस प्रजेस* धनेस* महेस मनाओ।
कोऊ भंवानी भजो मन की सब आस सबै विधि जाय पुराओ।
कोऊ रमा* भजि लेहु महा धन कोऊ कहूँ मन वांछित पाओ।
है रसखानि मेरे वही साधन और त्रिलोक रहो कि नसाओ।।१३१।

*शब्दार्थ—रसना=जिह्वा। बिलसै=भोगें। कुटीरन=कुटियों में। सँवारन=मलने पर। सुरेस=इन्द्र। दिनेस=सूर्य। प्रजेस=ब्रह्मा। धनेस=कुबेर। रमा=लक्ष्मी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृग दूने खिंचे रहैं कानन लौं लट* आनन पै लहराय रही।
छक* छैल छबीली* छटा छहराय कै कौतुक कोटि दिखाय रही॥
झुक झूम झमाकन चूम अमी चहि चाँदनी चंद चुराय रही।
मन भाय रही रसखानि महा लखि* मोहन को तरसाय रही॥१३२॥

सोई है रास में नैसुक* नाचिकैं नाच नचाये कितै सबको जिन।
सोई है रीं रसखान इहै मनुहार* हू सूधे चितौत नहीं छिन॥
तोमें धौं कौन मनोहर भाव बिलोकि भयो बस हाहा करी तिन।
औसर ऐसो मिलै न मिलै फिर लंगर मोड़ो कनौड़ो करै किन॥१३३॥

प्रेम पगे जू रँगे रँग साँवरे मानौं मनाये न लालची नैना।
धावत हैं उत ही जित मोहन रोके रुकै नहीं घूँघट ऐना*॥
कानन लौं कल* नाहिं परै सखि प्रीति में भीजे सुने मृदु बैना।
रसखान भई मधु की मखियाँ अब नेह को बंधन क्यौं हूँ छुटै ना॥१३४॥

नवरंग अनंग भरी छबि सों वह मूरत आँखि गड़ी ही रहै।
बतियाँ तन की मन ही में रहैं घतियाँ* उर बीच अड़ी ही रहै॥
तबहूँ रसखान सुजान अली नलिनी दल बूँद पड़ी ही रहै।
जिय की नहीं जानत हौं सजनी रजनी अँसुवान लड़ी ही रहै॥१३५॥

आवत हैं बन तैं मनमोहन गोहन* संग लसै ब्रज ग्वाला।
बेनु बजावत गावत गीत अमीत* इतै करिगौ कछु ख्याला*॥
हेरत* टेर थकी चहुँ ओरतें झाँकि झरोखनि तैं ब्रजबाला।
देख सु आनन के रसखान तज्यो सब को त्रय ताप कसाला*॥१३६॥

***शब्दार्थ**—लट=केशराशि। छक=भरी हुई। छबीली=शोभायमान। लखि=चितवन। नैसुक=तनिक। मनुहार=आग्रह। ऐना=में, स्थान में। कल=चैन, आराम। घतियाँ=दाँव-पेच। गोहन=गौओं के। अमीत=बैरी, निर्मोही। ख्याला=तमाशा। हेरत=देखते। कसाला=कष्ट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग ही अंग जराव जरी* अरु सीस बनी पगिया* जरतारी*।
मोतिनि माल हिये लटकै लटुआ* लटकै सब घूंघरवारी ॥
पूरन पुन्य हुँ तैं रसखानि ये मोहनी मूरति आनि निहारी।
चारों दिसा के महा अघ हाँके जो झाँके झरोखे में बाँके बिहारी ॥१३७॥

यह गोधन* गावत गोधन में जब ते यह मारग है निकस्यो।
तबते कुलकानि किती यो करौं नहीं मानत पापी हियौ हुलस्यो ॥
अब तो जु भई सु भई कह होत है लोग अजान हँस्यों सु हँस्यो।
कोऊ पीर न जानत जानत सो जिहिके हिय में रसखान बस्यो ॥१३८॥

जग कान्ह भये बस बाँसुरी के अब कौन सखी हमको चहिहै।
यह राति दिना सँग लागी रहै वा सौति की साँसत* को सहिहै ॥
जिन मोहि लियो मन मोहन को रसखान सु क्यों न हमैं दहिहै*।
मिलि आओ सबै कहिं भागि चलैं अब तो ब्रज में बँसुरी रहिहै ॥१३९॥

कवित्त

जल की न घट भरैं मग की न पग धरैं
घर की न कछु करैं बैठी भरैं साँसु री।
एकै पुनि लोट गई एकै लोट-पोट भई
एकनि के दृगन निकसि आये आँसु री ॥
कहै रसनायक सो ब्रज बनितानि* विधि
बधिक कहाये हाय हुई कुल हाँसुरी*।
करिये उपाय बाँस डारिये कटाय
नाहिं उपजैगो बाँस नाहिं बाजै फेरि बाँसुरी ॥१४०॥

*शब्दार्थ—जरी = चाँदी-सोने के तार का वस्त्र। पगिया = पगड़ी। जरतारी = पीली। लटुआ = बालों की लट। गोधन = एक विशिष्ट गीत, गायों रूपी धन। साँसत = दबाव। दहिहै = जलावेगी, अन्तर्दाह पैदा करेगी। बनितानि = स्त्रियाँ। हाँसुरी = हँसी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

लाड़िली* लाल लसैं लखिये अलि पुंजन कुंजनि¹ में छवि गाढ़ी ।
ऊजरी ज्यों बिजुरी सी जुरी चहुँ गूजरी केलि कला सम काढ़ी ॥
त्यों रसखान न जानि परै सुखमा* तिहुँ लोकनि की अति बाढ़ी ।
लालन बाल लिये बिहरैं छहरैं सिर मोरपखी ठग ठाढ़ी ॥१४१

मोहन जू के वियोग की ताप मलीन महा द्युति* देह तिया की ।
पंकज सों मुख गो मुरझाय लगैं लपटैं विरहागि हिया की ॥
ऐसे में आवत कान्ह सुने रसखान सु तनी तरकी अँगिया की ।
यों जगि जोति उठी तनकी उसकाय दई* मनौं बाती दिया की ॥१४२

जात हुती* जमुना जल को मनमोहन घेरि लियो मग आय कै ।
मोद भर्यो लपटाय गयो पट घूंघट टार दियो चित चाय कै ॥
ओर कहा रसखान कहों मुख चूमत घातन* बात बनाय कै ।
कौन निभै कुलकानि किये हिये साँवरी मूरत की छवि छाय कै ॥१४३

एक समै जमुनाजल में सब मज्जन हेत नसीं ब्रज गोरी ।
त्यों रसखान गयो मनमोहन लै कर चीर कदम्ब की वोरी ॥
न्हाय जबै निकसीं वनिता चहुँ ओर चितै चित रोस कर्योरी ।
हार हियो भरि भावन सों पट दीने लला बचनामृत बोरी ॥१४४

कवित्त

चीर की चटक औ लटक नव कुण्डल की
भौंह की मटक नेह आँखिन दिखाउ रे ।

पाठांतर—१. कुंजनि कंजनि ।
*शब्दार्थ—लाड़िली = राधा । सुखमा = शोभा । द्युति = कान्ति । उसकाय दई = ऊँची कर दी । हुती = थी । घातन = अवसर मिलने पर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोहन सुजान, गुन-रूप के निधान फेरि
बाँसुरी बजाइ तनु-तपन सिराउ रे।
एहो बनवारी बलिहारी जाऊँ तेरी आजु
मेरी कुंज आइ नेकु मीठी तान गाउ रे।
नंद के किसोर चितचोर मोरपंख वारे
बंसी वारे साँवरे पियारे इत आउ रे ॥१४५॥

सवैया

जानन हीं न कछू हम ह्याँ उन ह्वाँ पढ़ि मंत्र कहा धौं दयो है।
साँची कहैं जिय में निज जानिके जानती हो जस जैसे लयो है ॥
रसखान यहै सुनिकै गुनिकै हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयो है।
लोग-लुगाई सबै ब्रज माँहि कहैं हरि चेरी को चेरो भयो है ॥१४६॥

वह साँवरों नंद' को छैल अली अब तो अति ही इतरान लग्यौ।
नित घाटन बाटन कुंजन में मोहिं देखत ही नियरान लग्यौ ॥
रसखान बखान कहा कहिए तकि सैंननि सो मुसकान लग्यौ।
तिरछौ बरछी सम मारत है दृग बान कमान सु कान लग्यौ ॥१४७॥

काल्हि पर्‍यौ मुरली धुनि में रसखान जू कानन नाम हमारो।
ता छिन' तैं नहिं धीर रह्यो जग जानि महा मन कीनो पवाँरो' ॥
गाँवन गाँवन में अब तो बदनाम भई सबसों कै किनारो।
तौ सजनी फिरि फेरि कहौं पिय मेरो यही जग ठोंकि नगारो ॥१४८॥

पाठांतर—१. नंद को साँवरो। २. ता दिन। ३. जानि लयौ अतिकीनौ पँवारो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान की औधि है आधी घरी अरु जौ रसखान डरै डरके[1] डर।
तोरिये नेह न छोड़िये पाँ परों ऐसे कटाच्छ महा हियरा हर ॥
लाल गुपाल को हाल विलोकि री नेंक छुवै किन दै करसों कर।
ना कहिबे पर वारति प्रान कहा लख वारि है हाँ कहिबे पर ॥१४६॥

सुनिये सब की कहिये न कछू रहिये इमि या भव डागर में।
करि ये ब्रत नेम सचाई लिये जिनतें तरिये भव सागर में॥
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये सतसंग उजागर में।
रसखान गुबिन्दहि यों भजिये जिमि नागरि को चित गागर में ॥१५०॥

पहिले दधि लै गई गोकुल में चख चारि भए नट नागर पै।
रसखान करी उन चातुरता कहैं दान दै दान, खरे अर* पै॥
नख तें सिख लौं पट नील लपेटें[2], लली सब भाँति कँपै डरपै।
जनु दामिनी सावन के घन तें, निकसै नहीं भीतर ही तरपै ॥१५१।

लाय समाधि रहे बरम्हादिक जोगी भये पर अन्त न पावैं।
साँझ ते भोरहिं भोर ते साँझनि सेस सदा नित नाम जपावैं।
ढूंढ़े फिरे तिरलोक में साख सुनारद लै कर बीन बजावैं।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भर छाछ पै नाच नचावैं ॥१५२॥

पाठांतर—१. मान की औधि है आधी घरी जौ रसखान डरै हित के डर।
कैहित झोड़ियै पारियै पाइन ऐसें कटाछन हीं हियरा-हर॥
मोहन लाल को हाल विलोकियै नेकु कछू किनि छुवै कर सों कर।
ना करिबे पर बारे हैं प्रान कहा करिहैं अब हाँ करिबे पर॥
२. नील निचोल लपेटे।

*शब्दार्थ—अर = ज़िद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुंज गरें सिर मोरपखा अरु चाल गयंद की मो मन भावै।
साँवरो नन्दकुमार सबै ब्रजमंडली मैं ब्रजराज कहावै।
साज समाज सबै सिरताज औ लाज की बात नहीं कहि आवै।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावै ॥१५३॥

कंस कुढ्यौ सुनि बानी अकास की ज्यावनहारहिं मारन धायौ।
भादव साँवरी आठई कों रसखान महाप्रमु देवकी जायौ।
रैनि अँधेरी में लै बसुदेव महावन में अरगै धरि आयौ।
काहु न चौजुग जागत पायौ सो राति जसोमति सोवत पायौ ॥१५४॥

कवित्त

संभु धरै ध्यान जाको जपत जहान सब
तातें न महान और दूसर अवरेख्यौ मैं।
कहै रसखान वही बालक सरूप धरै
जाको कछु रूप रंग अद्भुत अवलेख्यौ मैं।
कहा कहूँ आली कछु कहती बनै न दसा
नन्द जी के अँगना में कौतुक एक देख्यौ मैं।
जगत को ठाटी महापुरुष विराटी जो
निरंजन निराटी ताहि माटी खात देख्यौ मैं ॥१५५॥

वेई ब्रम्हा ब्रम्हा जाहि सेवत हैं रैन-दिन
सदासिव सदा ही धरत ध्यान गाढ़े हैं।
वेई विष्नु जाके काज सानी मूढ़ राजा रंक
जोगी जती ह्वै कै सीत सह्यौ अंग डाढ़े हैं।
वेई ब्रजचंद रसखानि प्रान प्रानन के
जाके अभिलाख लाखलाख भाँति बाढ़े हैं।
जसुधा के आगे बसुधा के मान-मोचन में
तामरस-लोचन खरोचन को ठाढ़े हैं ॥१५६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

एक सु तीरथ डोलत है इक बार हजार पुरान बके हैं।
एक लगे जप में तप में इक सिद्ध समाधिन में अटके हैं।
चेत* जु देखत हौ रसखान सु मूढ़ महा सिगरे* भटके हैं।
साँचहि वे जिन आपुनपौ यह स्याम गुपाल पै वारि छके* हैं ॥१५७॥

है छल की अप्रतीत की मूरति मोद बढ़ावै विनोद कलाम में।
हाथ न ऐहै कछू रसखान तू क्यों वहकै विष पीवत काम में।
है कुच कंचन के कलसा न ये आम की गाँठ मढ़ी ककि चाम में।
वैनी नहीं मृगनैनिन की ये नसैनी लगी जमराज के धाम में ॥१५८॥

मोहिनी मोहन सों रसखानि अचानक भेट भई बन माहीं।
जेठ की घाम भई सुखधाम अनंद ही अंग ही अंग समाहीं।
जीवन को फल पायौ भटू रस-बातन केलि सों तोरत नाहीं।
कान्ह को हाथ कँधा पर है मुख ऊपर मोर किरीट की छाहीं ॥१५९॥

'ता' जसुदा कह्यो धेनु की ओट ढिंढोरत ताहि फिरैं हरि भूलैं।
ढूंढ़न कूँ पग चारि चलैं मचलैं रज माँहि विथूरि दुकूलैं॥
हेरि हँसे रसखान तबै उर भाल तैं टारि कै बार लटूलैं।
सो छबि देखि अनन्दन नन्दजू अंगन अंग समात न फूलैं ॥१६०॥

अति सुन्दर री ब्रजराजकुमार महामृदु बोलनि बोलत है।
लखि नैन की कोर कटाछ चलाइ कै लाज की गाँठन खोलत है[1]।
सुनि री सजनी अलबेलो लला वह कुंजनि कुंजनि डोलत है।
रसखानि लखें मन बूड़ि गयौ मधि रूप के सिंधु कलोलत है ॥१६१॥

पाठांतर—१. वह नैनन कोर कटाछन लाइकै लाज की ग्रंथनि खोलतु है (बोलतु-खोलतु-डोलतु-कलोलतु)।

***शब्दार्थ**—चेत = सावधान। सिगरे = सारे। छके = मस्त।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलबेली बिलोकनि बोलनि औ अलबेलियै लोल निहारन की ।
अलबेली सी डोलनि गंडनि पै छबि सों मिली कुंडल वारन की ।
भटू ठाढ़ौ लख्यौ छबि कैसें कहौं रसखानि गहें द्रुम डारन की ।
हिय मैं जिय मैं मुसकानि रसी गति को सिखवै निरवारन की ॥१६२॥

बाँकी बड़ी अँखियाँ बड़रारे[1] कपोलनि बोलनि कोकिल बानी ।
सुन्दर हास[2] सुधानिधि सो मुख मूरति रंग सुधारस-सानी ।
ऐसी नवेली ने देखे कहूँ ब्रजराज लला अति हो सुखदानी ।
डोलति है बन बीथिन मैं रसखानि मनोहर[3] रूप-लुभानी ॥१६३॥

लाल लसै पगिया सबके सबके पट कोटि सुगंधनि भीने ।
अंगनि अंग सजे सब ही रसखानि जराउ नवीने ।
मुकता गलमाल लसै सब के सब ग्वार कुवार सिंगार सो कोने ।
पै सिगरे ब्रज के हरि ही हरि ही कै हरैं हियरा हरि लोने ॥१६४॥

देखिकैं रास महाबन को इक गोपबधू कह्यौ एक बधू पर ।
देखति हौ सखि मार से गोप कुमार बने जितने ब्रज-भू पर ।
तीछें निहारि लखौ रसखानि सिंगार करौ किन कोऊ कछू पर ।
फेरि फिरैं अँखियाँ ठहराति हैं कारे पितम्बर वारे के ऊपर ॥१६५॥

दमकैं रवि कुंडल दामिनी से धुरवा जिमि गोरज राजत है ।
मुकताहल-वारन गोपन के सु तौ बूंदन की छवि छाजत है ।
ब्रजबाल नदी उमही रसखानि मयंकबधू-दुति लाजत है ।
यह आवन श्री मनभावन की वरषा जिमि आज बिराजत है ॥१६६॥

पाठांतर—१. रतनारे, २. रासि, ३. सुमोहन ।
यहाँ 'हास' शब्द से अर्थ की संगति भली भाँति बैठती है । हँसी अमृतमयी है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोर किरीट नवीन लसै मकराकृत कुण्डल लोल की डोरनि।
ज्यों रसखान घने घन में दमकै बिवि दामिनि चाप के छोरनि।
मारि है जीव तो जीव बलाय बिलोकि बलाय लौं नैन की कोरनि।
कौन सुभाय सों आवत स्याम बजावत बैनु नचावत मोरनि ।।१६७।।

काटे लटे की लटी लकुटी दुपटी सुफटी सोउ आधे कँधाही।
भावते भेष सबै रसखान न जानिए क्यों अँखियाँ ललचाहीं।
तू कछु जानत या छबि कों यह कौन है साँवरिया बन माहीं।
मोरत नैन मरोरत भौंह निहोरत सैन अमेठत बाँहीं ।।१६८।।

कैसो मनोहर बानक मोहन सोहन सुन्दर काम ते आली।
जाहि बिलोकत लाज तजी कुल छूटौ है नैननि की चल चाली।
अधरा मुसकान तरंग लसैं रसखानि सुहाइ महाछबि छाली।
कुंज गली मधि मोहन सोहन देख्यौ सखी वह रूप-रसाली ।।१६९।।

सुधि होत बिदा नर नारिनु की दुति दीठि परे बहियाँ पर की।
रसखान बिलोकत गुंज छरानि तजै कुल कानि दुहूँ घर की।
सहरात हियौ फहरात हवाँ चितवैं फहरानि पितम्बर की।
यह कौन खरौ इतरात गहै बलि की बहियाँ छहियाँ बर की ।।१७०।।

ए सजनी मनमोहन नागर आगर दौर करी मन माहीं।
सास के त्रास उसास न आवत कैसे सखी ब्रजवास बसाहीं।
माखी भई मधु की तरुनी बरुनीन के बान बिंधी कित जाहीं।
बीथिन डोलति हैं रसखानि रहैं निज मन्दिर में पल नाहीं ।।१७१।।

सखि गोधन गावत हो इक ग्वार लख्यौ वहि डार गहे बट की।
अलकावलि राजति भाल बिसाल लसै बनमाल हिये टटकी।
जब तें वह तानि लगी रसखानि निवारै को या मग हौं भटकी।
लटकी लट मों दृग-मीननि सों बनसी जियवा नट की अटकी ।।१७२।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खंजन मीन सरोजन को मृग को मद गंजन दीरघ नैना।
कुंजन ते निकस्यौ मुसकात सु पान पर्‌यौ मुख अमृत बैना।
जाइ रहे मन प्रान बिलोचन कानन में रुचि मानत चैना।
रसखानि कर्‌यौ घर मो हिय में निसिवासर एक पलौ निकसै ना[1] ॥१७३॥

भटू सुन्दर स्याम सिरोमनि मोहन जोहन मैं चित चोरत है।
अवलोकन बंक विलोचन मैं व्रजबालन के दृग जोरत है।
रसखानि महावत रूप सलोने को मारग तें मन मोरत है।
गृह काज समाज सबै कुल लाज लला व्रजराज को तोरत हैं ॥१७४॥

आली लला घन सों अति सुन्दर तैसो लसै पियरो उपरैना।
गंडनि पै छलकै छवि कुंडल मंडित कुन्तल रूप की सैना।
दीरघ बंक विलोकनि की अवलोकनि चोरति चित्त को चैना।
मो रसखानि रट्‌यौ चित री मुसकाइ कहे अधरामृत बैना ॥१७५॥

मोहन रूप छकी वन डोलति घूमति री तजि लाज विचारैं[2]।
बंक विलोकनि नैन विसाल सु दम्पति कोर कटाछन मारैं।
रंगभरी मुख की मुसकान लखे सखी कौन जु देह सम्हारैं।
ज्यौं अरविन्द हिमंत-करी झकझोरि कैं तोरि मरोरि कैं डारैं ॥१७६॥

आज गई व्रजराज के मंदिर सुन्दर स्याम विलोक्यौ री माई।
सोइ उठ्‌यौ पलिका कल कंचन बैठ्‌यौ महा मनहार कन्हाई।
ए सजनी मुसकात लख्यौ रसखानि विलोकनि वंक सुहाई।
मैं तव तें कुलकानि तजी सुवजी व्रजमंडल माँह दुहाई ॥१७७॥

पाठांतर — १. मो हिय में रसखानि कर्‌यौ बर बासर रैन पलौं निकसै ना।
२. मोहन रूप छकी बन डोलति घूमि गिरी तजि लाज विचारैं।
बंक बिलोकनि नैन बिसाल सु दीपति कोर कटाछन मारैं॥
रंग भरे मुख की मुसकानि लखै सखि को निज देह संभारैं।
ज्यों अरविन्दहि मत्त करी झकझोरि कैं तोरिकैं मोहि कैं डारैं॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा मुख की मुसकानि भटू अँखियानि तें नेकु टरै नहिं टारी।
जौ पलकैं पल लागति हैं पल ही पल माँझ पुकारें पुकारी।
दूसरी ओर तें नेकु चितै इन नैनन नेम गह्यौ बजमारी।
प्रेम की वानि कि जोग कलानि गही रसखानि विचार बिचारी ।।१७८।।

कातिक क्वार के प्रात ही प्रात सरोज किते बिकसात निहारे।
डीठि परे रतनागर के दरके बहु दाड़िम बिम्ब बिचारे।।
लाल सु जीव जिते रसखानि ते रंगनि तोलनि मोलनि भारे।
राधिका श्रीमुरलीधर की मधुरी मुसकानि के ऊपर बारे ।।१७९।।

बाँकी धरैं कलगी सिर ऊपर बाँसुरी-तान कटै रस बीर के।
कुण्डल कान लसैं रसखानि बिलोकन तीर अनंग तुनीर के।।
डारि ठगौरी गयौ चित चोरि लिए हैं सबैं सुख सोखि सरीर के।
जात चलावन मो अवला यह कौन कला है भला वे अहीर के ।।१८०।।

कौन की नागरि रूपकी आगरि जाति लिए सँग कौन की बेटी।
जाको लसै मुख चंद समान सु कोमल अंगनि रूप-लपेटी।।
लाल रह्यौ चुप लागि है डीठि सु जाके कहूँ उर बात न मेटी।
टोकत ही टटकार लगी रसखानि भई मनौ कारिख-पेटी ।।१८१।।

कुंजगली मैं अली निकसी तहाँ साँकरे ढोटा कियौ भटभेरो।
माई री वा मुख की मुसकान गयौ मन बूड़ि फिरै नहिं फेरो।।
डोरि लियौ दृग चोरि लियो चित डार्‌यौ है प्रेम को फंद घनेरो।
कैसी करौं अब क्यों निकसौं रसखानि पर्‌यौ तन रूप को घेरो ।।१८२।।

लंगर छैलहि गोकुल मैं मग रोकत संग सखा ढिग तै हैं।
जाहि न ताहि दिखावत आँखि सु कौन गई अब तोसों करै हैं।
हाँसी में हार हद्‌यौ रसखानि जु जौ कहूँ नेकु तगा टुटि जै हैं।
एकहि मोती के मोल लला सिगरे ब्रज हाटहि हाट बिकैहैं ।।१८३।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काहू को माखन चाखि गयौ अरु काहू को दूध दही ढरकायौ ।
काहू को चीर लै रूख चढ़्यौ अरु काहू को गुंजधरा छहरायौ ।
मानै नहीं बरजें रसखानि सु जानियै राज इन्हें घर आयौ ।
आव री बूझें जसोमति सों यह छोहरा जायौ कि मेव* मँगायौ ॥१८४॥

चंद सौं आनन मैन-मनोहर बैन मनोहर मोहत हौं मन ।
बंक बिलोकति लोट भई रसखानि हियो हित दाहत हौं तन ॥
मैं तब तैं कुलकानि* की मैंड़ नखी जु सखी अब डोलत हौं बन ।
बेनु बजावत आवत है नित मेरी गली ब्रजराज को मौहन ॥१८५॥

डोरि लियौ मन मोरि लियो चित जोरि लियौ हित तोरि कै तानन ।
कुंजनि तैं निकर्‍यौ सजनी मुसकाइ कह्यौ वह सुन्दर आनन* ॥
हौं रसखानि भई रसमत्त सखी सुनि के कल बाँसुरी कानन ।
मत्त भई वह बीथिन डोलति मानति काहू की नेकु न आनन* ॥१८६॥

काल्हि भटू मुरली धुनि में रसखानि लियौ कहुँ नाम हमारौ ।
ता छिन ते भई बैरिनि सास कितौ कियौ झाँकन देति न द्वारौ ॥
होत चबाव* बलाई सों आली री जौ भरि आँखिन भेंटिये प्यारौ ।
बाट परी* अब रीं ठिठक्यौ* हियरे अटक्यौ पियरे पटवारौ ॥१८७॥

ब्रज की बनिता सब घेरि कहैं, तेरौ ढारो* बिगारो कहा कस री ।
अरी हमको जम काल* भई नेकु कान्ह गही तौ कहा रस री ॥
रसखानि भली विधि अनि बनी बसिबो नहीं देत दिना दस री ।
हम तो ब्रज को बसिबोई तजौ बस री ब्रज बैरिन तू बँसरी ॥१८८॥

---

*शब्दार्थ—मेव लूटमार करने वाला । कुलकानि कुल की मर्यादा । आनन मुख । आनन—बाधाएँ । चबाव बदनामी । बाट परी रास्ता रुक गया । ठिठक्यौ=रुक गया । ढारौ—ढंग । जम काल मृत्यु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन बाग तड़ागनि कुंजगली अँखियाँ सुख पाइहैं देखि दई।
अब गोकुल माँझ बिलोकियैगी वह गोप सभाग सुभाय रई।।
मिलिहै हँसि गाइ कबै रसखानि कबै ब्रजबालनि प्रेममई।
वह नील निचोल* के घूँघट की छवि देखबी देखन लाज लई।।१८९।।

तुम चाहो कहौ सो कहौ हम तौ नन्दवारे के संग ठईं सो ठईं*।
तुम ही कुलवीने* प्रवीने सबै हम ही कुछ छाँड़ि गईं सो गईं।।
रसखान यों प्रीत की रीति नई सु कलंक की मोटैं लईं सो लईं।
यह गाँव के पासी हँसैं सो हँसैं हम स्याम की दासी भईं सो भईं।।१९०।।

कुंजनि कुंजनि गुंज के पुंजनि* मंजु लतानि सौं माल बनैवो।
मालती मल्लिका कुंद सौं गूँदि हरा हरि के हियरा पहिरैवो।।
आली कबै इन भावने भाइन आपुन रीझि कै प्यारे रिझैवो।
माइ झकै हरिं हाँकरिबो रसखानि तकै फिरि कै मुसकैवो।।१९१।

सब धीरज क्यों न धरौं सजनी पिय तो तुम सों अनुरागेइगौ।
जब जोग सँजोग को आन बनै तब जोग बिजोग को मानेइगौ।।
निसचै निरधार धरौ जिय में रसखान सबै रस पावेइगौ।
जिनके मन सो मन लागि रहै जिनके तन सों तन लागेइगौ।।१९२।।

चंदन खोर पै बिन्दु लगाय कै कुंजन तें निकस्यौ मुसकातो।
राजत है बनमाल गरे अरु मोरपखा सिर पै फहरातो।।
मैं जब तें रसखान बिलोकति ही कछु और न मोहि सुहातो।
प्रीति की रीति में लाज कहा सखि है सब सों बड़ नेह को नातो।।१९३।।

***शब्दार्थ**—निचोल = वस्त्र। ठईं सो ठईं = दृढ़ संकल्प लिया। कुलवीने = कुलवान। पुंजनि = समूह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री वृषभान की छान* धुजा अटकी लरकान तें आन लई री।
वा रसखान के पानि की जानि छुड़ावति राधिका प्रेममई री॥
जीवन मूरि* सी नेज लिये इनहूँ चितयौ उनहूँ चितई री।
लाल लली दृग जोरत ही सुरझानि गुड़ी उरझाय दई री॥१६४॥

आई सबै ब्रज-गोप लली ठिठकीं ह्वै गली जमुना-जल न्हाने।
औचक आइ मिले रसखानि बजावत बेनु सुनावत ताने॥
हा हा करी सिसकीं सिगरी मति मैन हरी हियरा हुलसाने।
घूमें दिवानी अमानी चकोर सों ओर सों दोऊ चलैं दृग बाने॥१६५॥

नन्द को नन्दन है दुख कन्दन¹ प्रेम के फन्दन बाँधि लई हौं।
एक दिना ब्रजराज के मन्दिर मेरी अली इक बार गई हौं॥
हेर्‍यौ लला लचकाइ कै मो तन जोहन की चकडोर भई हौं।
दौरी फिरौं दृग डोरनि मैं हिय मैं अनुराग की बेलि बई हौं॥१६६॥

तीरथ भीर में भूलि परी अली छूट गई नेकु धाय* की बाँही।
हौं भटकी भटकी निकसी सु कुटुम्ब जसोमति की जिहिं घाँही*॥
देखत ही रसखान मनौ सु लग्यौ ही रह्यौ कब कों हियराँही।
भाँति अनेकन भूली हुती उहि द्यौस की भूलनि भूलत नाँही॥१६७॥

मारग रोकि रह्यौ रसखानि के कान परी झनकार नई है।
लोग चितै चित दै चितए नख तें मन माहिं निहाल* भई है॥
ठोढ़ी उठाइ चितै मुसकाइ मिलाइ कै नैन लगाइ लई है।
जों बिछिया बजनी सजनी हम मोल लई पुनि बेचि दई है॥१६८॥

पाठान्तर—१. सुख कंदन।

***शब्दार्थ**—छान—फूस की छत। जीवन मूरि=संजीवनी बूटी के समान। धाय—धात्री। घाँही—स्थान, घर। निहाल—प्रसन्न।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमुना-तट बी गई जब तें तव तें जग के मन माँझ तहौं ।
ब्रज मोहन गोहन* लागि भटू हौं लटू भई* लूट सी लाख लहौं ॥
रसखान लला ललचाय रहे गति आपनी हौं कहि कासों कहौं ।
जिय आवत यों अवतों सब भाँति निसंक ह्वै अंक लगाय रहौं ॥१६६॥

प्यारी पै जाइ कितौ परि पाइ पची समझाइ सखी की सौं बैना ।
बारक नन्दकिसोर की ओर कह्यौ दृग छोर की कोर करै ना ॥
ह्वै निकस्यौ रसखान कहूँ उत डीठ पर्‍यौ पियरो उपरैना* ।
जीव सो पाय गई पचिवाय* कियौ रुचि नेह गये ललि नैना ॥२००॥

सखियाँ मनुहारि कै हारि रही भृकुटी को न छोर लली नचयौ ।
चहुँधा घनघोर नयौ उनयौ* नभ नायक ओर चितै चितयौ ॥
विकि आप गई हिय मोल लियौ रसखान हितू न हियों रिझयौ ।
सिगरो दुख तीछन कोरि कटाछन काटि कै सौतिन बाँटि दियौ ॥२०१॥

खेलै अलीजन* के गन मैं उत प्रीतम प्यारे सों नेह नवीनो ।
बैननि बोध करै इत कौं उत सैननि मोहन को मन लीनो ॥
नैननि की चलिबी कछु जानि सखी रसखानि चितैबे कौं कीनो ।
जा लखि पाइ जँभाइ गई चुटकी चटकाइ विदा करि दीनो ॥२०२॥

कानपरे मृदु बैन मरू करि* मौन रही पल आधिक साधे ।
नंद बबा घर कों अकुलाय गई दधि लै बिरहानल दाधे ॥
पाय दुहूनि प्राननि प्रान सों लाज दबैं चितवैं दृग आधे ।
नैननि ही रसखान सनेह सही कियौ लेउ दही कहि राधे ॥२०३॥

*शब्दार्थ—गोहन = साथ । लटू भई = मुग्ध हो गई । उपरैना = वस्त्र । पचिवाय = वायु-विकार शान्त हो गया । उनयौ = घिर आया । अलीजन = सखियों का समूह । मरू करि = कठिनाई से ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केसरिया पट, केसरि खौर* बनौ गर गुंज को हार ढरारो* ।
को हौ जू आपनी या छवि सों जु खरे अँगना प्रति डीठि न डारो ॥
आनि बिकाऊ से होइ रहे रसखानि कहै तुम्ह रोकि दुवारो ।
'हैं तौ बिकाऊँ जौ लेत बनैं हँस बोल तिहारो है मोल हमारो' ॥२०४॥

मैं रसखान की खेलनि जीति कं मालती मालती माल लई री ।
मेरीये जानि कं सूधि सबै चुप ह्वै रही काहु करी न खई* री ॥
भावते स्वेद की बास सखी ननदी पहिचानि प्रचंड भई री ।
मैं लखिबौ लखि कं अँखियाँ मुसकाय लचाय नचाय दई री ॥२०५॥

बृषभान के गेह दिवारी के द्यौस अहीर अहीरनि भीर भई ।
जितही तितही धुनि गोधन की सब ही ब्रज ह्यं रह्यौ राग भई ॥
रसखान तबै हरि राधिका यों कछु संननि ही रस बेल बई ।
उहि अंजन आँखिनि आँज्यौ भटू इन कुंकुम आड़* लिलार* दई ॥२०६॥

बात सुनी न कहूँ हरि की, न कहूँ हरि सों मुख बोल हँसी है ।
कालिह ही गोरस बेचन कौं निकसी ब्रजवासिनि बीच लसी है ॥
आजु ही बारक 'लेहु दही' कहि कै कछु नैनन मैं बिहँसी है ।
बैरिनि वाहि भई मुसकानि जु वा रसखानि के प्रान बसी है ॥२०७॥

ग्वालिन द्वै क भुजान गहैं रसखानि कौं लाइ जसोमति पाहैं* ।
लूटत हैं कहैं ये बन मैं मन मैं कहैं ये सुख-लूट कहाँ हैं ॥
अंग ही अंग ज्यौं ज्यौं ही लगैं त्यौं त्यौं ही अंग ही अंग समाहैं ।
वे पछलैं उलटैं पग एक तौ वै पछलैं उलटैं पग जाहैं ॥२०८॥

---

*शब्दार्थ—खौर=तिलक । ढरारो=सुन्दर । खई=झगड़ा । आड़=तिलक लिलार=मस्तक । पाहैं=पास ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोहन सों अटक्यौ मनु री कल जाते परै सोइ क्यौं न बतावै ।
व्याकुलता निरखे बिन मूरति भागति भूख न भूषन भावै ।।
देखे तें नेकु सम्हार रहै न तबै झुकि के लखि लोग लजावैं ।
चैंन नहीं रसखानि दुहुँ बिधि भूली सबै न कछू बनि आवै ।।२०९।।

भई बावरी ढूँढ़ति वाहि तिया अरी लाल ही लाल भयौ कहा तेरो ।
ग्रीवा ते छटि गयौ अबहीं रसखानि तज्यौ घर मारग हेरो ।।
डरियै कहै माय हमारी बुरी हिय नेकु न सूनो सहै छिन मेरो ।
काहे को खाइबो जाइबो है सजनी अनखाइबो* सीस सहेरो ।।२१०।।

प्रेम मरोरि उठै तब हीं मन पाग मरोरनि में उरझावै ।
रूसे से* ह्वै दृग मोसों रहैं लखि मोहन मूरति मो पै न आवै ।।
बोले बिना नहिं चैंन परै रसखानि सुने कल स्रौनन पावै ।
भौंह मरोरिबो री रुसिबो झुकिबो पिय सों सजनी सिखरावै ।।२११।।

बागन में मुरली रसखान सुनि सुनिकै जिय रीझ पचैंगो ।
धीर समीर को नीर भरौं नहिं माइ झकै* औ बबा सकुचैंगो ।।
आली दुरेधे* को चोटनि नैंम कहौ अब कौन उपाय बचैंगो ।
जागबौ भाँति कहाँ घर सों परसों वह रास परोस रचैंगो ।।२१२।।

खेलिये फाग निसंक ह्वै आज मयंक मुखी* कहे भाग हमारो ।
तेहु गुलाल छुओ कर में पिचकारिन मैं रंग हिय मँह डारो ।।
भावे सु मोहि करो रसखान जू पाँव परों जनि घूंघट टारो ।
वीर की सौंह हौं देखि हौं कैसे अबीर तो आँखि बचाय के डारो ।।२१३।।

***शब्दार्थ**—अनखाइबो=डाँट-फटकार, चिढ़ना, झुंझलाना आदि । रूसे से=रूठे हुए से । झकै=झक-झक करना । दुरेधे=निर्लज्ज । मयंक मुखी=चन्द्रमुखी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेलतु फाग लख्यौ पिय प्यारी कों ता सुख की उपमा किहिं दीजै।
देखत हीं बनि आवै भलै रसखान कहा है जो वारि न कीजै॥
ज्यौं ज्यौं छबीली कहै पिचकारी लै एक लई यह दूसरी लीजै।
त्यौं त्यौं छबीलो छकै छवि छाक सों* हेरै हँसे न टरै खरौ भीजै॥२१४॥

मिलि खेलत फाग बढ़्यौ अनुराग सुराग सनी सुख की रमकै*।
कर कुंकुम लै करि कंजमुखी प्रिय के दृग लावन कौं धमकै॥
रसखानि गुलाल की धूँधर* में ब्रजबालन की दुति यौं दमकै।
मनौ सावन माँझ ललाई के माँझ चहूँ दिसि तें चपला चमकै॥२१५॥

कवित्त

कैधों रसखान रसकोस* दृग प्यास जानि
आनि कै पियूष पूष कोनो, बिधि चन्द घर।
कैधों मनि मानिक बैठारिवै को कंचन मैं
जरिया जोबन जिन गढ़िया सुघर घर।
कैधों काम कामना के राजत अधर चिह्न
कैधों यह भौंर ज्ञान बोहित* गुमान हर।
एरी मेरी प्यारी दुति कोटि रति रम्भा की
वारि डारों तेहि चित चोरनि चिबुक पर॥२१६॥

सवैया

बासर* तूं जु कहूँ निकरै रवि को रथ माँझ अकास अरै री।
रैन यहै गति है रसखानि छपाकर* आँगन तें न टरै री॥
द्यौस निस्वास चल्यौई करै निसि द्यौस की आसन पाय धरै री।
तेरो न जात कछू दिन राति विचारे बटोही की बाट परै री॥२१७॥

***शब्दार्थ**—छकै छबि छाक सों=रूप-मद में मस्त होना। रमकैं=अठखेलियाँ। धूंधर=गर्द, धूल। रसकोस=आनन्द-निधि। बोहित=नौका। बासर=दिन। छपाकर=चन्द्रमा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाको लसै मुख चन्द समान कमानी सी भौंह गुमान* हरै ।
दीरघ नैन सरोजहुँ तें मृग खंजन मीन की पाँत दरै* ।।
रसखान उरोज निहारत ही मुनि कौन समाधि न जाहि टरै ।
जिहि नीके नवै कटि हार के भार सों तासों कहै सब काम करै ।।२१८।।

प्रेम कथानि की बात चलै चमकै चित चंचलता चिनगारी ।
लोचन बंक बिलोकनि लोलनि बोलनि मैं बतियाँ रसकारी ।।
सोहैं तरंग अनंग को अंगनि कोमल यौं झमकै झनकारी ।
पूतरी खेलत ही पटकी रसखानि सु चौपर खेलत प्यारी ।।२१९।।

वारति* जा पर ज्यौं न थकै चहुँ ओर जितो नृपती धरती है ।
मान सकै धरती सों कहाँ जिहि रूप लखै रती सी रती है ।।
जा रसखान बिलोकन काज सदाई सदा हरती बरती है ।
तौ लगि ता मन मोहन की अँखियाँ निसि द्यौस हहा करती है ।।२२०।।

पिय सों तुम मान कर्यौ कत नागरि आजु कहा किनहूँ सिख दीनी ।
ऐसे मनोहर प्रीतम के तरुनी बरुनी* पग पोछै नवीनी ।।
सुन्दर हास सुधानिधि सो मुख नैननि चैन महारस भीनी ।
रसखानि न लागत तोहि कछू अब तेरी तिया किनहुँ मति दीनी ।।२२१।।

काहे कूँ जाति जसोमति के गृह पोच* भली घर हूँ तो रई* ही ।
मानुष को डसिबौ अपुनो हँसिबौ यह बात उहाँ न नई ही ।।
बैरिनि तौ दृग-कोरनि में रसखान जो बात भई न भई ही ।
माखन सौ मन लै यह क्यों वह माखनचोर के ओर नई ही ।।२२२।।

---

*शब्दार्थ—गुमान = गर्व । दरै = चूर्ण करना । वारति = न्यौछावर करती । बरुनी = बरौनियों से । पोच = कमजोर । रई = दही मथने की लकड़ी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोरस गाँव ही मैं बिचिबो तचिबो नहीं नन्द-मुखानल झारन।
गैल गहें चलियै रसखानि तौ पाप बिना डरियै किहि कारन।
नाहिं री ना भटू, क्यों करि कै बन पैठत पाइबी लाज सम्हारन।
कुंजनि नन्दकुमार बसै तहाँ मार बसै कचनार की डारन ॥२२३॥

मो हित तो हित है रसखान छपाकर जानहिं जान अजानहिं।
सोउ चबाव चल्यौ चहुँधा चलि री चलि री खत तोहि निदानहिं।
जो चहियै लहियै भरि चाहि हिये सहियै हित काज कहा नहिं।
जान दै सास रिसान दै नंदहिं पानि* दै मोहि तू कान दै तानहिं*॥२२४॥

फूलत फूल सबै बन बागन बोलत मोर बसंत के आवत।
कोयल की किलकार सुनै सब कंत* विदेसन तें तब धावत।
ऐसे कठोर महा रसखान ज़ू नेकहु मोरी ये पीर न पावत।
हूक सी सालत है हिय मैं जब बैरिन कोयल कूक सुनावत ॥२२५॥

बिरहा की जु आँच* लगी तन में तब जाय परी जमुना जल में।
बिरहानल तें जल सूखि गयौ मछली बहीं छाँड़ि गई तल में।
जब रेत फटी रु पताल गई तब सेस जर्‌यौ धरती-तल में।
रसखान तबै इहि आँच मिटै जब आय कै स्याम लगैं गल में ॥२२६॥

आये कहा करि कै कहिए वृषभान लली सों लला दृग जोरत।
ता दिन सों अँसुवान की धार रुकी नहिं जद्यपि लोग निहोरत*।
बेगि चलो रसखान बलाइ लौं* क्यों अभिमानन भौंह मरोरत।
प्यारे ! पुरन्दर होय न प्यारी अबै पल आधिक में ब्रज बोरत ॥२२७॥

*शब्दार्थ—पानि=हाथ। तानहिं=स्वर को। कंत=प्रियतम। आँच=अग्नि। निहोरत=निवेदन करती। बलाइ लौं=बलैयाँ लूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोकुल के बिछुरे को सखी दुख प्रान ते नेकु गयौ नहीं काढ़्यौ।
सो फिर कोस हजार तें आय कै रूप दिखाय दहे पर दाह्यौ*।
सो फिर द्वारिका ओर चले रसखान है सोच यहे जिय गाढ़्यौ।
कौन उपाय किये करि हैं ब्रज में बिरहा कुरुखेत को बाढ़्यौ ।।२२८।।

गोकुल नाथ बियोग प्रलै जिमि गोपिन नंद जसोमति जू पर।
बाहि गयौ अँसुवान प्रवाह भयौ जल में ब्रजलोक तिहू पर।
तीरथराज सी राधिका प्रान सु तो रसखान मनौं ब्रज भू पर।
पूरन ब्रह्म ह्वै ध्यान रह्यौ पिय औधि* अखैबट* पात के ऊपर ।।२२९।।

ए सजनी जब तें मैं सुनी मथुरा नगरी बरषा रितु आई।
लै रसखान सनेह कीताननि* कोकिल मोर मलार मचाई।
साँझ ते भोर लौं भोर तें साँझ लौं गोपिन चातक ज्यौं रट लाई।
एरी सखी कहिये तो कहाँ लगि बैरी अहीर ने पीर न पाई ।।२३०।।

मग हेरत धूंधरे नैन भए रसना रट वा गुन गावन की।
अंगुरी गनि हार थकी सजनी सगुनौती* चलै नहिं पावन की।
पथिकौ कोउ ऐसो जु नाहिं कहै सुधि है रसखान के आवन की।
मनभावन आवन सावन में कही औधि करी डग बावन की ।।२३१।।

वा रसखानि गुनौं* सुनि कै हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयौ है।
जानति हैं न कछू हम ह्याँ उन वाँ पढ़ि मंत्र कहा धौं* दयौ है।
साँची कहैं जिय मैं निज जानि कै जानति हैं जस जैसो लयौ है।
लोग लुगाई सबै ब्रज माँहि कहैं हरि चेरी को* चेरो भयौ है ।।२३२।।

---

*शब्दार्थ—दहे पर दाह्यौ=जले पर और जलाया। औधि=अवधि। अखैबट=अक्षयवट। सनेह की ताननि=प्रेमपूर्ण स्वरों में। सगुनौती=शुभ शकुन। गुनौं=गुणों को। कहा धौं=न जाने क्या। चेरी को=दासी कुब्जा का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेती* जु पै कुबरी इह्याँ सखी भरी लातन मूका बकोटती लेती ।
लेती निकारि हिये की सबै नक छेदि कै कौड़ी पिराइ कै देती ।
देती नचाई कै नाच वा राँड़ कौं लाल रिझावन को* फल सेती ।
सेती सदाँ रसखानि लियें कुबरी के करेजनि सूलसी भेती ।।२३३।।

जोग सिखावत आवत है वह कौन कहावत को है कहाँ को ।
जानति हैं बर* नागर है पर नेकहु भेद लख्यौ नहिं ह्याँ को ।
जानति ना हम और कछू मुख देखि जियें नित नन्दलला को ।
जात नहीं रसखानि हमैं तजि राखनहारी है मोरपखा को ।।२३४।।

अंजन मंजन* त्यागौ अली अँग धारि भभूत करौ अनुरागै ।
आपुन भाग कर्‌यौ सजनी इन बावरे ऊधो जू को कहाँ लागै ।
चाहै सो और सबै करियै जु कहै रसखान सयानप आगै ।
जो मन मोहन ऐसी बसी तो सबै री कहौ मुख गोरस जागै ।।२३५।।

आजु सँवारति नेक भटू* तन मंद करी रति की दुति लाजै ।
देखत रीझि रहे रसखानि सुओर कहा विधि ना उपराजै ।
आये हैं न्यौते तरैयन के मनौ संग पतंग पतंगज राजै ।
ऐसे सखी मुख बागन में तिल तेरे तरोना के तीर बिराजै ।।२३६।।

कवित्त

छूट्यौ गृह काज लोक लाज मनमोहन कै
भूल्यौ मनमोहन कौ मुरली बजाइबो ।
अब ही दिन द्वै मैं रसखानि बात फैलि जैहै
सजनी कहा लौं चंद हाथन दुराइबो ।।

***शब्दार्थ**—भेती=होती । रिझावन को=रिझाने का । बर=श्रेष्ठ । अंजन मंजन=शृंगार । भटू=सखी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलि ही कलिंदी तीर चितयौ अचानक ही
दो उनकौ दोउन ओर मुरि मुसिक्याइबो।
दोऊ परैं पैयाँ दोऊ लेत हैं बलैयाँ
उन्हें भूलि गयीं गैयाँ उन्हें गागर उठाइबो ॥२३७॥

सवैया

अति लाल गुलालहु फूलतैं फूल अली अलि कुंतल राजत हैं।
मुकता के कदंब के अंब के मौर सुने सुर कोकिल लाजत हैं।
मखतूल समान के गुंज छरानन किंसुक की छबि छाजत हैं।
यह आपन प्यारी जू की रसखानि बसंत सी आजु विराजत हैं ॥२३८॥

घर हीं घर घेरु घना घरिही घरिहाइनि आगें न साँस भरौं।
लखि मेरियै ओर रिसाहिं सबै सतराहिं* जौ सौंहें अनेक करौं।
रसखानि तो काज सबै ब्रज तौ मेरो बैरी भयो अब कासों लरौं।
बिनु देखे न क्यों हूँ निमेषै* लगैं तेरे लेखें न हूँ या परेखें मरौं ॥२३९॥

कवित्त

कदंब करीर तीर पूछत अधीर गोपी
आनन रुखौंहों रोय रोई भरौ हौं सौं॥
चोर हौ हमारौ प्रेम चोंतरा में हार्‌यौ
भइरान तैं निकसि भाज्यौ ह्वै कर लजौंहौं सौं॥
ऐसो रूप ऐसो बेस हमें हूँ दिखैयौ
देखि-देखत ही रसखान नैनन चुभौ हौं सौं॥
मुकुट लुकौहौं हार हियरा सरौहौं कटि
फेंटा पियरौहौं अंग रंग साँवरो हौं सौं॥२४०॥

***शब्दार्थ**—सतराहिं=अकड़तीं। निमेषैं=पल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

सास की सासन* ही चलिबौ चलियै निसि द्यौस चलावै जिही ढंग।
आली चबाव लुगाइन केर जातन ये ननदी ननदौ सँग।
भावती औ अनभावती* भीर मैं छ्वै न गयौ कबहूँ अँग सो अँग।
बैर करें घर ही में तबै रसखानि सौं मोसों कहा भयो रँग ।।२४१।।

साँझ समैं जिहिं देखत ही तिहि पेखन कौ मन यौं ललकै री*।
ऊँचे अटान चढ़ी ब्रज बाल सलाज सनेह दुरै उझकै री।
गोधन धूर की धूँधरी में तिनकी छवि यौं रसखान तकै री।
पावक के गिरि तें बुझि मानो धुवाँ लपटैं लपटैं लपकैं री ।।२४२।।

मोतिन माल बनी लटकैं लटकी लट औ लट घूँघरवारी।
अंगनि अंग जराइ कसै धरु सीस लसै पगिया जरतारी।
पूरब पूरे ही पुन्यन तें रसखानि जो मूरति आनि निहारी।
चार्यौ दिसा के महा अघ हाँके झरौंखा तें झाँके हैं बाँकेबिहारी ।।२४३

वह घेरनि धेनु अबेर सबेर न फेरन लाल लकुट्टन की[1]।
वह तीछन चच्छु कटाछन की छवि मोरन भौंह भृकुट्टन[2] की।
वह लाल की चाल चुभी चित मैं रसखान संगीत-उघट्टन[3] की।
वह पीत पटक्कन* की चटकानि लटक्कन मोर मुकुट्टनि[4] की ।। २४४।

मैन मनोहर बैन बड़े सखि सैननहीं मन मेरो हर्‌यौ है।
गेह कौ काज तज्यौ रसखानि हियैं ब्रजराज कुँवार अर्‌यौ है।
आसन बासन सास के त्रासन माने न साँसन रंग भर्‌यौ है।
नैननि बंक बिसाल की जोहनि मत्त महा मनमत्त कर्‌यौ है ।।२४५।।

पाठांतर—१. वह घेरनि धेनु अबेर सबेरनि फेरनि लाल लकुट्टनि की। २. भृकुट्टनि। ३. उघुट्टनि। ४. मटक्कन। मुकुट्टनि शब्द से ही अर्थ की संगति बैठती है।

***शब्दार्थ**—सास की सासन=सास का अनुशासन। भावती औ अनभावती=प्रिय और अप्रिय। ललकै री=ललचाता है। पीत पटक्कन=पीत वस्त्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँकी मरोर गही भृकुटीन लगी अँखियाँ तिरछान तिया की।
टाँक सी लाँक भई रसखान सुदामिनि तें दुति दूनी हिया की।
सोहैं तरंग अनंग की अंगनि ओप उरोज उठी छतिया की।
जोबन जोति सु यौं दमकैं उसकाइ दई मनो बाती दिया की ।।२४६।।

देखत सेज बिछी ही अछी विष सौ भिदगौ सगरे सगरे तन।
ऐसी अचेत गिरी नहि चेत उपाइ करै सगरी सजनी-गन।
बोली सयानी सी रसखानि बचैं यौं सुनाइ कह्यौ जुबती-जन।
देखन कौं चलियैं री चलौ सब रास रच्यौं मनमोहन जू वन ।।२४७।।

मोहन के मन की सब जानत जोहन के मग मोहि लियौ मन।
मोहन सुंदर आनन चंद तें कुंजनि देख्यौ मैं स्याम सिरोमन।
ता दिन तें मेरे नैननि लाज तजी कुलकानि की डोलति हौं वन।
कैसी करौं रसखानि लगी जकरी पकरी पिय के हित कौ पन ।।२४८।।

बात चलै चमकै दुति दीपत चंचित चंचिलता चिनगारी।
लोचन बंक बिलोकनि लोलनि बोलनि में बतिया रसकारी।
सौहैं तरंग अनंग की अंगनि कोमल यों सुमकी सनकारी।
पूतरी/ खोलत ही पट की रसखानि सु चौपरि खेलत प्यारी ।।२४९।।

जो कबहूँ मग पाँव न देति सुतौ हित लालन आपुन गौने।
मेरौ कह्यौ करि मान तज्यौ कहि मोहन सों बोलौ बोल सलौने।
सौंह दिबावत हौं रसखानि तूँ सौंहैं करे किन लाखन लौने।
अनौखी तू मानिनी मान कर्‍यो किन मान बसंत में कीनौ है
कौने ।।२५०।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंन मनोहर री दुखदंदन है सुखकंदन नंद कौ नंदा।
बंक बिलोकनि की अवलोकनि है दुखमोचन* प्रेम कौ फंदा।
जाकौ लसैं मुख रूप-अनूपम होत पराजय कोटिक चंदा।
हौं रसखानि बिकाइ गई नहिं मोल लई सजनी सुखकंदा ।।२५१।।

मोरपखा सिर काननि कुंडल कुंतल सो छवि गंडन छाई।
बंक बिसाल रसाल बिलोचन मोहन हैं दुखमोचन माई।
आली नवीन महा घन सौतन पीत पटा ज्यौं छटा कल छाई।
हौं रसखान जकी सी रही कछु टोंनों चलाइ ठगोरी सी लाई ।।२५२।।

बनें कान कुंडल मोरपखा उर पै वनमाल बिराजति है।
मुरली कर में अधरा मुसिक्यांनि तरंग महा छवि छाजति* है ।।
रसखानि लसै तन पीत पटा सत दामिनि की दुति लाजति है।
वह बाँसुरी की धुनि कान परै कुलकाँनि हियौ तजि भाजति है ।।२५३।।

नैन मनोहर बैन बजै सु सजै तन सोहतु पीत पटा है।
यौं दमकै चमकै झमकै दुति दामिनी की मनौ स्याम घटा है।
रास बनौ ब्रजराज कुमार अटा चढ़ी फेरतु लाल वटा है।
रसखानि महा मधुरी मुख की मुसिक्याँनि करै कुलकाँनि कटा है ।।२५४।।

प्यारी के चारु सिंगारु तरंगनि जाइ लगी रत्ति की दुति कूलनि।
जोबन जेब कहा कहिए उपजै छबि मंजु अनेक दुकूलनि।
कंचुकी सेत में जावक बिन्दु बिलोकि मरैं मघवानि* की सूलनि।
पूजे है आजु मनौ रसखानि सु भूत के भूप बँधूक के फूलनि ।।२५५।।

---

*शब्दार्थ—दुखमोचन=दुःख दूर करना। छाजति=शोभा पाती। मघवानि=इंद्र की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोरपखा धरें चारिक चारु बिराजत कोटि अमेठिनि फेंटौ।
गुंज* छरा रसखान बिसाल अनंग लज्यावत अंग करेटौ।
ऊँचे अटा चढ़ि एँड़ी उचाइ हियौ हुलसाइ कें हौंस लपेटौ।
हौं कब कै लखि हौं भरि आँखिन आवत गोधन धूरि धुरेटौ ।।२५६।।

वह देखि धतूरे के पात चबात औ गाति सौं धूरि लगावतु है।
चहुं ओर जटा लटकैं अति के फनि सैंक फनी फहरावतु है।
रसखानि जेई चितवें चितु दै तिनके दुख दंद भजावतु है।
गज खाल कपाल की माल बिसाल सो गाल बजावतु आवतु है ।।२५७।।

कीजै कहा जु पै लोग चबाव सदा करिबौ करिहैं ब्रजमारौ।
सील न लोकत राखै न लाजु सुगावत ताहि री गावनहारौ।
आउ री सीरी करें अँखियाँ रसखानि धनै धनि भाग हमारौ।
आवतु है फिरि आजु बन्यौ वह राति के रास कौ नाचनहारौ ।।२५८।।

लाल की आज छठी ब्रज लोग अनंदित नंद बड्यौ अन्हबावत।
चाइन चारु बधाइन लै चहुं ओर कुटुंब अघात न गावत[1]।
नाचत बाल बड़े रसखानि छके हित काहु कै लाज न आवत।
तैसोई मात पिताउ लह्यौ उलह्यौ कुलही कुलही पहिरावत ।।२५९।।

श्रीमुख यौं न बखान सके वृषभान-सुता जू को रूप उजारौ।
है रसखानि तू ज्ञान सँभारत नैन निहार जु रीझनहारौ।
चारु सिंदूर को लाल रसाल लसै ब्रजबाल कौ भाल टिकारौ।
गोद में मानो बिराजतु है घनश्याम के सारे कौ सारे कौ सारौ ।।२६०।।

पाठांतर -- १. यावत।
***शब्दार्थ**—गुंज=घुंघची।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोरठा

प्रीतम नन्द किशोर, जब दिन तें नैननि लग्यौ।
मन पावन चितचोर, पलक ओट नहिं सहि सकौं ॥२६१॥

दोहा

बिमल रसल रसखान मिलि, भई सकल रसखान।
सोई नव रसखान को, चित चातक रसखान ॥२६२॥

सरस नेह लवलीन नव, द्वै सुजान रसखानि।
ताके आस बिसास सों, पगे प्रान रस पानि ॥२६३॥

कहा करै रसखान को, कोऊ चुगुल लबार।
जो पै राखनहार है, माखन चाखनहार ॥२६४॥

बंक बिलोकनि हँसनि मुरि, मधुर बैन रसखानि।
मिले रसिक रसराज दोउ, हरखि हिए रसखानि ॥२६५॥

या छवि पै रसखान अब, वारौं कोटि मनोज।
जाकी उपमा कविन नहिं, पाइ रहे कहुँ खोज ॥२६६॥

नैन दलालनि चौहटें, मन मानिक पिय हाथ।
रसखाँ ढोल बजाइके, बेच्यौ हिय जिय साथ ॥२६७॥

112642

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दानलीला

सवैया

आवत हौ रस के चसके* तुम जानत हौ रस होत कहा हो।
नैसुक* वै रस भीजन दैहौ दिना दस के अलबेले लला हो।
अन्त वही दिन आवेंगे झूमि गुवालिन ही के जु संग सखा हो।
ल्यौगे कहा इन बातन तें घर जाव लला अब ही लरका* हो ॥१॥

आई हौ आज नई ब्रज में कछु नैन नचाइ कें रार मचैहौ।
बानति हौ हमहीं छलि कै दधि बेचन जाव सो जान न पैहौ।
लैहौं चुकाइ सबै तुम सों रसखानि भले मन मैं पछतैहौ।
जो तुम होहु बड़े घर की अइलात कहा हौ जगात न दैहौ ॥२॥

सुनिकै यह बात हियें गुनि कै तब बोलि उठि बृषभान-लली*।
कहौ कान्ह अजान भए बन में कहूँ माँगत दान कि छेकि गली।
मग आइ कै जाइ रिसाइ कहा तुम एकऊ बात कही न भली।
हम हैं बृषभानपुरा की लली अब गोरस* बेचन जात चली ॥३॥

एरी कहा बृषभानुपुरा की तौ दान दियें बिन जान न पैहौ।
जौ दधि-माखन देव जू चाखन झूमत लाखन या मग ऐहौ।
नाहिं तौ जो रस सो रस लैहौ जु गोरस बेचन फेरि न जैहौ।
नाहक नारि तू रारि बढ़ावति गारि दियें फिरि आपहि दैहौ ॥४॥

***शब्दार्थ**—चसके=लोभ से। नैसुक=थोड़ा सा। लरका=अबोध। बृषभान-लली=राधा। गोरस=दूध-दही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त

गारी के देवैया बनवारी तुम कहौ कौन
हम तौं बृषभान की कुमारी सब जानो है।
जोर तौ करौंगे जाइ जासों हरि पार पाइ
भुरही तें* आज मो सों कैसो हठ ठानो है।
बूझि देखौ मन माहिं अरुझत* मग जात
बूझिहौ निदान कान्ह जौन कहो मानो है।
मेरे जान कोऊ मीरखान* आवै दही छीनै
तू तो है अहीर मोहिं नाहिं पहिचानो है ।।५।।

तोहूँ पहचानौं बृषभान हूँ को जानौं नेकु
काहू की न शंका मानौं हौं अहीर ऐसो हौं।
मीरन को मारि मान तोरिहों गुमान लैहों
आज तोसों दान लैहों देखियै जु जैसो हौं।
फोरिहों मटूकी* माट* लै दही करौंगो लूट
जैहो कोने सु तौ घाट बाट रोके बैसौ हौं।
कहा कहौं राधे तोहिं अजहूँ न चीन्है* मोहिं
मेरी ओर देखि नेकु दानी कान्ह कैसो हौं ।।६।।

जोहौं मैं तिहारी ओर नन्दगाँव के किसोर
माखन के चोर तुम गोकुल के बासी हौ।
जसुदा तिहारी माइ ऊखल सों बाँधो जाइ
दानी पै कहाए आइ भए कामरासी हौ।
कंस सों कहौंगी जाइ माँगिहौं तुमैं धराइ
रहौगे कहाँ छिपाइ जो बड़े मवासी हौ।
गोरस को दान हम आजहू न सुने काम
काहे लाल हम सों करत रोज रासी हौ ।।७।।

***शब्दार्थ**—भुरही तें=प्रातःकाल से ही। अरुझत=झगड़ते हो। मीरखान=उच्च अधिकारी। मटूकी=मटकी। माट=घड़ा। चीन्है=पहिचानना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दान पै न कान सुने लैहों सो गुमान भंजि*
हासी पर हासी परहासी आज करौंगो ।
जेती तुम ग्वालिन तितेक सब रोकि राखौं
जमुना की ओटि पैं जु सबै काम सरौंगो ।
जाकों तूँ कहति कंस ताहि को करौं बिधंस
हौं तौ जदुबंस बीर काहू सों न डरौंगो ।
भूषन उतारि चीर फारि चीर डारि दैहौं
नन्द की दुहाई खात टेक सों* न टरौंगो ॥८॥

नन्द की न दासी हम जातिहू मैं नाहीं कम
एक गाँव बसौ स्याम भोर भए बादी* हो ।
जमुना के तीर तुम चीर हू चुराइ रहौ
ताहूं की न लाज आई ओर के फसादी* हो ।
रोकत हौ टोकत हौ बाट माहि साट खाह*
माट फोरि चाटौ दही यही गुन आंदी* हो ।
जौ कहूँ बैठारिहौ न पारिहौ रुआब माहि
नोन की न गोन लीं है आदी हूँ न लादी हो ॥९॥

मेरो को करै नियाब* हौं तो तीनि लोक राव*
हमै घेरौ माँटी चाव दाँव भलो पायो है ।
बृन्दावन कुंज माँह कदम की छाँह चलौ
अंक भरि भेंटि लैहौं जैसो मन भायो है ।

---

*शब्दार्थ—भंजि=चूर्ण करके । टेक सों=प्रण से । बादी=झगड़ालू । फसादी=झगड़ा करने वाला । साट खाह=दूसरों का धन लूटना । आदी=अभ्यस्त । नियाव=न्याय । राव=राजा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हीरा मनि मानिक की काँच और पोतिन की
मोतिन की गात की जगात हौं लगायौ है।
गोरस तौ ढेर ढेर खाहु पीयौ बेर बेर
देखहु सलोनो रूप दानी कान्ह आयो है ॥१०॥

नौ लख गाय सुनी हम नन्द के तापर दूध दही न अघाने।
माँगत भीख फिरौ बन ही बन झूठि ही बातन के पन पाने।
और की नारिन के मुख जोवत लाज गहौ कछु होहु सयाने।
जाहु भले जु चले घर जाहु चले बस जाउ वृन्दावन जाने ॥११॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्फुट पद

तू ऐसी चतुराई ठानै, काहे को निकसत या गैल ।
गैल कहा तेरे बाबा की, हम निकसी का पहिल पहल ।
यह पैंड़ों सबहिंन चलिबे को, काहे को तू रोकत छैल ?
रसखान के प्रभु सूधो चलि जा, देहुँ उरहनौ* नंद महल ।।१।।

गारी खायगौ अरे गँवार ?
ऐसी कौन सिखाई तोहे, करत आप पराई नार ?
जा जा गोरस लेहु पिवैया, कौन है तू मग रोकनहार ?
एती बरजोरी* ना कीजै, मोहन सौंह दई सत बार ।
खीजि मटुकिया झटकि सुपटकी, गोरस बहि-बहि चल्यौ पनार*।
रसखान के प्रभु आज जान दैं, कल आऊँगी यहै करार ।।२।।

वाही दिनवारौ बानक बनि आयौ सखि आज ।
गावत तेरी रीझ भावतौ, संग लिये सुघर* समाज ।
सासु ननद की कानि करौ जनि*, उठ किन खेलौ फाग ।
अँखियाँ सखियाँ सुफल करौ किन, इन नैनन के भाग ।।
कान परी जब तान मोहिनी, तबहुँ तजी कुल कानि ।।
इतरु हंसी बृषभान-नंदिनी, उतरु हँसे रसखानि ।।३।।

***शब्दार्थ**—उरहनौ=उपालम्भ । बरजोरी=छीना-झपटी । पनार=पनाला । सुघर=सुन्दर । जनि=नहीं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज होरी रे मोहन होरी ।[1]
कालि हमारे आँगन गारी, दे आयौ सो को री ॥
अबकी दुरि* बैठे मैया ढिग, निकसो कुंज बिहारी ।
उमँगि उमँगि आई गोकुल की, सकल मही धनधारी ।
जब ललना ललकारि निकासे, रूप सुधा की प्यारी ।
लिपटि गई घनस्याम लाल सों, चमक चमक चपला* री ।
काजर देउ जु परि भरुवा* के, सबै देहु मिलि गारी ।
कहि रसखान एक गारी पै, सौ आदर बलिहारी ॥४॥

मैं कैसे निकसों मोहन खेलै फाग ।
मेरे सँग की सब गयीं, मोहि प्रगट्यौ अनुराग ॥
एक रैनि सुपनो भयौ, नन्द-नन्दन मिल्यौ आइ ।
मैं सकुचन घूँघट कर्‌यौ (उन) भुज भेरी लपटाइ ॥
अपनौ रस मो कों दयौ, मेरो लीनो घूँटि ।
बैरिन पलकैं खुल गयीं, (मेरी) गई आस सब टूटि ।
फिरि मैं बहुतेरी करी, नेकु न लागी आँखि ।
पलक-मूँदि परिचौ* लियौ, (मैं) जाम* एक लौं राखि ।
मेरे ता दिन ह्वै गयौ, होरी डाँड़ों रोपि* ।
सास ननद देखन गई, मोहि घर बासौ सौंपि ॥
सास उसासन भारुई ननद खरी अनखाय* ।
देबर डग धरिबो गनै, (मेरो) बोलत नाहु रिसाय ॥
तिखने चढ़ि ठाड़ी रहूँ, लैन करूँ कनहेर ।
राति द्यौस हौंसे रहे, का मुरली की टेर ॥

पाठांतर—१. मोहन हो हो हो हो होरी ।
*शब्दार्थ—दुरि = छिपकर । चपला = बिजली । भरुवा = भड़ुवा । परिचौ = परिचय । जाम = काल, प्रहर । डाँड़ों रोपि = डंडा गाड़ दिया । अनखाय = आलस करके, क्रोधित होकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों करि मन धीरज धरूँ, उठति अतिहि अकुलाय।
कठिन हियौ फाटै नहीं, तिल भर दुख न समाय।।
ऐसी मन में आवई छाँड़ि लाज कुल कानि।
जाय मिलो बृज ईस सों, रति नायक रसखानि।।५।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमवाटिका

दोहा

प्रेम-अयनि* श्रीराधिका, प्रेम-बरन नँदनंद।
'प्रेमबाटिका के दोऊ, माली-मालिन-द्वन्द्व ।।१।।

प्रेम-प्रेम सोउ कहत, प्रेम न जानत कोय।
जो जन जानै प्रेम तो, मरै जगत क्यों रोय ।।२।।

प्रेम अगम अनुपम अमित, सागर सरिस बखान।
जो आवत एहि ढिग, बहुरि, जात नाहिं रसखान ।।३।।

प्रेम-बारुनी* छानिकै, बरुन भए जलधीस।
प्रेमहिं तें बिष पान करि, पूजे जात गिरीस ।।४।।

प्रेम रूप दर्पन अहो, रचै अजूबो खेल।
यामें अपनो रूप कछु, लखि परिहै अनमेल ।।५।।

कमलतंतु सों छीन अरु, कठिन खड़ग की धार।
अति सूधो टेढ़ो बहुरि, प्रेमपंथ अनिवार ।।६।।

लोक-वेद-मरजाद सब, लाज, काज सन्देह।
देत बहाए प्रेम करि, विधि-निषेध को नेह ।।७।।

कबहुँ न जा पथ भ्रम-तिमिर, रहै सदा सुखचंद।
दिन दिन वाढ़त ही रहै, होत कबहुँ नहिं मंद ।।८।।

***शब्दार्थ**—प्रेम-अयनि = प्रेम का घर, प्रेम का भंडार। प्रेम बारुनी = प्रेम-मदिरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भले बृथा करि पचि मरौ, ज्ञान-गरूर बढ़ाय।
बिना प्रेम फीको सबै, कोटिन किए उपाय ।।९।।

श्रुति, पुरान, आगम, स्मृतिहि, प्रेम सबहिं को सार।
प्रेम बिना नहिं उपज हिय, प्रेम-बीज अँकुवार ।।१०।।

आनँद-अनुभव होत नहिं, बिना प्रेम जग जान।
कै वह विषयानन्द, कै ब्रह्मानंद बखान ।।११।।

ज्ञान, कर्मऽरु, उपासना, सब अहमिति को मूल।
दृढ़ निश्चय नहि होत-बिन, किए प्रेम अनुकूल ।।१२।।

शास्त्रन पढ़ि पंडित भए, कै मौलबी कुरान।
जुए प्रेम जान्यों नहीं किहा, ।कयो रसखान ।।१३।।

काम, क्रोध, मद, मोह, भय, लोभ, द्रोह, मात्सर्य।
इन सबही तें प्रेम है, परे कहत मुनिवर्य ।।१४।।

बिनु गुन जोबन रूप धन, बिनु स्वारथ हित जानि।
शुद्ध, कामना तें रहित, प्रेम सकल-रसखानि ।।१५।।

अति सूछम कोमल अतिहि, अति पतरो अति दूर।
प्रेम कठिन सबतें सदा, नित इकरस भरपूर ।।१६।।

जग मैं सब जायौ परै, अरु सब कहैं कहाय।
पै जगदीसरु प्रेम यह, दोऊ अकथ लखाय ।।१७।।

जेहि बिनु जाने कछुहि नहिं, जान्यों जात बिसेस।
सोइ प्रेम, जेहि जानिकै, रहि न जात कछु सेस ।।१८।।

दंपतिसुख अरु विषयरस, पूजा, निष्ठा, ध्यान।
इनतें परे, बखानिए, शुद्ध प्रेम रसखान ।।१९।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मित्र कलत्र, सुबन्धु, सुत, इनमें, सहज सनेह।
शुद्ध प्रेम इनमें नहीं, अकथ कथा सबिसेह ॥२०॥

इकअंगी बिनु कारनहिं, इकरस सदा समान।
गनै प्रियहि सर्वस्व जो, सोई प्रेम प्रमान ॥२१॥

डरै सदा, चाहै न कछु, सहै सबै जो होय।
रहै एक रस चाहकै, म प्रे वखानौ साय ॥२२॥

प्रेम प्रेम सब कोउ कहै, कठिन प्रेम कौ फाँस।
प्रान तरफि निकरै नहीं, केवल चलत उसाँस ॥२३॥

प्रेम हरी को रूप है, त्यों हरि प्रेमसरूप।
एक होई द्वै यों लसैं, ज्यौं सूरज अरु धूप ॥२४॥

ज्ञान, ध्यान, विद्या, मती, मत, बिश्वास, बिवेक।
बिना प्रेम सब धूर हैं, अग जग एक अनेक ॥२५॥

प्रेमफाँस में फँसि मरै, सोई जिए सदाहि।
प्रेममरम जाने बिना, मरि कोउ जीवत नाहिं ॥२६॥

जग मैं सबतें अधिक अति, ममता तनहिं लखाय।
पै या तनहूँ तें अधिक, प्यारो प्रेम कहाय ॥२७॥

जेहि पाए बैकुंठ अरु, हरिहूँ की नहि चाहि।
सोइ अलौकिक, सुद्ध, सुभ, सरस, सुप्रेम कहाहि ॥२८॥

कोउ याहि फाँसी कहत, कोउ कहत तरवार।
नेजा, भाला, तीर, कोउ कहत अनोखी ढार ॥२९॥

पै मिठास या मार के, रोम रोम भरपूर।
मरत जियै, झुकतो थिरैं, बनै सु चकनाचूर ॥३०॥

पै एतो हूँ हम सुन्यौ, प्रेम अजूबो खेल।
जाँबाजी बाजी जहाँ, दिल का दिल से मेल ॥३१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिर काटो, छेदो हियो, टूक टूक करि देहु।
पै याके बदले बिहँसि, वाह वाह ही लेहु ।।३२।।

अकथ-कहानी प्रेम की, जानत लैली खूब।
दो तनहूँ जहँ एक भे, मन मिलाइ महबूब ।।३३।।

दो मन इक होते सुन्यो, पै वह प्रेम न आहि।
होइ जबै द्वै तनहुँ इक, सोई प्रेम कहाहि ।।३४।।

याही तें सब मुक्ति तें, लही बड़ाई प्रेम।
प्रेम भए, नस जाहिं सब, बँधे जगत के नेम ।।३५।।

हरि के सब आधीन, पै हरी प्रेम-आधीन।
याही तें हरि आपुहीं, याहि बड़प्पन दीन ।।३६।।

वेद-मूल सब धर्म, यह, कहै सबै श्रुतिसार।
परमधर्म है ताहु तें, प्रेम एक अनिवार ।।३७।।

जदपि जसोदानंद अरु, ग्वालबाल सब धन्य।
पै या जग में प्रेम को, गोपी भईं अनन्य ।।३८।।

वा रस की कछु माधुरी, ऊधो लही सराहि।
पावै बहुरि मिठास अस, अब दूजो को आहि ।।३९।।

स्रवन, कीरतन, दरसनहिं, जो उपजत सोइ प्रेम।
शुद्धाशुद्ध बिभेद तें, द्वै विध ताके नेम ।।४०।।

स्वारथमूल अशुद्ध त्यों, शुद्ध स्वभाव नुकूल।
नारदादि प्रस्तार करि, कियो जाहि को तूल ।।४१।।

रसमय, स्वाभाविक, बिना स्वारथ, अचल, महान।
सदा एकरस, शुद्ध सोइ, प्रेम अहै रसखान ।।४२

जातें उपजत प्रेम सोइ, बीज कहावत प्रेम।
जामें उपजत प्रेम सोइ, क्षेत्र कहावत प्रेम ।।४३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जातें पनपत, बढ़त, अरु, फूलत फलंत महान।
सो सब प्रेमहिं प्रेम यह, कहत रसिक रसखान ।।४४।।

वही बीज, अंकुर वही, सेक वही आधार।
डाल पात फल फूल सब, वही प्रेम सुखसार ।।४५।।

जो, जातें, जामें, बहुरि, जा हित कहियत बेस।
सो सब, प्रेमहिं प्रेम है, जग रसखान असेस ।।४६।।

कारजकारन-रूप यह, प्रेम अहै रसखान।
कर्ता, कर्म, क्रिया, करण, आपहि प्रेम बखान ।।४७।।

देखि गदर हित साहबी, दिल्ली नगर मसान।
छिनहिं बादसा-बंस की, ठसक छोरि रसखान ।।४८।।

प्रेमनिकेतन श्रीबनहिं, आइ गोबर्धन-धाम।
लह्यो सरन चितचाहि कै, जुगलसरूप ललाम ।।४९।।

तोरि मानिनी तें हियो, फोरि मोहिनी-मान।
प्रेमदेव की छविहि लखि, भए मियाँ रसखान ।।५०।।

बिधु सागर रस इंदु सुभ, बरस सरस रसखानि।
'प्रेमबाटिका' रचि रुचिर, चिर हिय हरख बखानि ।।५१।।

अरपी श्रीहरिचरनजुग पदुमपराग निहार।
बिचरहिं यामें रसिकवर, मधुकर-निकर अपार ।।५२।।

शेष पूरन

राधामाधव सखिन संग बिहरत कुंज कुटीर।
रसिकराज रसखानि जहँ कूजत कोइल कीर ।।५३।।

●●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुजान-रसखान पृष्ठ

अँखियाँ अँखियाँ सों सकाय मिलाय हिलाय रिझाय हियो भरिबो २५
अंग ही अंग जराव जरी अरु सीस बनी पगिया जरतारी ५१
अंगनि अंग मिलाय दोऊ रसखानि रहे लपटे तरु छाँहीं २४
अंजन मंजन त्यागौ अली अँग धारि भभूत करौं अनुरागै ७१
अंत तें न आयो याही गाँवरे को जायो ४४
अति लोक की लाज समूह मैं घेरिकै राखि थकी भव संकट सों २८
अति सुन्दर री ब्रजराजकुमार महामृदु बोलनि बोलत है ५६
अति लाल गुलालहु फूल तैं फूल अली अलि कुंतल राजत हैं ७२
अधर लगाय रस प्याय बाँसुरी वजाय ३१
अवहीं गई खिरक गाइ के दुहाइबे कों ३६
अरी अनोखी बाम, तूँ आई गौने नई ३०
अलवेली बिलोकनि बोलनि औ अलवेलियै लोल निहारन की ५७
आई खेलि होरी ब्रजगोरी वा किसोरी संग ४७
आई सबै ब्रज गोप लली ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने ६३
आज महूँ दधि वेचन जात ही मोहन रोकि लियो मग आयो ४०
आज गई ब्रजराज के मंदिर सुंदर स्याम बिलोक्यौ री माई ५६
आज अचानक राधिका रूपनिधानि सों भेंट भई बन माहीं ३६
आज भटू मुरली बरु के तर नंद के साँवरे रास रच्यो री ३६
आजु सखी नँदनंदन री तकि ठाढ़ो है कुंजन की परछाहीं २८
आजु भटू इक गोपबधू भई बावरी नेकु न अंग सम्हारै ३३
आजु गई हुती भोरही हौं रसखानि रई कहि नंद के भौंनहि २३
आजु भटू इक गोपकुमार ने रास रच्यो इस गोप के द्वारै ३३
आजु सँवारति नेक भटू तन मंद करी रति की दुति लाजै ७१
आजु री नंदलला निकस्यो तुलसी वन तें बनकें मुसकातो ३४
आपनो सो ढोंटा हम सवहीं को जानत हैं ४५
आ॰ कहा करि कै कहिए वृषभान लली सों लला दृग जोरत ६६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयो हुतो नियरें रसखानि कहा कहूँ तू न गई वह ठैंया २५
आली पगे जु रँगे रँग सांवरे मोहैं न आवत लालची नैना ३७
आली लला घन सों अति सुंदर तैसो लसै पियरो उपरैना ५६
आवत हैं वन तैं मनमोहन गोहन संग लसै ब्रज ग्वाला ५०
आवत लाल गुपाल लिए मग सूने मिली इक नार नवीनी ४७
औचक दृष्टि परे कहूँ कान्ह जू तासौं कहै ननदी अनुरागी ३८
इक ओर किरीट लसै दुसरी दिसि नागन के गन गाजत री ४८
उनहीं के सनेहन सानी रहैं उनहीं के जु नेह दिवानी रहैं २७
ए सजनी लोनो लला, लह्यो नन्द के गेह ३०
ए सजनी जब तें मैं सुनी मथुरा नगरी बरषा रितु आई ७०
ए सजनी मनमोहन नागर आगर दौर करी मन माहीं ५८
ए सजनी वह नंद को साँवरो या बन धेनु चराइ गयो है ३५
एक तैं एक लों काननि मैं रहै ढीठ सखा सब लीने कन्हाई २३
एक समै जमुना जल में सब मज्जन हेत नसीं ब्रज गोरी ५२
एक समै इक ग्वालनि कों ब्रज जीवन खेलत दृष्टि पर्यौ है ४६
एक समै मुरली धुनि मैं रसखानि लियो कहुँ नाम हमारो २२
एक सु तीरथ डोलत है इक वार हजार पुरान वके हैं ५६
एरी चतुर सुजान, भयो अजानहि जान कै ३०
एरी आजु कालिह सब लोक लाज त्यागि दोऊ ३२
कंचन मंदिर ऊँचे बनाइकै मानिक लाइ सदा झलकैयत ४२
कंचन के मंदिरनि दीठ ठहरात नाहिं ४३
कंस के क्रोध की फैल गई जबहीं ब्रजमंडल बीच पुकार-सी ४५
कंस कुढ्यौ सुनि बानी अकास की ज्यावनहारहिं मारन धायौ ५५
कंदब करीर तीर पूछत अधीर गोपी ७२
कल काननि कुंडल मोरपखा उर पै बनमाल बिराजति है २६
कहा करै रसखान को, कोऊ चुगुल लबार ७७
कहा कहूँ रतियाँ की कथा बतियाँ कहि आवत है न कछू री ४६
कहा रसखानि सुख संपति सुमार कहा ४३
कातिक क्वार के प्रात ही प्रात सरोज किते बिकसात निहारे ६०
कान्ह भए बस बाँसुरी के अब कौन सखी हमकों चहिहै २२
कान परे मृदु बैन मरू करि मौन रही पल आधिक साधे ६४
कानन दै अँगुरी रहिबो जबहीं मुरली धुनि मंद बजैहै ३२
काटे लटे की लटी लकुटी दुपटी मुफटी मोउ आधे कँधाही ५८
काह कहूँ सजनी संग की रजनी नित बीतै मुकुन्द को हेरी २२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कान्हि पर्‌यौ मुरली धुनि में रसखान जू कान । नाम हमारो ५३
काल्हि भटू मुरली धुनि में रसखानि लियौ कहूँ नाम हमारौ ६१
काहूँ सों माई कहा कहिए सहिए जु सोई रसखानि सहावैं ४१
काहू को माखन चाखि गयौ अरु काहू को दूध दही ढरकायौ ६१
काहे कूँ जाति जसोमति के गृह पोच भलो घर हूँ तो रई ही ६८
कीजै कहा जु पै लोग चबाव सदा करिबौ करिहैं ब्रजमारौ ७७
कुंजगली मैं अली निकसी तहाँ साँकरे ढोटा कियौ भटभेरो ६०
कुंजनि कुंजनि गुंज के पुंजनि मंजु लतानि सौं माल बनैवो ६२
केसरिया पट, केसरि खौर, बनौ गर गुंज को हार ढरारो ६५
कैधों रसखान रसकोस दृग प्यास जानि ६७
कसो मनोहर बानक मोहन सोहन सुन्दर काम ते आली ५८
को रिझवारिन कों रसखानि कहै मुकतानि सों माँग भरौंगी ४६
कोई है रास मैं नैसुक नाचि कै नाच नचाए किए सबको जिन ३६
कौन को लाल सलोनो सखी वही जाकी बड़ी अँखियाँ अनियारी २६
कौन ठगौरी भरी हरि आजु बजाई है बाँसुरिया रंग भीनी २३
कौन की नागरि रूपकी आगरि जात लिए सँग कौन की बेटी ६०
खंजन नैन फँसे पिंजरा छबि नाहि रहै थिर कैसेहूँ माई २७
खंजन मीन सरोजन को मृग को मद गंजन दीरघ नैना ५६
खेलतु फाग लख्यौ पिय प्यारी कों ता सुख की उपमा किहिं दीजै ६७
खेलिये फाग निसंक ह्वै आज मयंक मुखी कहे भाग हमारो ६६
खेलत फाग सुहाग भरी अनुरागिह लालन कों धरि कै २२
खेलै अलीजन के गन मैं उत प्रीतम प्यारे सों नेह नवीनो ६४
ग्वालन सँग जैबो बन ऐबौ सुगाइन सँग ४२
ग्वालिन द्वैक भुजान गहैं रसखानि कौं लाइ जसोमति पाहैं ६५
गुंज गरें सिर मोरपखा अरु चाल गयंद की मो मन भावै ५५
गावैं गुनी गनिका गन्धरब औ सारद सेस सबै गुन गावत २२
गोकुल को ग्वाल काल्हि चौमुँह की ग्वालिन सों ४८
गोकुल के बिछुरे को सखी दुख प्रान ते नेकु गयौ नहीं काढ़यौ ७०
गोकुल नाथ वियोग प्रलै जिमि गोपिन नन्द जसोमति जू पर ७०
गोरज बिराजै भाल लहलही बनमाल ३४
गोरस गाँव ही मैं बिचिबो नचिबो नहीं नन्द-मुखानल झारन ६६
घर हीं घर घेरु घना घहिरी घरिहाइनि आगें न साँस भरौं ७२
वह घेरनि धेनु अबेर सबेर न फेरन लाल लकुट्टन की ७३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंद सौं आनन मैन-मनोहर बैन मनोहर मोहत हौं मन ६१
चंदन खोर पै बिन्दु लगाय कै कुंजन तें निकस्यौ मुसकातौ ६२
चीर की चटक औ लटक नव कुंडल की ५२
छीर जो चाहत चीर गाहैं ए जू लेहु न केतक छीर अचैहौ ३६
छूट्यौ गृह काज लोक लाज मनमोहन कै ७१
जग कान्ह भये बस बाँसुरी के अब कौन सखी हमको चहिहै ५१
जमुना तट बीर गई जब तें तब तें जग के मन माँझ तहौं ६४
जल की न घट भरैं मग की न पग धरैं ५१
जाको लसै मुख चंद समान कमानी सी भौंह गुमान हरै ६८
जात हुती जमुना जल कों मन मोहन घेरि लियो मग आय कै ५२
जा दिन तें निरख्यो नँदनंदन कानि तजी घर बंधन छूट्यौ २६
जा दिन तें मुसिकानि चुभी उर ता दिन तें जु भई बनवारी २८
जा दिन तें वह नंद को छोहरो या बन धेनु चराइ गयो है ३२
जानत हीं न कछू हम ह्यां उन ह्वां पढि मंत्र कहा धौं दयो है ५३
जानै कहा हम मूढ़ सबै समुझी न तबै जबहीं बनि आई ४१
जाहु न कोऊ सखी जमुना जल रोकै खड़ो मग नंद को लाला ४८
जो कबहूँ मग पाँव न देति सुतौ हित लालन आपुन गौने ७४
जोहन नन्दकुमार कों, गई नन्द के गेह ३०
जो रसना रस ना बिलसै तेहि दुहु सदा निज नाम उचारन ४६
जोग सिखावत आवत है वह कौन कहावत को है कहाँ को ७१
डोरि लियौ मन मोरि लियौ चित जोरि लियौ हित तोरि कै तानन ६१
ता जसुदा कह्यो धेनु की ओट ढिंढोरत ताहि फिरैं हरि भूलैं ५६
तीरथ भीर में भूलि परी अली छूट गई नेकु धाय की बाँही ६३
तुम चाहो कहौ सो कहौ हम तौ नंदवारे के संग ठई सो ठई ६२
तू गरबाइ कहा झगरै रसखानि तेरे बस बावरो होसै ४६
तेरी गलीन में जा दिन तें निकसे मनमोहन गोधन गावत ३८
दृग दूने खिंचे रहैं कानन लौं लट आनन प लहराय रही ५०
दमकै रवि कुंडल दामिनी से धुरवा जिमि गोरज राजत है ५७
दानी भए नए माँगत दान सुनै जु पै कंस तौ बाँधिके जैहौ ४०
दूध दुह्यो सीरो पर्यो तातो न जमायो कर्यो ३१
दूर तें आइ दुरेहौं दिखाई अटा चढ़ जाइ कह्यी तहाँ बारी ४४
देख्यो रूप अपार, मोहन सुन्दर स्याम को २६
देखन कों सखी नैन भए न सने तन आवत गाइन पाछैं २६
देखत सेज बिछी ही अछी विष सौ भिदगी सगरे सगरे तन ७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखिकै रास महावन को इक गोपबधू कह्यौ एक बधू पर	५७
देखिहौं आँखिन सों पिय को अरु कानन सों उन बैन कों प्यारी	४६
देस बिदेस के देखे नरेसन रीझि की कोऊ न बूझ करैगो	४४
दोउ कानन कुंडल मोरपखा सिर सोहै दुकूल नयो चटकौ	२७
द्रौपदी औ गनिका गज गीध अजामिल सों कियो सो न निहारो	४४
धूर भरे अति शोभित स्याम जू तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी	२४
नंद को नन्दन है दुख कन्दन प्रेम के फन्दन बाँधि लई हौं	६३
नवरंग अनंग भरी छवि सों वह मूरत आँखि गड़ी ही रहै	५०
नागर छैलहि गोकुल मैं मग रोकत संग सखा ढिग तैहैं	४०
नैन लख्यो जब कुंजन तें बन तें निकस्यो अँटक्यो भटक्यो री	३०
नैन मनोहर बैन बजै सु सजै तन सोहतु पीत पटा है	७५
नैन दलालनि चौहटें, मन मानिक पिय हाथ	७७
नैननि बंकनि माल के बाननि झेलि सकै अस कौन नवेली	२६
प्यारी पै जाइ कितौ परि पाइ पची समझाइ सखी की सौं बैना	६४
प्यारी के चारु सिंगारु तरंगनि जाइ लगी रत्ति की दुति कूलनि	७५
प्रान वही जु रहैं रिझि वापर रूप वही जिहिं वाहि रिझायो	४२
प्रीतम नंद किसोर, जा दिन तें नैननि लग्यौ	७७
प्रेम कथानि की बात चलै चमकै चित चंचलता चिनगारी	६८
प्रेम मरोरि उठै तब हीं मन पाग मरोरनि में उरझावै	६६
प्रेम पगे जु रँगे रँग साँवरे मानैं मनायें न लालची नैना	५०
पहिले दधि लै गई गोकुल में चख चारि भए नट नागर पै	५४
पिय सों तुम मान कर्यौ कत नागरि आजु कहा किनहूँ सिख दीनी	६६
पूरब पुन्यनि तें चितई जिन ये अँखियाँ मुसकानि भरी जू	३५
फागुन लाग्यो सखी जब तें तब तें ब्रजमंडल धूम मच्यो है	४८
फूलत फूल सबै बन बागन बोलत मोर बसंत के आवत	६९
ब्याही अनब्याही ब्रजमाहीं सब चाही तासों	३६
ब्रज की बनिता सब घेरि कहैं तेरो ढारो बिगारो कहा कस री	६१
बृषभान के गेह दिवारी के द्यौस अहीर अहीरनि भीर भई	६५
ब्रह्म मैं ढूंढ्यो पुरानन गानन वेद रिचा सुनि चौगुने चायन	२६
बंक बिलोकनि हँसनि मुरि, मधुर बैन रसखानि	७७
बंक बिलोकनि है दुखमोचन दीरघ लोचन रंग भरे हैं	२८
बंसी बजावत आनि कढ़ो सो गली में अली कछू टोना सों डारैं	२३
बजी है बजी रसखानि बजी सुनिकै अब गोपकुमारि न जीहै	३१
बन बाग तड़ागनि कुंजगली अँखियाँ सुख पाइहैं देखि दई	६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनें कान कुंडल मोरपखा उर पै बनमाल विराजति है ७५
बाँकी कटाछ चितैबो सिख्यो बहुधा बरज्यो हित कै हितकारी ३५
बाँकी बिलोकनि रंगभरी रसखानि खरी मुसकानि सुहाई २६
बाँकी धरैं कलगी सिर ऊपर बाँसुरी तान कटैं रस बीर के ६०
बाँकी मरोर गही भृकुटीन लगी अँखियाँ तिरछान तिया की ७४
बाँकी बड़ी अँखियाँ बड़रारे कपोलनि बोलनि कोकिल वानी ५७
बागन काहे को जाओ पिया घर बैठे ही बाग लगाय दिखाऊँ २४
बागन में मुरली रसखान सुनि सुनिकै जिय रीझ पचैगो ६६
बात चलै चमकै दुति दीपत चंचित चंचलता चिनगारी ७४
वात सुनी न कहूँ हरि की न कहूँ हरि सों मुख बोल हँसी है ६५
बारहीं गोरस बेंचि री आजु तूँ माइ कै मूड़ चढ़ै कित मौड़ी २५
बासर तूँ जु कहूँ निकरै रबि को रथ माँझ अकास अरैरी ६७
बिमल सरल रसखान मिलि भई सकल रसखान ७७
बिरहा की जु आँच लगी तन में तब जाय परी जमुना जल में ६६
बिहरैं पिय प्यारी सनेह सने छहरैं चुनरी के झना झहरैं ४०
बेनु बजावत गोधन गावत ग्वालन के सँग गोमधि आयो ३७
बैद की औषधि खाइ कछू न करवह संजम री सुनि मोसें ४६
बैन वही उनको गुन गाइ औ कान वही उन बैन सों सानी ४६
बैरिन तो बरजी न रहै अबहीं घर दाहर बैर बढ़ैगो ३६
भई बाबरी ढूँढ़ति वाहि तिया अरी लाल ही लाल भयौ कहा तेरो ६६
भटू सुन्दर स्याम सिरोमनि मोहन जोहन में चित चोरत है ५६
भेती जु पै कुबरी ह्याँ सखी भरी लातन मूका बकोटती लेती ७१
भौंह भरी बरुनी सुथरी अतिसै अधरानि रँगी रँगरातौ २५
मंजु मनोहर मूरि लखै तबहीं सबहीं पतहीं तज दीनी २४
मकराकृत कुंडल गुंज की माल वे लाल लसैं पग पाँवरिया ३३
मग हेरत धूँधरे नैन भए रसना रट वा गुन गावन की ७१
मन लीनो प्यारे चितै, पै छटाँक नहिं देत ३०
मान की औधी है आधी घरी अरु जौ रसखान डरैं डरके डर ५४
मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन २१
मारग रोकि रह्यौ रसखानि के कान परी झनकर नई है ६३
मिलि खेलत फाग बढ़्यौ अनुराग सुराग सनी सुख की रमकैं ६७
मेरी सुनो मति आइ अली उहाँ जौनी गाली हरि गावत हैं ३५
मेरो सुभाव चितैबे कों माइरो लाल निहारि कै बंसी बजाई ३८
मैं रसखान की खेलनि जीति कै मालती मालती माल लई री ६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैन मनोहर बैन बड़े सखि सैननहीं मन मेरो हर्‍यौ है ७३
मैन मनोहर री दुखदंदन हैं सुखकंदन नंद कौ नन्दा ७५
मैन मनोहर बैन बजै सुसजे तन सोहत पीत पटा है २५
मो मन मानिक लै गयो, चितै चोर नंदनंद २६
मोर के चंदन मौर बन्यौ दिन दूलह है अली नंद को नन्दन ३८
मोरपखा सिर ऊपर राखिहौं गुंज की माल गरें पहिरौंगी २१
मोरपखा मुरली बनमाल लख्यौ हिय मैं हियरा उमह्यौरी ३८
मोरपखा सिर काननि कुंडल कुंतल सो छवि गंडन छाई ७५
मोरपखा धरैं चारिक चारु बिराजत कोटि अमेठिनि फेंटौ ७६
मो मन मोहन सों मिलि कै सबहीं मुसकानि दिखाय दई ३७
मो हित तो हित है रसखान छपाकर जानहिं जान अजानहिं ६६
मोतिन माल बनी लटकैं लटकी लट औ लट घूंघरवारी ७३
मोर किरीट नवीन लसै मकराकृत कुण्डल लोल की डोरनि ५८
मोहन छवि रसखानि लखि, अब दृग अपने नाहिं २६
मोहन रूप छकी बन डोलति घूमति री तजि लाज बिचारैं ५६
मोहिनी मोहन सों रसखानि अचानक भेंट भई बन माहीं ५६
मोहन सों अटक्यौ मनु री कल जाते परै सोइ क्यौं न बतावै ६६
मोहन के मन की सब जानत जोहन के मग मोहि लियो मन ७४
मोहन के मन भाइ गयो इक भाइसो ग्वालिन गोधन गायो ३६
मोहन की मुरली सुनिकै वह बौरी ह्वै आनि अटा चढ़ि झाँकी ३६
मोहन जू के वियोग की ताप मलीन महाद्युति देह तिया की ५२
यह गोधन गावत गोधन में जब ते यह मारग ह्वै निकस्यो ५१
यह देख धतूरे के पात चबात औ गात सों धूरि लगावत हैं ४६
या छवि पै रसखान अब, बारौं कोटि मनोज ७७
या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहुँ पुर को तजि डारौं २१
रंग भर्‍यो मुसकात लला निकस्यो कल कुंजनि तें सुखदाई ३२
रसखानि यहै सुनिकै गुनिकै हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयो है ४१
रसखानि सुन्यो है वियोग के ताप मलीन महादुति देह तिया की ४२
लंगर छैलहि गोकुल मैं मग रोकत संग सखा ढिग तै हैं ६०
लाज के लेप चढ़ाइ कै अंग पची सब सीख को मंत्र सुनाइ कै ४१
लाड़िली लाल लसैं लखिये अति पुञ्जन कुञ्जनि में छवि गाढ़ी ५२
लाल की आज छठी ब्रज लोग अनंदित नंद बड़्यौ अन्हवावत ७७
लाल लसै पगिया सबके सबके पट कोटि सुगन्धनि भीने ५७
लाय समाधि रहे बरम्हादिक जोगी भये पर अन्त न पावैं ५४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीने अबीर भरे पिचका रसखान खरो बहु भाय भरो जू ४७
लोक की लाज तजी तबहीं जब देख्यो सखी ब्रजचन्द सलोनो २३
लोग कहैं ब्रज के रसखानि अनंदित नंद जसोमति जू पर ४५
वह गोधन गावत गोधन मैं जब तें इहि मारग ह्वै निकस्यौ ३४
वह देखि धतूरे के पात चबात औ गात सौं धूरि लगावतु है. ७६
वह साँवरों नंद को छैल अली अब तो अति ही इतरान लग्यौ ५३
वह सोई हुती परजंक लली लला लीनो सु आय भुजा भरिकै ४०
वा मुख की मुसकानि भटू अँखियानि तें नेकु टरै नहिं टारी ६०
वा मुसकान पै प्रान दियो जिय जान दियो वह तान पै प्यारी ३३
वारति जा पर ज्यों न थकै चहुँ ओर जिती नृपती धरती है ६८
वा रसखानि गुनौं सुनि कै हियरा सत टूक ह्वै फाटि गयौ है ७०
वेई ब्रह्म ब्रह्मा जाहि सेवत हैं रैन दिन ५५
श्री मुख यौं न बखान सके वृषभानसुता जू को रूप उजारौ ७६
श्री वृषभान की छान धुजा अटकी लरकान तें आन लई री ६३
संकर से सुर जाहिं भजैं चतुरानन ध्यान में धर्म बढ़ावैं २७
संभु धरैं ध्यान जाको जपत जहान सब ५५
स्याम सघन घन घेरि कै, रस बरस्यो रसखानि ३०
सखि गोधन गावत हो इक ग्वार लख्यौ वहि डार गहे बटकी ५६
सखियाँ मनुहारि कै हारि रही भृकुटी को न छोर लली निचयौ ६४
समझी न कछू अजहूँ हरि सों ब्रज नैन नचाइ-नचाइ हँसै ३५
सब धीरज क्यों न धरौं सजनी पिय तो तुम सों अनुरागेइगौ ६२
सरस नेह लवलीन नव, द्वै सुजान रसखानि ७७
साँझ समैं जिहिं देखत ही तिहि पेखन कौ मन यौं ललकै री ७३
सार की सारी सो भारी लगै धरिबे कहँ सीस बघंबर पैया ४५
सास की सासन ही चलिबौ चलियै निसि द्यौस चलावै जिही ढँग ७३
सुन्दर स्याम सिरोमनि मोहन जोहन मैं चित चोरत है २६
सुधि होत बिदा नर नारिनु की दुति दीठि परे बहियाँ फर की ५८
सुन री पिय मोहन की बतियाँ अति ढीठ भयौ नहिं कानि करै २४
सुनिये सब की कहिये न कछू रहिये इमि या भव डागर में ५४
सेस सुरेस दिनेस गनेस प्रजेस धनेस महेस मनाओ ४६
सेस गनेस महेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं २७
सोई है रास में नैसुक नाचिकैं नाच नचाये कितै सबको जिन ५०
सोई हुती पिय की छतियां लगि बाल प्रवीन महामुद मानै ४७
सोहत है चँदवा सिर मोर के जैसियै सुन्दर पाग कसी है २५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हेरत बारहीं बार उतै तुव बाबरी बाल कहाधौं करैगी ३२
है छल की अप्रतीत की मूरति मोद बढ़ावै विनोद कलाम में ५६
होती जु पै कुबरी ह्याँ सखी भरि लातन मूका बकोटती केती ४१

दानलीला

आई हौ आज नई ब्रज में कछु नैन नचाइय कै रार मचैहौ ७६
आवत हौ रस के चसके तुम जानत हौ रस होत कहा हो ७६
एरी कहा वृषभानुपुरा की तौ दान दियें बिन जान न पैहौ ७६
गारी के देवैया बनवारी तुम कहौ कौन ८०
जोहौं मैं तिहारी ओर नन्दगाँव के किसोर ८०
तोहूँ पहचानौं बृषभान हूँ को जानौं नेकु ८०
दान दै न कान सुने लैहों सो गुमान भंजि ८१
नन्द की दासी हम जातिहू मैं नाहीं कम ८१
नौ लख गाय सुनी हम नन्द के तापर दूध दही न अघाने ८२
मेरो को करै नियाब हौं तो नीति लोक राव ८१
सुनिकै यह बात हियें गुनि कै तब बोलि उठी बृषभान लली ७६

स्फुट पद

आज होरी रे मोहन होरी ८४
गारी खायगौ अरे गँवार ८३
तू ऐसी चतुराई ठानै, काहे को निकसत या गैल ८३
मैं कैसे निकसों मोहन खेलै फाग ८४
वाही दिनवारौ बानक बनि आयौ सखि आज ८३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम वाटिका

अकथ-कहानी प्रेम की ९०
अति सूछम कोमल अतिहि ८८
अरपी श्री हरिचरन जुग ९१
आनँद अनुभव होत नहिं ८८
इक अंगी बिनु कारनहिं ८६
कबहुँ न जा पथ भ्रम तिमिर ८७
कमल तन्तु सों छीन अरु ८७
काम, क्रोध, मद, मोह, भय ८८
कारज कारन-रूप यह ९१
कोउ याहि फाँसी कहत ८६
जग मैं सब जायौ परै ८८
जग मैं सब तें अधिक अति ८६
जदपि जसोदानंद अरु ९०
जातें पनपत, बढ़त, अरु ९१
जातें उपजत प्रेम सोइ ९०
जेहि बिनु जाने कछुहि नहिं ८८
जेहि पाए बैंकुठ अरु ८६
जो, जातें, जामें, बहुरि ९१
डरै सदा, चाहै न कछु ८६
तोरि मानिनी तें हियो ९१
दंपति सुख अरु विषय रस ८८
देखि गदर हित साहबी ९१
दो मन इक होते सुन्यो ९०
प्रेम-अयनि श्री राधिका ८७
प्रेम अगम अनुपम अमित ८७
प्रेम-प्रेम सोउ कहत ८७
प्रेम बारुनी छानि कै ८७
प्रेम रूप दर्पन अहो ८७
प्रेम-प्रेम सब कोउ कहै ८६
प्रेम हरि को रूप है ८६
प्रेम फाँस में फँसि मरै ८६
प्रेमनिकेतन श्रीबनहिं ९१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पै मिठास या मार के	८६
पै एतो हूँ हम सुन्यौ	८६
बिधु सागर रस इन्दु सुभ	९१
बिनु गुन जोबन रूप धन	८८
भले वृथा करि पचि मरौ	८८
मित्र, कलत्र, सुबन्धु, सुत	८६
याही तें सब मुक्ति तें	९०
रसमय, स्वाभाविक बिना	९०
राधामाधव सखिन संग	९१
लोक-वेद-मरजाद सब	८७
वही बीज, अंकुर वही	९१
वा रस की कछु माधुरी	९०
वेद-मूल सब धर्म	९०
शास्त्रन पढ़ि पण्डित भए	८८
श्रुति, पुरान, आगम, स्मृतिहि	८८
स्रवन, कीरतन, दरसर्नाहि	९०
स्वारथ मूल अशुद्ध त्यों	९०
सिर काटो, छेदो हियो	९०
हरि के सब आधीन पै	९०
ज्ञान, कर्म डरु उपासना	८८
ज्ञान, ध्यान, विद्या, मती	८६

●●●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट दो

जीवन-वृत्त

प्रेम-पंथ के धीर पथिक मध्ययुगीन कृष्ण-भक्त कवियों में अग्रगण्य सैयद इब्राहीम 'रसखान' का जीवन-वृत्त अन्यान्य किंवचन्तियों, जनश्रुतियों से तमसाच्छादित है। यद्यपि उनकी जन्म-मृत्यु, लीला-विहार संबंधी तिथियों के निर्धारण में विद्वानों में मतैक्य नहीं है, तथापि अन्तःसाक्ष्य एवं बहिःसाक्ष्य के आधार पर रसखान के जीवन को दृढ़तापूर्वक रेखांकित किया जा सकता है।

रसखान के जीवन की घटनाओं की प्रकाशित करने वाले बहिःसाक्ष्य के रूप में साम्प्रदायिक साहित्य, वार्ता साहित्य, इतिहास ग्रंथ और आलोचनात्मक प्रबंध अधिगत हैं। अंतःसाक्ष्य के अंतर्गत 'सुजान रसखान', 'प्रेम-वाटिका' आदि रचनाओं में उनके स्व-विषयक कथन हैं।

वस्तुतः कवि के प्रामाणिक जीवन-चरित के रेखांकन के लिए यह आवश्यक है कि अंतःसाक्ष्य एवं बहि-साक्ष्य के रूप में उपलब्ध सामग्री का विश्लेषण-विवेचन और प्राप्त तथ्यों का मनन-परिशीलन करते हुए किसी निष्कर्ष पर पहुँचा जाए। इस दृष्टि से प्रथमतः बहिःसाक्ष्य के रूप में उपलब्ध सामग्री विवेच्य है। कवि-जीवन की खोज में वार्ता साहित्य का महत्त्व अक्षुण्ण है।

'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार रसखान दिल्ली में निवास करते थे और उनकी प्रीति एक साहूकार के पुत्र से थी। उनकी यह आसक्ति वैष्णव भक्तों के प्रोत्साहन से कृष्ण-भक्ति में परिवर्तित हो गई। वैष्णवों द्वारा प्रदत्त कृष्ण-चित्र लिए ये दिल्ली से ब्रज प्रदेश में पहुँचे। कृष्ण-दर्शन की लालसा में अनेक मंदिरों की खाक छानते रहे और अंततः गोविन्द-कुण्ड में श्रीनाथ जी के मंदिर में भक्तवत्सल भगवान श्रीकृष्ण ने इन्हें दर्शन दिए। तदुपरान्त स्वामी विट्ठलनाथ जी ने अपने मंदिर में रसखान को बुलाया और वहीं वे कृष्ण-लीला गान करते हुए गोपी-भाव की भक्ति में निष्णात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए।[१] वस्तुतः उक्त वार्ता में वर्णित घटना-चक्र संबंधी कुछ संकेत रसखान की रचनाओं में भी मिलते हैं—यथा, 'प्रेम-वाटिका' में छवि दर्शन का उल्लेख तथा 'सुजान-रसखान' का लीला वर्णन।

वार्ताकार ने लिखा है कि रसखान पहले प्रभु-लीलाओं का दर्शन करते थे; तत्पश्चात् लीला-विषयक पद्य-रचना करते थे। वार्ता से यह भी प्रमाणित होता है कि रसखान ने स्वामी विट्ठलनाथ का शिष्यत्व ग्रहण किया था और उन्हें गोपी-भाव बिद्ध हुआ था।

'नव भक्तमाल' के रचयिता श्री राधाचरण गोस्वामी ने और 'उत्तरार्द्ध भक्तमाल' में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने रसखान का नामोल्लेख भर किया है। भारतेन्दु जी तो इन मुसलमान भक्त कवियों के ऊपर करोड़ों हिन्दुओं को न्यौछावर तक करते हैं।

संवत् १६८७ में बाबा वेणीमाधव दास विरचित 'मूल गोसाईं चरित' में रसखान का उल्लेख मिलता है। उनके अनुसार संवत् १६३४ से ३६ के बीच रसखान ने 'रामचरितमानस' की कथा सुनी थी।[२]

कुल मिलाकर 'वार्ता साहित्य' के आधार पर रसखान की जाति मुसलमान, निवास दिल्ली, वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षा-काल संवत् १६४० तथा जन्म-मृत्यु-काल क्रमशः संवत् १६१५ तथा संवत् १६८५ ठहराया गया है, जो समीक्ष्य है।

हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों में रसखान के जन्म-मृत्यु को लेकर मतैक्य नहीं है; यद्यपि इनकी दीक्षा, ब्रज प्रदेश में निवास, गोपी भाव की भक्ति और जाति को लेकर सभी की धारणा लगभग एक जैसी है।

'शिवसिंह सरोज' में सेंगरजी ने रसखान को सैयद वंशीय माना है और उनका जन्म 'पिहानी' में संवत् १६३० ठहराया है।[३]

'मिश्रबन्धु-विनोद' के अनुसार रसखान दिल्ली के पठान थे। इनका जन्म-संवत् १६१५, मृत्यु-संवत् १६८५ ठहराया गया है।[४] 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' में सर जार्ज ग्रियर्सन ने इनका

१. दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता, वार्ता २१९
२. पोद्दार-अभिनन्दन ग्रन्थ, भक्त कवि रसखान, पृ० ३०५
३. शिवसिंह सरोज, पृ० ४३९
४. मिश्रबंधु-विनोद, प्रथम भाग, पृ० २९२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म १५७३ ई० में पिहानी (ज़िला हरदोई, उ० प्र०) माना है।[१] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' ग्रंथ में रसखान को दिल्ली के शाही वंश का पठान सरदार और विट्ठलनाथ जी का पट्ट शिष्य बताया है। इनका रचना-काल संवत् १६४० के बाद माना है तथा 'प्रेम-वाटिका' की रचना संवत् १६७१ में स्वीकारी है।[२]

डा० रामकुमार वर्मा ने 'हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' में 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' का आधार लेकर इनके लौकिक प्रेम-प्रसंग की चर्चा की है तथा इनका कविता-काल संवत् १६७१ माना है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने इतिहास ग्रंथ में भ्रमवश रसखान के ग्रंथ 'सुजान-रसखान' को दूसरा रसखान मान लिया है।

'पोद्दार-अभिनन्दन ग्रंथ' में संकलित 'भक्त कवि रसखान' नामक अपने लेख में श्री भवानीशंकर याज्ञिक ने रसखान का जन्म संवत् १५९०, ब्रजगमन संवत् १६१२, १६२७ के उपरान्त वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षा, १६३४ से १६३७ तक मानस-कथा श्रवण, १६७२ में 'प्रेम-वाटिका' की रचना तथा लगभग ८५ वर्ष की आयु में संवत् १६७५ के आस-पास रसखान की मृत्यु का उल्लेख किया है। उनके अनुसार ये महाकवि तुलसी के समकालीन थे और इनकी मृत्यु से ३०-३५ वर्ष पूर्व ही अष्ट छाप के सभी कवियों की मृत्यु हो चुकी थी।[३]

'रसखान : जीवन और कृतित्व' नामक ग्रंथ में श्री देवेन्द्र प्रताप उपाध्याय ने रसखान का जन्म संवत् १६३०, वैराग्य संवत् १६६४, 'प्रेम-वाटिका' की रचना संवत् १६७२ और मृत्यु संवत्१६९० के आसपास ठहराई है। उक्त तिथियों की प्रामाणिकता ठहराने हेतु उन्होंने संवत् १६६२-६४ के बीच जहाँगीर और खुसरो के संघर्ष की ओर संकेत किया है।[४] ध्यातव्य है कि दिल्ली में गदर की चर्चा 'प्रेम-वाटिका' के एक दोहे में हुई है। किन्तु जहाँगीर और खुसरो का संघर्ष राष्ट्र-व्यापी नहीं था अत: उसे 'गदर' की संज्ञा रसखान

१. हिन्दी के मुसलमान कवियों का प्रेम-काव्य, पृ० ७६
२. रसखान पदावली, संकलन प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, पृ० ७
३. हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास, पृ० १०७
४. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० १०६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने नही दी होगी। गृह-कलह गदर नहीं हो सकता।

उक्त ग्रंथों के अतिरिक्त सैयद अमीर हसन नूरानी कृत 'हिन्दी के मुसलमान शोअरा' (उर्दू); गुरुदेव प्रसाद वर्मा कृत 'हिन्दी के मुसलमान कवियों का प्रेमकाव्य' आदि ग्रंथों में भी उक्त घटनाओं और तिथियों का ही पिष्टपेषण हुआ है। गुरुदेव प्रसाद वर्मा ने इस जनश्रुति का सहारा लिया है कि रसखान के हृदय में भगवद्-विषयक रति का आविर्भाव श्रीमद्भागवत के फ़ारसी रूपांतर के अध्ययनोपरांत हुआ होगा और गोपियों की कृष्ण के प्रति उत्कट प्रीति उन्हें वृन्दावन खींच ले गई होगी।[1]

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के 'रसखान-पदावली' नामक संग्रह की भूमिका में तथा बाबू अमीरसिंह द्वारा सम्पादित 'रसखान और घनानन्द' (मनोरंजन पुस्तक माला-५१) में रसखान के जीवन से संबंधित जिन किंवदंतियों का उल्लेख हुआ है, उनका आधार भी वार्ता साहित्य ही रहा है। ब्रह्मचारीजी ने इनके वणिक-पुत्र से प्रेम के अतिरिक्त युवावस्था में स्त्री-प्रेम की चर्चा भी की है। इनकी प्रेयसी अत्यंत मानवती स्त्री थी। उससे प्रताड़ित रसखान कृष्ण-भक्ति में तल्लीन हुए। भावावेश में ये नित्य ही श्रीकृष्णचन्द्र के साथ में गौएँ चराने जाया करते थे और गोपियों की रास-क्रीड़ा के दर्शन करते थे। यही नहीं, स्वयं ब्रजचन्द्र भगवान श्रीकृष्ण ने रसखान की मृत्यु होने पर उनका दाह संस्कार किया था।[2]

समग्रत: रसखान की जन्म और मृत्यु-सम्बन्धी तिथियों तथा उनके जीवन-चरित संबंधी विवरण के पक्ष में बहि:साक्ष्य में अकाट्य तथ्यों का प्राय: अभाव है। अतएव उनकी रचनाओं में प्राप्त तथ्यों की खोज-बीन इस प्रसंग में उपयोगी सिद्ध होगी।

अंत:साक्ष्य की दृष्टि से 'प्रेम-वाटिका' के अंतिम दोहे तथा 'सुजान-रसखान' के कुछ पद विचारणीय होंगे।

देखि गदर, हित, साहिबी, दिल्ली नगर मसान।
छिनहिं बादसा-बंस की, ठसक छोरि रसखान॥
प्रेम निकेतन श्रीवनहिं, आइ गोवर्धन-धाम।
लह्यो सरन चित चाहि कै, जुगल सरूप ललाम॥

---

१. पोद्दार-अभिनन्दन-ग्रन्थ, प्रधान सम्पादक वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ३१५
२. रसखान : जीवन और कृतित्व, पृ० ४८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तोरि मानिनी तें हियो, फोरि मोहिनी मान।
प्रेम देव की छविहिं लखि, भए मियाँ रसखान।।
२ ७ ६ १
विधु-सागर-रस-इन्दु सुभ, बरस सरस रसखानि।
प्रेम वाटिका रचि रुचिर, चिर हिय हरख बखानि।।
अरपी श्रीहरि चरन जुग, पदुम पराग निहार।
विचरहिं या में रसिकवर मधुकर-निकर अपार।।

उक्त दोहों से स्पष्ट है कि दिल्ली में राज-सत्ता के लिए संघर्ष में हुए नर-संहार के कारण नगर श्मशान की भाँति वीरान हो गया और इस युद्ध-लिप्सा से विक्षुब्ध कवि ने शाही वंश की ठसक का परित्याग कर दिया अर्थात् शाहे वक्त से सम्बन्ध तोड़कर वे ब्रजवासी हुए तथा गोवर्धन की पार्वत्य-सुषमा को अपना प्रेम-निकेतन बनाकर राधा-कृष्ण के युगल चरणों में प्रेमपूर्वक शरण ली। उन्होंने उस मानवती नायिका के मान का भंजन किया। उसके प्रेम-पाश से अपने हृदय को मुक्त कर रसिकराज के श्री चरणों में लगाया। और इस तरह भगवान श्रीकृष्ण की छवि का दर्शन कर मियाँ रसखान हुए—रसरूप हो गए। संवत् १६७२ में 'प्रेम-वाटिका' की रचना रसिक राज वृन्दावन विहारी की चरण-शरण से उद्भूत हृदयगत आनंद-पारावार को अभिव्यक्ति देने हेतु की। अंत में रसखान यह 'प्रेम-वाटिका' श्रीकृष्ण के पदपद्मों में समर्पित करते हैं, इसमें रसिक जन उसी प्रकार आनंद-विहार करते जैसे कमलों में भ्रमर।

रसखान के इस दोहे[1] के आधार पर अधिकांश समीक्षकों और इतिहासकारों ने रसखान को शाही वंश का ठहराया है। श्री देवेन्द्रप्रताप उपाध्याय[2] तथा श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय[3] प्रभृति विद्वान् इसी मत के हैं। किन्तु यदि हम 'सुजान-रसखान' के कुछ पदों पर दृष्टिपात करें तो दूसरी ही ध्वनि निकलती है; यथा—

देश विदेश के देखे नरेशन रीझ की कोऊ न बूझ करैगो।
तातें तिन्हें तजि जानि गिर्‌यो गुन सौ गुन औगुन गाँठि परैगो।।

---

१. देखि गदर हित-साहबी, दिल्ली नगर मसान।
छिनहिं बादसा बंस की ठसक छोरि रसखान।। —प्रेम-वाटिका

२. रसखान : जीवन और कृतित्व, पृ० ४०

३. रसखान और उनका काव्य, पृ० २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँसुरी वारो बड़ी रिझवार है स्याम जु नैंसुक ढार ढरैगो ।
लाड़लो छैल वही तो अहीर को पीर हमारे हिये की हरैगो ।।

इस पद से रसखान का कई राजदरबारों से परिचय प्रमाणित होता है। वे न केवल दिल्लीश्वर वरन् अन्य राजदरबारों से भी सम्बन्धित रहे। किन्तु उन्हें कोई गुणग्राहक, स्नेहशील सम्राट मिला नहीं, जो उनके आप्लावित प्रेम-रस और काव्य-रस का पारखी होता। अतः लौकिक और आध्यात्मिक रीझि से आकुल, भग्न हृदय, हताज रसखान रसिक—शिरोमणि श्रीकृष्ण के शरणागत हुए। कहना यह है कि इस पद से उनका दिल्लीश्वर का वंशज होना अप्रमाणित होता है। यदि वे शाही खानदान से थे तो क्यों अन्य राजदरबारों में भटकते रहे ? परन्तु यह बात भी सच है कि उन्हें दरबारी संस्कृति का, राजसी वैभव का, शाही चमक-दमक का पर्याप्त ज्ञान था। यह दरबारी वैभव-विलास उनके कई पदों से प्रतिबिंबित होता है—

कंचन मंदिर ऊँचे बनाइ के मानिक लाइ सदा झलकैयत ।
प्रात ही तें सगरी नगरी नग मोतिन की तुलैयत ।।
जद्यपि दीन प्रजान प्रजापति की प्रभुता मघवा ललचैयत ।
ऐसे भये तौ कहा रसखानि जौ साँवरे ग्वार सों नेह न लैयत ।।

× × ×

लाल लसै पगिया सबके, सबके पट कोटि सुगन्धनि भीने ।
अंगनि अंग सजे सबहीं रसखानि अनेक जराव नवीने ।।

इन पंक्तियों से यह साफ जाहिर है कि कंचन-मणि-माणिक्य-मोतियों की मालाएँ, जड़ाऊ आभूषण, सुगन्धित वस्त्रों आदि की चर्चा करने वाले कवि ने राजसी सुख-भोग किया था। वह राज-दरबारों, अमीर-उमरावों से अवश्य जुड़ा रहा था; परन्तु इसका यह अर्थ नहीं लिया जा सकता कि वे दिल्लीश्वर के वंशज थे। कदाचित् वे मुगल दरबार में किसी पद पर आसीन थे, जिसे उन्होंने राजवंश की पारम्परिक कलह, छीना-झपटी, गृह-युद्ध और मानवीय मूल्यों की विघटनकारी दशा को देखकर त्याग दिया। यही कारण है, अपने अचेतन में शाही वैभव से आक्रान्त कवि-मन संकट काल में प्रभु-पद की स्मृति से स्वयं को आश्वस्त करता है—

काहे को सोच करे रसखानि कहा करि हैं रवि नन्द विचारो ।
ताखन जाखन राखिये माखन चाखन हारो सो राखन हारो ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार वहि:साक्ष्य और अन्त:साक्ष्य के विश्लेषण-विवेचनोपरांत-रसखान के जीवन-वृत्त को रेखांकित किया जा सकता है।

जन्म और ब्रज-गमन

प्राप्त साक्ष्यों में रसखान की जन्म और मृत्यु सम्बन्धी तिथियाँ विवादास्पद हैं। अधिकांश विद्वानों[1] ने इनका जन्म-संवत् १६१५ विक्रमी में एवं मृत्यु-संवत् १६८५ विक्रमी में मानी है। ये तिथियाँ भ्रामक प्रतीत होती हैं। यदि रसखान का जन्म-संवत् १६१५ विक्रमी मान लिया जाए तो उनके ब्रज-गमन की तिथि का तालमेल उनके अन्त:साक्ष्य से नहीं बैठ सकता। उन्होंने स्वयं 'प्रेम-वाटिका'[2] में लिखा है कि गदर या किसी विप्लव के कारण दिल्ली जब वीरान हो गई, तभी वे दिल्ली छोड़कर ब्रज में आए। ऐतिहासिक साक्ष्य[3] के आधार पर दिल्ली में गदर की स्थिति संवत् १६१३ में हुई थी। हुमायूँ की मृत्यु और अकबर की ताजपोशी के बाद अकबर को सूरवंश और हेमू से भयानक युद्ध लड़ने पड़े थे। दिल्ली छोड़ते समय कवि की उम्र १८ से २५ वर्ष के बीच रही होगी, क्योंकि उनके काव्य में जिस राजसी वैभव और विलास का यत्किंचित् वर्णन मिलता है, वह इस उम्र से पूर्व असंभव और अवर्णनीय है। अत: संवत् १६१५ वि० रसखान की जन्मतिथि नहीं मानी जा सकती।

अधिकतर विद्वानों ने रसखान की वय ८५ वर्ष मानी है। अत: मृत्यु-सम्बन्धी उक्त तिथि संवत् १६८५ वि० भी सही नहीं ठहरती क्योंकि संवत् १६१५ में जन्म मानकर उनकी आयु ८५ वर्ष की नहीं होती, ७५ वर्ष की ही होती है। अत: उक्त दोनों तिथियाँ सही प्रमाणित नहीं होतीं।

'शिवसिंह सरोज' के आधार पर देवेन्द्र प्रताप उपाध्याय[4] ने जन्म-संवत् १६३० माना है। स्वयं सेंगरजी ने 'शिवसिंह सरोज' की भूमिका में लिखा है कि उन्होंने अपने ग्रन्थ की रचना ही सुनी हुई बातों के आधार पर की है। फिर उनके द्वारा प्रणीत रसखान की जन्मतिथि कहाँ तक सही मानी जा सकती है? इसके अतिरिक्त

---

१. मूल गोसाईं चरित, बाबा बेणी माधव दास, मिश्र बन्धु आदि।
२. देखि गदर हित साहिबी…प्रेम-वाटिका, दोहा ४८।
३. वाक्यात दारुल हुकूमत देहली, पृ० ३०८ से ३१६ तक
४. रसखान : जीवन और कृतित्व, पृ० ४८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवत् १६१५ के विपक्ष में दिए गए तर्क यहाँ भी प्रभावी होते हैं। उपाध्याय जी द्वारा दी गई मृत्युतिथि संवत् १६९० में रसखान की आयु ६० वर्ष ही बैठती है जबकि वे लगभग ८५ वर्ष जीवित रहे, यह अधिकांश लोगों द्वारा मान्य तथ्य है। अतः श्री उपाध्याय द्वारा दी गई जन्म-मृत्यु की तिथियाँ अप्रामाणिक ठहरती हैं।

'प्रेम-वाटिका' में वर्णित गदर की घटना को दृष्टिपथ में रखकर रसखान का जन्म संवत् १५९० मानना समीचीन प्रतीत होता है। संवत् १६१३ वि० के विप्लव, विध्वंसकारी अकाल और नरसंहारकारी काल में लगभग २३ वर्ष की वय में रसखान ब्रज क्षेत्र में आ गए होंगे, जिसका वर्णन उन्होंने 'प्रेम-वाटिका' में किया है। श्री भवानीशंकर याज्ञिक[1] ने अपने लेख तथा डॉ० माजदा असद ने अपने शोध-प्रबन्ध[2] में संवत् १५९० को रसखान की जन्मतिथि माना है, और अन्यान्य तथ्यों से अपने मत की पुष्टि की है। ऐतिहासिक साक्ष्य (दिल्ली का गदर और मसान जैसी स्थिति) से भी यह मत प्रमाणित होता है जिसकी चर्चा आगे की गई है।

संवत् १६१२ या १३ के आस-पास ये दिल्ली नगर छोड़कर ब्रजधाम गए होंगे। इसी काल में सत्ता-लिप्सा में रतमुगलों, सूर-वंशियों आदि के युद्ध ने दिल्ली नगर श्मशान कर दिया था, अतः इन्होंने श्रीवन (मथुरा)[3] को प्रयाण किया होगा।

'देखि गदर हित साहिबी दिल्ली नगर मसान।' यहाँ रसखान द्वारा दिल्ली नगर को 'मसान' कहना और गदर का उल्लेख करना कतिपय विद्वानों[4] को इतिहास-संगत प्रतीत नहीं होता। अतः वे इस अन्तःसाक्ष्य को नजरंदाज करके अन्यान्य कल्पनाएँ करते हैं और भ्रामक तिथियों का उल्लेख करते हैं। जबकि वस्तुस्थिति यह है कि संवत् १६१२-१३ के बीच राष्ट्रव्यापी विप्लव, युद्ध, अराजकता, नरसंहार के साथ ही साथ देश को भयावह दुर्भिक्ष के दिन भी देखने पड़े थे। हुमायूँ की मृत्यु के बाद अकबर १४ फरवरी १५५६ ई० संवत् १६१३ को गद्दीनशीन हुए। अकबर ने अपने सिपहसालार

१. पोद्दार-अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ३१५
२. रसखान : काव्य तथा भक्ति भावना, पृ० ३२
३. प्रेम-वाटिका, ४८-४९
४. आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, रसखान ग्रंथावली की भूमिका, पृ० ६७; आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, मध्ययुगीन प्रेम साधना, पृ० १४८; आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं अभिरक्षक बैरम खाँ के बल से सूरवंश का नामोनिशान मिटाया तथा पानीपत में हेमू को पराजित किया। अतः इस काल में मुगलों ने भीषण मार-काट की। जाहिर है कि राष्ट्र-व्यापी इस युद्धोन्माद और आपा-धापी को रसखान ने गदर की संज्ञा दे दी होगी। ठीक इसी समय संवत् १६१२ में दिल्ली-आगरा में भीषण अकाल भी पड़ा था। लोगों को नरमांस, घास-पात तक खाना पड़ा[१] था। अंतिम संस्कार के लिए कफन भी उपलब्ध नहीं था। नर कंकालों और नरमुण्डों से पृथ्वी पटी पड़ी थी। प्रसिद्ध इतिहासकार अब्दुल कादिर बदायूँनी ने अपनी पुस्तक 'मुनतखिबुत्तवारीख' में दुर्भिक्ष और युद्ध पीड़ित जनता का बड़ा ही हृदय-विदारक वर्णन किया है। इस दुर्भिक्ष की चर्चा नशीरुद्दीन अहमद ने भी की है।[२] कदाचित् इसी स्थिति को रसखान ने अपने उक्त दोहों में वर्णित किया है और दिल्ली नगर को 'मसान' की संज्ञा दी है। अतः प्रमाणित होता है कि इसी 'गदर' और 'मसान' से भयभीत कवि दिल्ली के बादशाही वंश की शान-शौकत (ठसक) छोड़कर श्रीवन (मथुरा) संवत् १६१३ में चले आए।

जन्म-स्थान एवं वंश

रसखान के जन्म-स्थान से दिल्ली और पिहानी (जिला हरदोई, उ० प्र०) को अधिक जोड़ा गया है। दिल्ली श्मशान-भूमि के रूप में देखकर रसखान मथुरा आ गए थे।[३] प्रेम-वाटिका के इस अंतःसाक्ष्य के आधार पर विद्वानों ने दिल्ली को इनका जन्म-स्थान माना है। किन्तु दिल्ली के नामोल्लेख भर से उनका जन्म-स्थान दिल्ली नहीं माना जा सकता। कोई सबल प्रमाण इस पक्ष में नहीं है। 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में भी रसखान को दिल्ली का रहने वाला बताया गया है। यह कहीं नहीं लिखा कि रसखान का जन्म भी दिल्ली में हुआ था। 'शिवसिंह सरोज', 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' आदि ग्रंथों से प्रमाणित होता है कि रसखान 'पिहानी', जिला हरदोई (उ० प्र०) में जन्मे थे। ऐतिहासिक तथ्य यह भी है कि जिला हरदोई सैयदों की बस्ती है।

---

१. पोद्दार-अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ३१४
२. वाकयाते-दारुल-हुकूमत देहली, पृ० ३११, ३१६
३. प्रेम-वाटिका, ४८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेरशाह शूरी द्वारा पीछा करने पर हुमायूँ को कन्नौज के काजी सैयद अब्दुल गफूर ने आश्रय दिया था जिसके उपलक्ष्य में हुमायूँ ने उसे हरदोई जिले की तहसील शाहबाद में ५००० बीघा जंगल और पाँच गाँव दिए। पिहानी की बस्ती के मूल में यही गाँव हैं।[१] सैयद अब्दुल गफूर पिहानी में रहने लगे थे और कदाचित् सैयद इब्राहीम 'रसखान' इन्हीं के वंश के थे और ये दिल्ली में रहने लगे थे।[२] पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने पिहानी को भ्रमवश पठानों की बस्ती कहा है क्योंकि सैयद पठान नहीं हो सकते और न ही पठान सैयद। सैयद और पठान मुसलमानों की चार प्रसिद्ध उपजातियों में से हैं।[३] इस तरह इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि 'रसखान' सैयद वंशीय थे और उनका जन्म पिहानी में हुआ था।

नाम, उपनाम तथा जाति

रसखान के नाम के संबंध में भी अनेक कपोल कल्पनाएँ की गई हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपने ग्रंथ "हिन्दी साहित्य"[४] में दो रसखान बताए हैं। एक सैयद इब्राहीम 'रसखान' और दूसरे 'सुजान-रसखान'। वस्तुतः यहाँ आचार्य जी ने भ्रमवश रसखान की रचना 'सुजान-रसखान' को ही दूसरा कवि मान लिया है। वस्तुतः 'रसखान' का असली नाम सैयद इब्राहीम था और 'रस-खान' उनका उपनाम तथा खान उनकी परम्परागत उपाधि।[५]

कतिपय समीक्षकों ने भ्रमवश लिख दिया है कि 'रसखान' ने धर्म परिवर्तन कर लिया था। उनकी निम्नलिखित पंक्ति—

प्रेम देव की छविहि लखि भये मियाँ रसखान।

ने लोगों को इस उद्भावना के लिए प्रेरित किया है—"मियाँ (मुसल-मान) सैयद इब्राहीम खान प्रेमदेव भगवान श्रीकृष्ण की छवि को देखकर 'रसखान' (हिन्दू-भक्त) हो गए। किन्तु इस प्रकार की कल्पनाएँ-उद्भावनाएँ प्रमाणहीन एवं निराधार हैं। वस्तुस्थिति यह है कि परम प्रेम (ईश्वर-प्रेम) अथवा चरम भक्ति की अनुभूति के कारण साम्प्रदायिक धर्मों का उनके लिए कोई महत्त्व ही न रह

---

१. रसखान (ग्रंथावली), प्रस्तावना, आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पृ० २४
२. रसखान : काव्य तथा भक्ति भावना, डा० माजदा असद, पृ० ३३
३. उपरिवत्, पृ० ३२
४. हिन्दी साहित्य, पृ० २०५
५. रसखान : काव्य तथा भक्ति भावना, पृ० ३४-३५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। उनका प्रभु-प्रेम धर्मातीत है, धर्म से परे है। धर्म की संज्ञा में उसे बाँधा नहीं जा सकता। वह धर्म-सम्प्रदाय के बंधनों से उन्मुक्त ऊर्ध्वगामी है। अतः वह न हिन्दू हैं और न मुसलमान। मात्र ईश्वर-प्रेमी हैं, प्रभु-भक्त हैं।

बचपन, शिक्षा-दीक्षा

रसखान के जन्म-स्थान की चर्चा करते हुए कहा गया कि, कदाचित्, ये सैयद अब्दुल गफूर के वंशज थे जिन्हें सम्राट हुमायूँ से जागीर मिली थी। अतः कहा जा सकता है कि इनका बचपन सुख-सुविधा में बीता। इनकी विधिवत् शिक्षा का उल्लेख तो नहीं मिलता, लेकिन 'श्रीमद्भागवत' के फ़ारसी अनुवाद सुनने संबंधी घटना को यदि सत्य मान लिया जाए तो कहा जा सकता है कि ये फ़ारसी के जानकार रहे होंगे। हिन्दी-संस्कृत का उन्हें यथेष्ट ज्ञान था। उनका काव्य स्वतः प्रमाण है। कदाचित् पठन-पाठन की सुविधा इन्हे घर पर ही उपलब्ध कराई गई होगी। इनके काव्य की उन्मुक्त गति और विकुंठ भावधारा से यह प्रमाणित होता है कि इनका जीवन सहज रहा तथा, अभाव की पीड़ा इन्होंने नहीं सही।

अवसान-काल

रसखान की मृत्यु संबंधी तिथियों की समीक्षा उनकी जन्म-तिथि के साथ की जा चुकी है। संवत् १५९० वि० को उनकी जन्म-तिथि मानने पर संवत् १६७५-७६ वि० के आस-पास उनकी मृत्यु-तिथि मानी जा सकती है। संवत् १६७२ वि० में भक्त-वत्सल भगवान श्रीकृष्ण की माधुर्य भक्ति में आकण्ठ डूबे रसखान ने प्रभु के प्रति स्वमन का उल्लास व्यक्त करने हेतु 'प्रेम-वाटिका' की रचना[1] की। उसके कुछ वर्षों बाद ही उन्होंने इहलीला का संवरण मथुरा-वृन्दावन में किया। उनकी समाधि महावन में आज भी विद्यमान है। अपने निवास और शरणागत प्रभु की भक्ति के संबंध में उन्होंने लिखा है—

प्रेम निकेतन श्रीवनहिं आइ गोवर्धन धाम।
लह्यौ सरन चित चाहि के जुगल-सरूप ललाम॥

---

२ ७ ६ १
१. विधु सागर रस इन्दु, सुभ बरस सरस रसखानि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समग्रतः अंतःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के विश्लेषण-विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सैयद इब्राहीम खाँ 'रसखान' का जन्म संवत् १५९० विक्रमी में पिहानी (जिला हरदोई, उ० प्र०) में हुआ था। उनका बचपन ताल्लुकेदारी माहौल में सुख से बीता। वे बाल्यावस्था में ही पिहानी से दिल्ली पहुँचे और वहाँ राजतंत्र से जुड़ गए। उन्होंने किशोरावस्था और यौवन के कुछ वर्ष राजसी वैभव में बिताए। संवत् १६१२-१३ के आसपास दिल्ली में हुए भीषण राज-विप्लव और दुर्भिक्ष के कारण दिल्ली की दुरवस्था से संत्रस्त कवि-हृदय इब्राहीम ब्रजधाम पधारे। जहाँ उन्होंने संवत् १६३४ से १६३७ वि० के बीच रामचरितमानस का पाठ सुना और रसिक विहारी गोपिका रमण ब्रजचन्द्र भगवान श्रीकृष्ण की माधुर्य-भक्ति मे अनुरक्त हुए। यहीं यौवन की उद्दाम वासना और लौकिक प्रेम का उदात्तीकरण अलौकिक प्रेम में हुआ। उसी दिव्य-प्रेम के सहारे जीवन-यापन करते हुए संवत् १६७५-७६ के लगभग वे गोलोक-वासी हुए।

— सत्यदेव मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट तीन

काव्य-यात्रा

रसखान उस 'अनिवार' प्रेम पंथ के यात्री हैं जो कमलतन्तु से भी अधिक कोमल हैं और तलवार की धार से भी अधिक तेज, जितना ही सीधा है उतना ही टेढ़ा है—

कमलतन्तु सौ क्षीणतर कठिन खड़ग को धार।
अति सूधो टेढ़ो बहुर प्रेमपंथ अनिवार॥

रसखान के लिए और सारे अनुभव व्यर्थ हो चुके हैं। उनके लिए ज्ञान, कर्म और उपासना सब 'अहमति को मूल' है अर्थात् सबमें कहीं-न-कहीं अहंकार बना रहता है और प्रेम है जिसमें अहंकार रह ही नहीं सकता। रसखान प्रेम को एक ऐसा दर्पण मानते हैं जिसमें अहंकार या कोई भी निजता अनमेल हो जाती है। और वे उसको प्रेम नहीं मानते जिसमें दो मन एक हो जाते हैं। जब दो शरीर एक हो जायँ तो वे सच्चा प्रेम मानते हैं। दो शरीर एक होने का अर्थ ही यह है कि अपना शरीर अपना न रह जाय, वह श्रीकृष्ण का शरीर हो जाय और श्रीकृष्ण का शरीर श्रीकृष्ण का शरीर न रह जाय, वह अपना शरीर हो जाय—

दो मन इक होते सुन्यो पै वह प्रेम न आहि।
होइ जबै द्वै तनहु इक सोई प्रेम कहाइ॥

पर शरीर एक हो जाय, हो जाय। रसखान को यह नहीं सह्य है कि श्रीकृष्ण बनकर श्रीकृष्ण की तरह मुरली के वशीभूत हो जायँ। अर्थात् प्यार अद्वैत में भी एक द्वैत बनाए रखना चाहता है। शरीर एक हो जाय, एक ही शरीर में प्रेमी और प्रेमिका दोनों आ जायँ, पर प्रेमिका की भावना कैसे छोड़ी जाय—

मोरपखा सिर ऊपर राखिहौं, गुंज की माल गरे पहिरौंगी।
ओढ़ि पीतंबर लै लकुटी बन, गोधन ग्वारनि संग फिरौंगी॥
भावतो ओहि मेरो रसखानि, सो तेरे किये सब स्वाँग करौंगी।
या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरा न धरौंगी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे वैरिन मुरली को अपने अधरों पर रखें! प्रेमी के साथ एकतनु होकर फिर प्रेमिका बन जाना, मानो यात्रा को नए सिरे से प्रारम्भ करने का संकल्प है। इस प्रकार रसखान की काव्य-यात्रा एक भँवर है। बार-बार घूमकर फिर शुरू करना है, बार-बार एक ही मूर्ति के चारों ओर घूमना है। लेकिन भ्रम यही रहता है कि हम नहीं घूम रहे, वह मूर्ति ही घूम रही है। वह मूर्ति ही बड़ी चंचल है, जो उसको स्थिर मान कर ध्यान करते हैं, वे उन्हें ढूंढ़ते ही रह जाते हैं, उनका अन्त नहीं पाते, वे स्वयं खो जाते हैं और जो लोग उन्हें चंचल रूप में देखते हैं, उनके लिए वे वैसे ही सुलभ हैं जैसे रसखान की अहीर की छोहरियों के लिए छछियाभर छाछ पर नाचने के लिए तत्पर, क्योंकि वे नटवर नाचने के लिए आतुर हैं और ब्रज के पानी में मथे हुए दही की छाछ पर तो निश्चय ही वे अपने को न्यौछावर करने के लिए आतुर हो जाते हैं—

गावैं गुनी गनिका गन्धर्व और सारद सेष सबै गुन गावत।
नाम अनंत गनंत गनेस ज्यों ब्रह्मा त्रिलोचन पार न पावत।।
जोगी जती तपसी अरु सिद्ध निरन्तर जाहि समाधि लगावत।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावत।।

ऐसा चपल सौंदर्य भी कभी-कभी छक जाता है और कहीं छिपना चाहता है, लोग पुकार लगाते-लगाते थक जाते हैं, कोई उनका पता नहीं बताता, पता बताये भी तो कैसे? वे छिपते हैं उस निकुंज में जहाँ राधिका मान किए बैठी हैं और मनाने के लिए श्रीकृष्ण को छिपकर आने की लाचारी हुई है, आने की ही नहीं, राधिका के पाँव पलोटने की भी लाचारी हुई है—

ब्रह्म मैं ढूंढ्यो पुरानन गानन वेद रिचा सुनि चौगुने चायन।
देख्यौ सुन्यौ कबहूँ न कितूँ वह कैसे सरूप और कैसे सुभायन।।
हेरत हेरत हारि पर्‌यौ रसखानि बतायौ न लोग लुगायन।
देखौ दुरौ वह कुंज-कुटीर मैं बैठ्यो पलोटत राधिका पायन।।

रसखान की वृत्ताकार काव्य-यात्रा का केन्द्र है—राधा-कृष्ण का प्यार, विराट् आकाश का माटी के साथ प्यार, सूर्य का अगहन के कुहासे से ढकी हुई नक्षत्रमाला अनुराधा से प्यार।

रसखान की एक गोपी ने राधा के सौन्दर्य का वर्णन ही इस प्रकार किया है, 'बासर तू जु कहीं निकसै रवि को रथ माँझ अकास अरै री'। यदि दिन में तू कहीं निकलती है तो सूर्य का रथ आकाश में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अटक जाता है। माटी की प्रीति का वर्णन रसखान ने इस प्रकार किया है—

कहा कहूँ आली कछु कहती बनै न दसा
नंदजी के अँगना में कौतुक एक देख्यौ मैं।
जगत के ठाटी महापुरुष विराटी जो निरंजन
निराटी ताहि माटी खात देख्यौ मैं॥

क्या कहूँ कहते नहीं बनता। नंदजी के आँगन में विलक्षण तमाशा देखा। निरंजन और विराट पुरुष को माटी खाते देखा। यह प्यार प्राणों का प्राणों के साथ प्यार है। यह अग्नि और सोम तत्त्व का एक-दूसरे में अन्तर्भाव है।

रसखान की काव्य-यात्रा में कोई पड़ाव नहीं है, कहीं विश्राम लेने को मन नहीं करता क्योंकि एक तो यात्रा ही ऐसी है जिसमें एक क्षण के लिए भी विह्वलता कम नहीं होती और दूसरे यह कि ऐसे चपल के साथ प्रीति की यात्रा है जो बार-बार झाँसा देता रहता है, हाथ में आकर के फिर निकल जाता है। जब वह खड़ा रहता है, तब भी उसका अंग-प्रत्यंग गतिशील रहता है, नाचता रहता है, और उसकी प्रत्येक बाँकी भंगिमा में मन लुभाता चला जाता है। लुभता ही नहीं, जैसे राँगा गला करके किसी में ढाल दिया जाय वैसे ही उस भंगिमा में मेरा शरीर ढल जाने के लिए राँगा हो जाता है और यह सब होता है पहले ही दर्शन में, बिना किसी पूर्व परिचय के। कभी वह मेरी गली से इसके पहले नहीं निकला। एकाएक कालिन्दी के तीर पर उसे खड़े देखा और यह रूपान्तर हो गया, अगर कहीं परिचय होता तो जाने क्या होता!

माइ सुहाइ न या पैं कहूँ यह न कहूँ यह मेरी गरी निकर्‌यौ है।
धीर समीर कालिन्दी के तीर, खर्‌यौ रहै आजु री दीठि पर्‌यौ है॥

ऐसे अपरिचित का प्यार सब को नहीं मिलता और माँगे भी नहीं मिलता है, यह तो सहज ही मिलता है और वृन्दावन की सहज भूमि में ही मिलता है, औचक मिलता है। कभी-कभी तो सोते समय मिल जाता है।

काहू न चौजुग जागत पायो सो राति जसोमति सोवत पायो।

'जिसे किसी ने किसी भी युग में रात-रात जागकर नहीं पाया उसे यशोदा ने सोते पा लिया।' इसीलिए रसखान की काव्य-यात्रा को समझने के लिए ब्रज की ज़मीन को समझना बहुत ज़रूरी है। इस ब्रज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि का बड़ा ही विचित्र हिसाब है। इसकी रेत रस की सरिता है, और इसकी नदी विरह के उद्वेग से खौलती हुई लहर, इसके पाहन को छप्पन भोग लगता है, और इसके तमाल के अन्धकार में नीले और गुनहले प्रकाशों का खेल होता है। इसमें श्रीकृष्ण के उपद्रव के कारण प्यार होता है और जब प्यार हो जाता है तो यह प्यार ही सबसे बड़ा उपद्रव हो जाता है और ऐसा उपद्रव हो जाता है कि न इसे सहा जा सकता है, न इसके बिना रहा जा सकता है—

काहू को माखन चाखि गयो अरु काहू को दूध दही ढरकायो।
काहू कै चीर लै रुख चढ़्यौ अरु काहू को गुंज छरा छहरायो॥
मानै नहीं लरजै रसखान सुजानो ही राज इन्हें घर आयो।
आउरी बूझैं जसोमति सों यह छोहरा जायो कि भय उपजायो॥

यह ब्रज एक ओर खुलेपन के लिए निमंत्रण है, दूसरी ओर इस निमंत्रण में सब-कुछ खो जाने का जोखिम है, एक वर्जन है, हालाँकि इस वर्जन पर कोई ध्यान नहीं देता क्योंकि आमन्त्रण अधिक प्रबल है। राधिका को एक गोपी बरजती है—गाँव के बाहर गोरस बेचने वन से न जाओ, वन में सघन कुंज हैं, वहाँ श्रीकृष्ण बैठे रहते हैं और कचनार की डालों पर फूल नहीं खिले हैं, मारक और बेधक प्यार खिलखिला रहा है, वहाँ जाओगी तो तुम्हारी लाज तुम्हें सँभाल नहीं पायेगी; लाज स्वयं विशृंखल हो जाएगी, मत जाओ—

जांहि री ना भटू क्यों करि कै बन पैठत पाइबी लाज सँभार न।
कुंजनि नंदकुमार बसै तहाँ मार बसै कचनार की डारन॥

इस दुर्निवार आमन्त्रण के वन में रसखान के साथ मैं प्रवेश कर रहा हूँ।

अपनी काव्य-यात्रा का संकल्प लेते समय इब्राहीम मियाँ ने प्रेम-देव की छवि छककर उनका नाम रसखान ले लिया और रसखान का नाम हिन्दी साहित्य में एक सार्थक नाम बन गया। रसखान के लौकिक प्रेम के अलौकिक प्रेम में रूपान्तर की कथा प्रसिद्ध है। रसमय ब्रज क्षेत्र में उनकी समाधि है। यह भी एक अद्भुत संयोग है कि रसखान अतृप्त आकांक्षाओं के वन में सोये हैं। 'उनका काव्य वियोग-विथा की मजूरी है।' उनकी भाषा ब्रज के उस खरिक की भाषा है, जो श्रीकृष्ण के हृदय में खरकता रहता है, क्योंकि वह भाषा छल-कपट रहित सीधी भाषा है। उस भाषा में सम्बोधन करने वाला और सम्बोधित होने वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति दो नहीं हैं एक ही है, वही अपने आप गोपी बनता है, वही अपने आप कृष्ण बनता है, अपने आप उलहना देता है, अपने आप उत्तर देता है, कभी अकेला हो जाता है तो सोचता है सब ऐश्वर्य झूठ है, यह सारा राजपाट व्यर्थ है—

ग्वालन संग जे वन ऐबो सु गांइन संग,
हेरि तान गइबो हाहा नैन फरकत हैं।
ह्यां के गजमोती माल वारौं गुंजमालन पै,
कुंज सुधि आए हाय प्रान धरकत हैं।
गोबर को गारो सुतौ मोहि लगै प्यारौ,
कहा भयौ महल सोने को जटित मरकत हैं।
मन्दिर तें ऊँचे यह मंदिर हैं द्वारिका के,
ब्रज के खिरक मेरे हिए खरकत हैं।।

वही कभी गोपी होकर पछताता है और बरजता है 'जो कोई चाहे भलो अपनो तो सनेह न काहूँ सों कीजियो भाई' पर स्वयं इस दुर्निवार प्रेम में फँसा ही रहता है। रसखान का संसार देखने में छोटा है, ब्रज के कुछ हजार गोप-गोपियों का संसार है। पर वस्तुतः बड़ा विस्तृत है, क्योंकि बहुत खुला हुआ है, क्योंकि कहीं बीच में कोई ओट या दीवार नहीं है। अगर ओट है तो वह भी अपने ही सीधेपन की, अपने ही संकोच की ओट है। रसखान का मन एक बींधा हुआ मन है, एक अपने ही आपसे दिपा हुआ मन है। ऐसे कवि के बारे में कुछ भी कहते समय यह सुधि नहीं रहती कि कहाँ से शुरू करें, जिस लीला-वितान का गान रसखान ने किया है, उसका न कहीं आदि है और न अन्त। इस लीला का प्रत्येक क्षण अपूर्व है। रसखान का समय लगभग सत्रहवीं शताब्दी है। ये पिहानी, जिला हरदोई में जन्मे। इनका नाम सैयद इब्राहीम था। इनकी जवानी दिल्ली में बीती। इन्होंने दिल्ली से ब्रज आने की कथा इस प्रकार दी है—

देखि गदर हित साहिबीं दिल्ली नगर मसान
छिनही बादसाह बंस की ठसक छोड़ि रसखानि।
प्रेम निकेतन श्रीवनहि आय गोबरधन धाम
लह्यौ सरन चितचाय के जुगल सरूप ललाम।।

इस परिचय से यह संकेत मिलता है कि कोई बहुत बड़ी उचाट इनको हुई जिससे इन्हें लगा कि दिल्ली नगर श्मशान हो गया है और बादशाही ठसक बिलकुल थोथी है और ये ब्रज की ओर मुड़ गये। इनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौकिक प्रेम निस्सार लगा और श्रीकृष्ण के प्रेम में ये पागल हो गए और ब्रज में ही बस गए। किसी ने कहा, 'तुम्हारी रियासत छिन जाएगी।' तो उन्होंने उत्तर दिया, 'कहा करै रसखान को को ऊचुगुल लबार, जोपै राखनहार है माखन चाखनहार'। रसखान ने जिस प्रेम-पंथ की साधना की वह विधि-निषेध से परे था, कामना से परे था, 'दम्पति सुख अति विषयरस पूजा निष्ठा ध्यान, इन तें परै बखानिए सुद्ध प्रेम रसखान।' इनका प्रेम सांसारिक प्रेम, पारलौकिक प्रेम, किसी भी दूसरे लगाव से बड़ा लगाव था, ऐसा लगाव था जिसको पाकर न बैंकुण्ठ की चाह रह जाती है, न बैकुण्ठनाथ की। केवल उनके प्रेम की ही चाह रह जाती है—

जेहि पाए बैकुण्ठ अरु हरिहुँ की नहिं चाहि।
सोइ अलौकिक सुद्ध सुभ सरस सुप्रेम कहाहि॥

प्रेम श्रीकृष्ण का वह रूप है जो सबको छूता है। कभी छूकर तपाता है, कभी छूकर हर्षाता है। यह साक्षात् श्रीकृष्ण है। पर ऐसे अलग लगता है जैसे सूरज से धूप अलग लगती है। सूरज की सार्थकता है धूप होने में, श्रीकृष्ण की सार्थकता है प्यार होने में। ऐसे प्रेम को श्रीकृष्ण भी बड़प्पन देते हैं और वे क्या-क्या नहीं सुनते! कभी तो कोई कहता है—'सब बेधत प्रानौ नन्द के छौनो'। 'कभी छछिया भर छाछ पै नाच नचाता है', कभी कोई कहता है कि यह बाँसुरी नहीं बजाता, विष बगराता है—

दूध दुह्यो सीरो पर्‌यो तातो न जमाओ कर्‌यो
जामन दयो सो धर्‌यो धर्‌योई खटाइगो।
आनं हाथ आन पाइ सबही के तबहीं ते,
जबहीं ते रसखानि तानन सुनाइगो॥
ज्यों ही नर त्यों ही नारी तैसी ये तरुन बारी
कहिए कहा री सब ब्रज बिललाइगो।
जानिए न आली यह छोहरा जसोमति को
बाँसुरी बजाइगो कि विष बगराइगो॥

इसके मारे सारा ब्रज व्याकुल है। ऐसी बाँसुरी बजाता है कि प्राण खींच लेता है। कभी इन्हें उलहना मिलता है कि चोर है, बटमार है, बरजोरी करता है। कभी कोई कहता है, 'अरे हरि चेरी के चेरो भयो है', कुबरी दासी के दास हो गए हैं श्रीकृष्ण। और कभी उस पर इतना प्यार आता है कि 'मेरे बनमाली को न काली तें छुड़ावही' मेरे बनमाली को कालिय नाग से कोई नहीं छुड़ाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग, द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध, मद, मोह, सब श्रीकृष्णमय हो जाते हैं, क्योंकि इन सबके आलम्बन श्रीकृष्ण बन जाते हैं और श्रीकृष्ण के आलम्बन बनने पर कोई दूसरा आलम्बन रह नहीं जाता, आश्रय भी आलम्बन बन जाता है। जिस पर क्रोध करें, जिसे प्यार करें, जिससे ईर्ष्या करें, जो नाश बन जाय, जो मोह बन जाय, वह सब श्रीकृष्ण ही तो हैं। सारे भाव संचारी चाहे स्थायी श्रीकृष्ण हो जाते हैं। श्रीकृष्ण केवल आलम्बन विभाव ही नहीं वे उद्दीपन विभाव भी हो जाते हैं। चाँदनी रात या बादल या घनघटा या वसन्त सब निरर्थक हो जाते हैं। मोहन की हँसी, मोहन के केश-पाश, मोहन की अलकावली के आगे और मोहन के गले में पड़ी कोरी वनमाला और उसकी उन्मद गन्ध ही उद्दीपन बन जाती है। सारे अनुभाव भी श्रीकृष्ण हो जाते हैं, क्योंकि श्रीकृष्ण को देखना श्रीकृष्ण होना है, श्रीकृष्ण को छूना श्रीकृष्ण होना है, श्रीकृष्ण का स्वर सुनना श्रीकृष्ण होना है, श्रीकृष्ण का आस्वाद लेना श्रीकृष्ण होना है, श्रीकृष्ण को सूँघना श्रीकृष्ण होना है। श्रीकृष्ण के स्पर्श से जो रोमांच होता है वह भी श्रीकृष्ण हो जाता है। जहाँ कहीं भेद दीखता भी है वह अपना पैदा किया हुआ नहीं है वह भी विराट का एक छल है। वह अपनी प्रतीति हज़ार रूपों में कराना चाहता है और प्रत्येक रूप को अपूर्व दिखलाना चाहता है।

रसखान सच्चे अर्थ में मरजीवा कवि हैं, ऐसी बेखुदी के शिकार हो गये हैं कि वे रसखान भी नहीं रह पाते, वे सब-कुछ भूल जाते हैं पर वह भूल नहीं भूलते जो उनसे एक बार हो गयी है। वह भूल यह हुई कि वह श्रीकृष्ण से प्यार कर बैठे। जिस प्रकार वह गोपी प्यार करने की भूल कर बैठी जो तीर्थयात्रा की भीड़ में भटक गई थी। धाय की बाँह छूट गई भटकती हुई यशोदा के भीतर की तरफ चली गई और वहाँ एकाएक श्रीकृष्ण की मुसकान पर उनको प्यार करने की भूल कर बैठी और सब तो भूल गई, भटकना भूल गई, पर श्रीकृष्ण से प्यार करने की भूल नहीं भूलती, न उनके पीछे रात-दिन का भटकाव भूलता है—

तीरथ भीर में भूलि परी अलि छूट गई नेकु धाय की बाँहीं।
हौं भटकी भटकी निकसी सु कुटुम्ब जसोमति की जिहि धाँहीं।
देखत ही रसखान मनौ सु लग्यौ ही रह्यौ कब को हियरा हीं।
भाँति अनेकन भूली हुती उहि द्यौस की भूलनि भूलत नाहीं।।

यह बेखुदी बड़ी संक्रामक है, जो भटकाते हैं, वे भी भटक जाते हैं, जो लुभाते हैं वे भी लुभ जाते हैं, जो छलते हैं वह भी छले जाते हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेखुदी का एक आलम छा जाता है जब यह स्थिति होती है कि प्रेमी और प्रेमिका को अपनी-अपनी भूमिका भूल जाती है। श्रीकृष्ण को गायें भूल जाती हैं, राधा को गागर उठाना—

एरी आज काल्हि सब लोक लाज त्यागि दोऊ,
सीखे हैं सबै विधि सनेह सरसायबो।
यह रसखान दिन द्वै में बात फैलि जैहै,
कहाँ लौ सयानी चन्द हाथनि छुपायबो।
आज हौं निहार्‌यौं बीर निपट कालिंदी तीर,
दोउन को दोउन सों मुख मुसकायबो।
दोऊ परैं पैयाँ दोऊ लेत हैं बलैयाँ
उन्हें भूलि गईं गैयाँ इन्हें गागर उठायबो॥

जो गागर लेकर राधा जमुना किनारे गई थीं वह गागर जल से नहीं भरी थी। वह स्मृतियों से भरी हुई थी, वे स्मृतियाँ एक पारावार पूरन अनुभव के आगे कहाँ टिक पाती हैं, वे जहाँ रखी गईं वहीं रखी हैं और एक जादू दोनों पर छा जाता है।

रसखान प्रेम को एक शिखा के रूप में देखते हैं जो वियोग के ताप में सुलगती रहती है। खौलते हुए स्नेह में तपती रहती है, थोड़ी-थोड़ी भीतर भभकती भी रहती है। पर जब प्रिय के आने की बात सुनती है तो जैसे कोई बाती उकसा दे वैसे ही बल उठती है, तब भीतर की आग बाहर प्रकाश बन जाती है—

मोहन जू के वियोग की ताप मलीन महा द्युति देह तिया की।
पंकज सों मुख गो मुरझाय लगैं लपटैं बिरहागि हिया की॥
ऐसे में आवत कान्ह सुने रसखान सु तनी तरकी आँगिया की।
यों जगि जोति उठी तन की उकसाय दई मनौं बाती दिया की॥

रसखान केवल रूप की प्यास नहीं जगाते, वे नाद की विद्धता भी जगाते हैं और इसीलिए उनके मन में सबसे अधिक गाँस अगर किसी वस्तु की है तो बाँस की बाँसुरी से। ब्रज में उससे बड़ी बैरिन कोई नहीं। बाँसुरी बजती है तो सारे काम-काज बिला जाते हैं, कुछ करते-धरते नहीं बनता। मन में यही होता है कि सारे के सारे बाँस कटा डालें। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। इसके मारे जो जल में है वह घड़ा भर नहीं पाता। जो रास्ते में है चल नहीं पाता। जो घर में है कुछ कर नहीं पाता। तन-मन ऐसा बेहाल हो जाता है कि कुछ कहते नहीं बनता। लोक-हँसाई ऊपर से होती है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल की न घट गरैं मग की न पग धरैं
घर की न कछु करैं बैठी भरैं साँसु री ।।
एकैं सुनि लोट गई एकैं लोटपोट भई
एकनि के दृगन निकसि आये आँसुरी ।।
कहै रसनायक सो ब्रज बनितानि विधि
बधिक कहायें हाय हुई कुल हाँसुरी ।।
करिये उपाय बाँस डारिये कटाय
नाहिं उपजैगो बाँस नाहिं बाजै फेरि बाँसुरी ।।

बाँसुरी केवल हमको बींधती, इतना ही नहीं वह श्रीकृष्ण को इतना बस में किए हुए है कि रात-दिन संग लगी रहती है। अब इस सौत की साँसत कौन सहे, अब तो लगता है कि ब्रज में केवल बाँसुरी ही रहेगी हम लोग कहीं दूसरी जगह भाग चलें—

जग कान्ह भये बस बाँसुरी के अब कौन सखी हमको चहिहै।
यह राति दिना संग लागि रहै वा सौति कि साँसन को सहिहै ।।
जिन मोहि लियो मन मोहन को रसखान सु क्यों न हमें दहिहै।
मिलि आओ सबै कहिं भागि चलै अब तो ब्रज में बँसुरी रहिहै ।।

एक ओर तो रूप और नाद की विद्वता, दूसरी ओर एक डर बना हुआ है, लोक का डर नहीं क्योंकि लोक तो श्रीकृष्ण के भीतर है। डर इस बात का है कि श्रीकृष्ण कहीं प्यार करना छोड़ न दें, कहीं कोई ऐसी त्रुटि न हो जाय कि वे विमुख हो जायँ। 'आओ संकल्प करें, हम सब सह लेंगे, चोरी करें, बरजोरी करें, छल करें, जो भी उत्पात करें—सब सह लेंगे—

डरै सदा चाहें न कछु सहै सबैं जो होय,
रहै एक रस चाहि के प्रेम बखानी सोय ।।

पर कहाँ तक सहें इतना प्यार दिखाकर श्रीकृष्ण मथुरा चले गए—

साँझ तें भोर लौं भोर ते साँझ लौं गोपिन घातक यों रट लाई।
एरी भटू कहिये तो कहाँ कहूँ बैरी अहीर ने पीर न पाई ।।

इस बैरी अहीर के मन में कोई पीर नहीं उठती। मन में पछतावा होता है कि बेवकूफी तो मुझसे हुई कि माखन-सा मन लेकर माखन चोर की ओर गई ही क्यों ? गई तो इसके लिए तैयार रहती कि वह सब कुछ तोड़ देगा, लीक से मोड़ देगा, एक अलीक राह पर चलने के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवश कर देगा, क्योंकि वह त्रिभंगी है। वह तीन जगह से टेढ़ा है। वह हर तरह से टेढ़ा है। वह केवल मोड़ना ही नहीं जानता है; मोड़ कर तोड़ना भी जानता है—

सुन्दर स्याम सजै तन मोहन जोहन में चित चोरत हैं।
बाँके विलोकन की अवलोकन नोंकन के दृग जोरत हैं ॥
रसखानि मनोहर रूप सलोने को मारग तैं मन मोरत हैं।
काज समाज सबै कुल लाज लला ब्रजराज के तोरत हैं ॥

और इस प्रकार टूटने के लिए मन तैयार हो जाता है तो फिर कोई चिन्ता नहीं रहती, कोई भय नहीं रहता, कोई लाज नहीं रहती, कोई लीक नहीं रहती। रहे भी कैसे, इस वृन्दावन की धारा यमुना ही औड़े बहती है। कोई कहा करे, सबेरे ही गोरस बेचने मत जाओ, सिर मत चढ़ो, नहीं तो आते-जाते ही साँझ हो जाएगी। यमुना-किनारे का रास्ता बड़ा टेढ़ा है और कहीं ऐसे सँझलौके में रसखान श्रीकृष्ण मिल गए तो आँखें तुम्हारी उनकी कनौड़ी हो जाएँगी और तुम घर पहुँचो-पहुँचो ब्रजराज के सनेह की डौंड़ी पिट जाएगी—

बारहीं गोरस बेंचरी आज तूँ माय के मूड़ चढ़ै कित मौड़ी।
आवत जात लौं होयगी साँझ भटू जमुना भतरौड़ लौं औड़ी ॥
एते में भेंटत ही रसखान ह्वै हैं अँखियाँ बिन काज कनौड़ी।
एरी बलाय लौं जायगी बाजि अबै ब्रजराज सनेह की डौंड़ी ॥

डौंड़ी पिटा करे, करें क्या। उन्हें मुसकाते हुए देखा मन खो गया, मग भूल गया, तन की सुधि चली गई और सिर पर रखा दही का भाजन फूट गया और आँखों से लाज का नाता-रिश्ता भी टूट गया। दही का मटका उन्हीं के लिए था। पर ऐसे निर्दयी कि दही खा लिया, मटका तोड़ दिया, तन-मन का सारा गोरस छीन लिया और गोरस का भाजन चित्त भी नहीं रहने दिया—

भौंह भरी बहनी सुधरी अतिहै अधरान रंग्यौ रँगरातो।
कुण्डल लोल कपोल महाछवि कुंजनि ते निकस्यो मुसकातो ॥
रसखानि लखे मन खोय गयो मग भूलि गई तनकी सुधि सातो।
फूटि गयो दधि को सिरभाजन टूटिगो नैनन लाजको नातो ॥

अब तो स्थिति यह है कि खंजन जैसी आँखें छवि के पिंजरे में रुँध गई हैं। एक क्षण भी स्थिर नहीं रह पातीं, एक मुसकान पर सारी कुल की लाज छूट गई है। देह नहीं रही, एक तस्वीर हो गई है—एक जड़ी हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्वीर हो गई है। मुंह से आवाज नहीं निकलती कि दुहाई लगावें। क्या करें, जिधर जाऊँ उधर ही लोग बोल पड़ते हैं कि यह कहाँ से बावली आ गई—

खंजन नैन फँसे पिंजरा छवि नाहिं रहैं थिर कैसेहूँ माई।
छूट गई कुलकानि सखी रसखान लगी मुसकानि सुहाई।।
चित्रलिखी-सी भई सब देह न बैन कढ़ै मुख दीन्ह दुहाई।
कैसी करौं जित जाऊँ तितै सब बोल उठैं यह बावरी आई।।

लोग कहा करें पागल, अब तो जो हुआ सो हुआ, जो लोग हँसते हैं वे क्या जानें कि रस का समुद्र छोटे से हृदय में हिलोर लेता है तो क्या पीड़ा होती है—

अब तो जो भई सो भई कहँ होत है लोग अजान हँस्यौ सो हँस्यौ।
कोउ पीर न जानत जानत सों जिहिके हिय में रसखान बस्यौ।।

और 'अब कैसे छुटाई छुटै अँटकी रसखानि दुहूँकी बिलोकनि बाँकी' एक तिरछी नज़र दूसरी तिरछी नज़र में फँस जाएगी तो कैसे निकल पाएगी। अब कहाँ का नेम, कहाँ का धरम, वह जो नाच नचावे वही नाचना है। अब सारा गाँव-घर कोई भी नाम धरे अब मैं गोरी नहीं रहूँगी, साँवरी बन जाऊँगी, क्योंकि मैंने अपने को साँवरी मूरत की उजास में बोर लिया है।

रसखान का काव्य कहीं रुकता नहीं, आँखें अटकती हैं। अब चित्त डूबता है तो डूब जाय। रसखान की कविता रस-समुद्र में तिरती हुई तरह-तरह की लहरों का जोखिम उठाती रहती है। एक लहर है वसन्त की, जिसमें यह नहीं पता चलता कि कौन अधिक लाल हुआ ? श्रीकृष्ण होली में अधिक रँगे या श्रीकृष्ण के रँग में ब्रजबाला अधिक रँगी—'होरी भई कै हरी भए लाल, कै लाल के लागि पगी ब्रजबाला।' एक लहर है वर्षा की, जिसमें दही लेकर गोपी निकलती है और चोरी-चोरी निकलती है, उसने वर्षा के अन्धकार से अपने को एकाकार करने के लिए नख से शिख तक नीला वस्त्र धारण किया है और जब श्रीकृष्ण मिल जाते हैं और दान लेने पर अड़ जाते हैं तो नीले वस्त्र से ढँका शरीर काँप उठता है, नीले वस्त्र से ढँकी कंचन काया काँप उठती है। ऊपर आकाश में काले बादलों के बीच बिजली तड़पती है और पृथ्वी पर तमाल की काली छाया में नीले वस्त्र में ढँकी हुई मानो श्रीकृष्ण से ही चारों ओर से आवृत राधा सिर से पैर तक काँपने लगती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, जाने क्या हुआ जिस मिलन की इतनी प्रतीक्षा थी वह मिलन एक बहुत बड़ा जोखिम है, जाने यह बिजली बिजली भी रह पायेगी या नहीं, कहीं यह भी उस रसगर्भ मेघ में बिलाकर केवल रस-बिन्दु तो नहीं बन जाएगी—

पहिले दधि लै गई गोकुल में चख चारि भए नट नागर पै।
रसखान करी उन चातुरता कहैं दान दै दान, अरे अरपै॥
नख सों सिख लौं पट नील लपेटे, लली सब भाँति कँपे डरपै।
जनु दामिनी सावन के घन तैं, निकसैं नहीं भीतर ही तरपे॥

इन सबसे तेज़ लहर है उस कारे की, जिसे उद्धव उतारना चाहते हैं राख से, जिसे बड़े-बड़े गारुड़ी नहीं उतार पाए उसे जोग का भभूत लगाने वाला यह नादान आदमी उतारने आया है—

कारे बिसारे को चाहे उतार्‌यौ अरी बिष बावरो जे राख लगाइ कै।

उद्धव नहीं जानते कि यह लहर ही जीवन की चरम सार्थकता है। वही प्राण प्राण हैं जो उस पर रीझते हैं, वही रूप रूप है जिस पर वह रीझता है, वही सीस सीस है जो उनके चरण का स्पर्श करता है, वही देह देह है जिसको वे स्पर्श करते हैं, वही दूध दूध है जो उनसे दुहवाया गया है, वही दही दही है जिसे उन्होंने ढरकाया है, वही स्वभाव अपना स्वभाव है जो उनके मन भाया है—

प्रान वही जु रहैं रिझ वा पर रूप वहीं जिहि वाहि रिझायो।
सीस वही जिहिं वे परसे पग देह वही जिन ता परसायों।
दूध वही जो दुहायो री वाही ने सोई दही जु वही ढरकायो।
और कहाँ लौं कहूँ रसखान सुभाव वही जु वही मन भायो॥

रसखान की कविता निरन्तर एक दृश्य देखती रहती है और यह दृश्य कभी पुराना नहीं पड़ता। श्रीकृष्ण के केश गोरज में सने हैं, छाती में बनमाला लहलहाती हुई, आगे गायें, पीछे ग्वालबाल, जितनी वंशी की मधुर ध्वनि उतनी ही मधुर बाँकी आँखों की चितवन और उतनी मधुर मन्द-मन्द मुसकान, इस धजा के साथ श्रीकृष्ण गाँव के कदम्ब के वृक्ष के पास आ गए। ऊपर अटारी पर चढ़कर देखो, पीताम्बर फहरा रहा है, सघन श्यामलता को रेखांकित करता हुआ पीताम्बर फहरा रहा है और रस बरसाने वाला, तन की तपन बुझाने वाला, नैन और प्राणों को रिझाने वाला रसखान आ रहा है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोरज विराजै भाल लहलही वनमाल
आगे गैयाँ पाछैं ग्वाल गावैं मृदुतान री।
जैसी धुनि मधुर मधुर बाँसुरी की
तैसी बंक चितवनि मंद-मंद मुसकान री।।
कदम विटप के निकट तटनी के तट
अटा चढ़ि देखि पीत पट फहरान री।
रस बरसावै तन तपन बुझावै
नैन प्रानिनि रिझावै वह आवै रसखानि री।।

रसखान की कविता निरन्तर रसखान के आने की उत्सुकता है, इसीलिए रसखान की काव्य-यात्रा एक अन्तहीन काव्य-यात्रा है।

— विद्यानिवास मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट चार

भाव-बोध एवं शिल्प

रसखान के भाव-सौन्दर्य का उत्स संस्कृति, दर्शन अथवा आध्यात्म नहीं, कृष्ण प्रेम है। उनका प्रेम चिदाकाश तक व्याप्त प्राणोन्मुख अंतःसौन्दर्य जैसा प्रतीत होता है। यह प्रेम इन्द्रियों की आंतर अनुभूति पर आधृत है। रसखान मध्ययुगीन भक्त कवि हैं। उनकी गहन प्रेमानुभूति ही भक्ति के मूल में है। भक्ति के शास्त्रीय पक्ष से वे दूर हैं। वे प्रतीक्षातुर प्रेमी हैं। प्रेम ही उनकी काव्य-यात्रा का मूलमंत्र है। प्रिय के आगमन की उत्सुकता, प्रतीक्षा, मिलन-विछोह, सम्मोह-विमोह आदि अन्यान्य भाव-रश्मियों से अलंकृत है रसखान की कविता। कवि-रचनाओं—सुजान-रसखान, दानलीला, प्रेमवाटिका आदि पर दृष्टिपात करें तो विभिन्न भाव-भूमियों—राधा-कृष्ण की रूप-माधुरी, मुस्कान, बंक बिलोचन, मिलन-बिछोह, नेत्रोपालम्भ, ब्रज-प्रेम, मुरली वादन, चीरहरण, सपत्नी भाव, रास-लीला, फाग-लीला अलौकिकत्व, प्रेमा भक्ति आदि—से प्रवाहित रसखान की काव्य-सरिता का पर्यवसान होता है उसी प्रेम-सागर में जहाँ से उसका उत्स हुआ है।

प्रेम विषयक संकल्पना

रसखान का काव्य-कर्म सायास नहीं। काव्य उनकी प्रेमानुभूति का, भावोन्माद भावावेश का साधन मात्र है। उनकी प्रेमाभिव्यक्ति सहज और निर्मल है। वस्तुत उनका प्रेम वासना-पंक से बेदाग, निबँध, उदात्त और अनिर्वचनीय है। वह चित्त का संस्कार करने वाला, प्रेमी मन के अहम् का विसर्जन करने वाला, स्त्री-पुरुष की सहज प्रणयाभिव्यक्तियों का उदात्तीकृत रूप है जिसे सात्विक प्रेम की संज्ञा दी जा सकती है। उनका प्रेम पार्थिव आलम्बन के प्रति आश्रय की वासनामूलक भावाभिव्यंजना नहीं है। वह वासनामुक्त शुद्ध राग अथवा शुद्ध प्रीति है। वह सहज ऐन्द्रिय सुख का अतिक्रमण करने वाला है। अपार्थिव आलम्बन के प्रति पार्थिव आश्रय की प्रणयानुभूतियों की उदात्त अभिव्यक्ति ही रसखान के प्रेम का बीज है। वस्तुतः सगुण, साकार (ब्रह्म) आलम्बन के प्रति ही पार्थिव आश्रय का रति भाव सम्भव है, निराकार के प्रति नहीं। यही कारण है सूफी सन्तों और सगुण भक्त कवियों ने अपार्थिव, निर्गुण, निराकार ब्रह्म को सगुण, साकार मानकर ही उसके प्रति प्रेम निवेदन किया है और वास्तव में यह विशुद्ध प्रेम ही रहस्यमयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति है। यह परमात्मा के प्रति आत्मा का रति भाव है। अतः पार्थिव जैसा प्रतीत होते हुए अपार्थिव है।

रसखान इसी अपार्थिव प्रेम के सफल चितेरे हैं। उनके राधा-कृष्ण (आत्मा-परमात्मा) प्रेम के आलम्बन हैं। 'प्रेम वाटिका' के मालिन और माली हैं। यथा—

"प्रेम-अयनि श्री राधिका, प्रेम-बरन नंदनंद।
प्रेम-बाटिका के दोऊ, माली-मालिन-द्वन्द्व ॥"

प्रेम ही वह परम तत्त्व है जिसकी अनुभूति पर अन्य सारे अनुभव निःशेष हो जाते हैं और जिसके परिज्ञान पर कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता अर्थात् प्रेम, अनुभूति और बोध की चरम परिणति है, चरम सीमा है।

"जेहि बिनु जाने कछुहि नहिं, जान्यो जात बिसेस।
सोइ प्रेम, जेहि जानिकै, रहि न जात कछु सेस ॥"

लोक में प्रेम ही प्रभु है। प्रेम अगम, अनुपम, अमित और जलद-गम्भीर है। वेद, पुराण आदि सम्पूर्ण साम्प्रदायिक साहित्य प्रेम के मर्म का ही व्याख्याकार है। प्रेम, ज्ञान-कर्म आदि से श्रेष्ठ है क्योंकि प्रेम विहीन कर्म और ज्ञान निस्सार और थोथे हैं। रसखान सन्त कवियों की भांति अपने प्रेम-प्रभु को विरोधमूलक उक्तियों से रेखांकित करते हैं; यथा—

"कमलतंतु सों छीन अरु, कठिन खड्ग की धार।
अति सूधो टेढ़ो बहुरि, प्रेमपंथ अनिवार।"

प्रेम हरी को रूप है, त्यों हरि प्रेम सरूप।
एक होई द्वै यों लसैं, ज्यों सूरज अरु धूप ॥

श्रुति, पुरान, आगम, स्मृतिहि, प्रेम सबहि को सार।

रसखान प्रेम को सांसारिक आकर्षणों से मुक्त मानते हैं। अपार्थिव प्रेम गुण, यौवन, रूप, धन, ऐश्वर्य आदि के प्रति निष्काम होता है। वह प्रभु की भांति सर्व-व्यापी तत्त्व है। जहाँ प्रेम है, वहाँ प्रभु हैं। प्रभु प्रेमाधीन हैं।

"बिनु गुन जोवन रूप धन, बिनु स्वारथ हित जानि।
शुद्ध कामना तें रहित, प्रेम सकल-रसखानि ॥"

"हरि के सब आधीन पै, हरी प्रेम आधीन।"

रसखान प्रेम में द्वैत नहीं मानते। द्वैत-भाव के साथ सच्चा प्रेम नहीं हो सकता। ईश्वर और प्रेम, कृष्ण और राधा, परमात्मा और आत्मा में द्वैत की स्थिति असंकल्पित है। इसीलिए प्रेम परम मुक्ति है। प्रेम स्वयं ही अंकुर है, स्वयं ही भूमि, स्वयं ही सिंचन और प्रस्फुटन तथा फल है। सृष्टि के सृजन का मूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण है प्रेम। प्रेम ही कारण है, कार्य है, कर्त्ता, कर्म और क्रिया स्वयं ही प्रेम है। अलौकिक प्रेम प्रभुरूप है, इसीलिए उसकी स्थिति वैविध्यपूर्ण, अलौकिक, ६ ःया-तीत, गुणातीत और अनिर्वचनीय तथा विलक्षण है। रसखान ऐसे ही प्रेम-प्रभु के रसिक और भक्त हैं। इस प्रेम की फांस बड़ी विदग्धकारी है। इस शूल से जो बिध-मरा वही सच्चे अर्थों में जीवित हो उठा।

"प्रेम प्रेम सब कोउ कहै, कठिन प्रेम की फांस।

प्रेम फाँस में फँसि मरै, सोई जिए सदाहि।"

भक्ति भाव

यद्यपि रसखान वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित और आचार्य विट्ठलनाथ के शिष्य थे तथापि उनकी भक्ति को किसी सम्प्रदाय विशेष से जोड़ना अथवा भक्ति की किसी विशिष्ट शास्त्रीय पद्धति का अनुगामी मानना उचित नहीं। क्योंकि रसखान मूलतः प्रेम-दीवाने हैं। प्रेम ही उनके इस लोक और परलोक का लक्ष्य है। वे ज्ञान, कर्म, उपासना-पूजा से भी परे मानते हैं प्रेम को।

"ज्ञान, कर्म अरु उपासना, सब अहमिति को मूल।
दृढ़ निश्चय नहि होत-बिन, किए प्रेम अनुकूल।।"

"दंपति सुख अरु विषयरस, पूजा, निष्ठा, ध्यान।
इन तें परे बखानिए, शुद्ध प्रेम रसखान।।"

वैष्णव भक्ति-पद्धति में नवधा-भक्ति को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। कहना न होगा कि नवधा-भक्ति के सोपानों—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पद-सेवा, अर्चना, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन—का निर्वाह रसखान काव्य में नहीं हुआ है। हिन्दी में महाकवि सूर ने भक्ति में माधुर्य-भाव का समावेश कर हिन्दी कवियों का मार्ग प्रशस्त किया है। रसखान उसी के अनुगामी हैं। वे इसी माधुर्य भाव के भक्त माने जा सकते हैं। उनकी मधुरा भक्ति या प्रेमा भक्ति प्रेम और माधुर्य की रश्मियों से आलोकित है। माधुर्य भक्ति के तीन प्रमुख अंग—रूप वर्णन, विरह-वर्णन तथा आत्मसमर्पण—रसखान काव्य में पाये जाते हैं।

राधा-कृष्ण की रूप-राशि को उन्होंने अत्यन्त सफलतापूर्वक रेखांकित किया है। कृष्ण की अन्यान्य मनोहारी छवियां 'सुजान रसखान' में अंकित हैं। बांसुरी की मधुर तान छेड़ते कृष्ण, कटाक्ष-पात करते कृष्ण, अलबेली वेश-भूषा धारण किये कृष्ण, काजल लगाये पैंजनियां पहने बाल-कृष्ण आदि अनेक रूपाकृतियां रसखान ने अपने काव्य में समेटी हैं। कृष्ण का शृंगार मां जसोदा ने किया है। उस रूप पर गोपियां बलिहारी हैं और जसोदा के भाग्य की सराहना करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आजु गई हुती भोरही हौं रसखानि रई कहि नन्द के भौनहिं।
वाको जियो जुग लाख करोर जसोमति को सुख जात कह्यो नहिं॥
तेल लगाइ लगाइ कै अंजन भौंह बनाइ बनाइ डिठौनहिं।
डालि हमेलनि हार निहारत वारत ज्यौं चुचकारत छौनहिं॥"

युवा कृष्ण का रूप ब्रज-वनिताओं को विभोर करने वाला है। उनकी विलक्षण रूप-राशि को देखकर मुग्ध न हो, लोक-लाज का परित्याग कर उनकी दीवानी न बन जाए ऐसी कौन स्त्री ब्रज में है ? उस सौंदर्य पर दृष्टि ठहरती नहीं, वह प्राणों को बींधने वाला सौंदर्य है। यथा—

"लोक की लाज तजी तबहीं जब देख्यो सखी ब्रजचन्द सलोनो।
खजन मीन सरोजन की छवि गंजन नैन लला दिनहोनो॥
रसखानि निहारि सकें जु सम्हारि कै को तिय है वह रूप सुठोनो।
भौंह कमान सौं (जोहन) को सब बेधत प्राननि नन्द को छौनो॥"

सोहत है चंदवा सिर मोर के जैसियै सुन्दर पाग कसी है।
तैसिये गोरज भाल विराजति जैसी हिये बनमाल लसी है॥

कृष्ण-सौन्दर्य का प्रभाव स्थायी और अमिट है। रूप के उस सम्मोहन से मुक्ति कहाँ ? उन्माद छा जाता है। कुछ भी होश नहीं रहता।

"भौंह भरी सुथरी अतिसै अधरानि रंगी रंग रातो।
कुण्डल लोल कपोल महाछबि कुंजनि तें निकस्यो मुसिकातो॥
रसखानि लखै मग छूटि गयो डग भूलि गई तन की सुधि सातो।
फूटि गयो दधि को सिर भाजन टूटिगो नैननि लाज को नातो॥"

इसी तरह राधा के सौन्दर्य की अनेक छवियों—उसकी भृकुटियों, नेत्र, चितवन, शरीर का सुडौल गठन, देहयष्टि, मस्तक पर टीका आदि—का मनोहर शब्दावली में यथास्थान वर्णन करने में रसखान पूर्णतः सिद्धहस्त हैं।

"श्रीमुख यों न बखान सकै वृषभान सुता जू को रूप उजारो।
हे रसखान तू ज्ञान संभार तरैनि निहार जु रीझन हारो॥
चारु सिंदूर को लाल रसाल लसै व्रज को भाल टिकारो।
गोद में मानौं विराजत है घनस्याम के सारे कौ सारे कौ सारो॥"

माधुर्य भक्ति में विरह का महत्त्वपूर्ण स्थान है। रसखान ने विरह का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। वसंत के आगमन पर भ्रमरों की अनुगूंज, कोयल की कूक सुनाई देने लगी है। प्रकृति पुष्पित होने लगी है। चारों ओर मादकता का संचार है किन्तु विरहिणी के कृष्ण नहीं आये। कितने कठोर हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"फूलत फूल सबै बन बागन बोलत भौंर बसंत के आवत।
कोयल की किलकार सुनै सब कंत बिदेसन तें सब आवत।।
ऐसे कठोर महा रसखान जु ने कहु मोरी ये पार न पावत।
हूक सी सालत है हिय में जब बैरिन कोयल कूक सुनावत।।"

कृष्ण-बिछोह में मुरझाई विरहिणी की देह-बल्लरी, उसका निस्तेज यौवन; उसका कांतिहीन मुख, कृष्ण-आगमन के सन्देश पर इस प्रकार प्रफुल्लित, प्रदीप्त और विकसित हो उठा है, जिस प्रकार दीपक की लौ(बत्ती) उकसा देने पर सर्वत्र स्वर्णिम प्रकाश फैल जाता है।

"रसखान सुनाह वियोग के ताप मलीन महा दुति देह तिया की।
पंकज सो मुख गो मुरझाय लगी लपटैं बरै स्वांस हिया की।।
ऐसे में आवत कान्ह सुने हुलसै सुतनी तरकी अंगिया की।
यों जग जोति उठी तन की उकसाय दई मनौं बाती दिया की।।"

विरह-वर्णन में रसखान ने कभी-कभी रीतिकालीन ऊहात्मक-पद्धति का भी सहारा लिया है।

"बिरहा की जु आंच लगी तन में तब जाय परी जमुना जल में।
बिरहानल तें जल सूखि गयो मछली बही छाँड़ि गई तल में।।
जब रेत फटी अरु पताल गई तब शेष जर्‌यो धरती-तल में।
रसखान तब इहि आँच मिटै जब आय कै स्याम लगै गल में।।"

समग्रत: कहा जा सकता है कि रसखान-काव्य में विरह-वर्णन सहज, स्वाभाविक और मार्मिक है। यदा-कदा अतिशयोक्तिपूर्ण कथन भी हैं। वस्तुत: यह युग-युग से प्रियतम प्रभु से बिछुड़ी प्रीति-दग्ध प्रणयाकुल आत्मा-रूप विरहिणी की व्यथा-कथा है। यह व्यथा उनके पदों में हृदय के सम्पूर्ण आवेग से उच्छलित है। कवि अपने आराध्य का जन्म-जन्म से दास है। यही कारण है कि कवि की रूपासक्ति, प्रेमासक्ति और तज्जन्य विरह की चरम परिणति उसके आत्मसमर्पण में होती। प्रभु अनन्य हैं और कवि उनका अनन्य भक्त। उसका सारा जीवन, जन्म-जन्मांतर का जीवन कृष्णमय हो। जड़-जंगम किसी भी रूप या योनि में उसे आराध्य का सहवास, साहचर्य मिले यही उसकी मनोकामना है और यही प्रेम है और यही भक्ति।

"मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।
जो पसु हौं तो कहा बसु मेरो चरों नित नन्द की धेनु मँझारन।।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो धर्‌यो कर छत्र पुरंदर धारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौं मिलि कालिन्दी-कूल-कदम्ब की डारन।।"

अपने अनन्य भक्ति-भाव के कारण ही रसखान कृष्ण-संरक्षण में स्वयं को पूर्ण निरापद अथवा तुलसी की शब्दावली में परम विश्राम की स्थिति में (पायो परम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्राम राम समान हित नहीं कहूं।) पाते हैं।

"कहा करै रसखानि को कोऊ चुगल लवार।"

अथवा

"काहे को सोच करै रसखानि, कहा करिहै रविनंद विचारो।"

जो परम दयालु, कृपालु, भक्त-वत्सल प्रभु कृष्ण सहायक हैं।

"ताखन जाखन राखियें माखन-चाखन हारो सो राखन हारो।"

रसखान भी अन्य कृष्ण-भक्त कवियों की भांति ही सिद्धान्ततः कृष्ण के निराकार, निर्गुण रूप को स्वीकारते हैं किन्तु व्यवहारतः वे सगुणोपासक हैं। भक्ति के लिए आलम्बन अनिवार्य है। सूर के शब्दों में—

"रूप रेख गुन जाति जुगति बिनु निरालम्ब मन चकृत धावै।
सब विधि अगम विचारहिं ताते सूर सगुन लीला पद गावै।"

चूंकि निराकार, निरालम्ब आराध्य के प्रति मन एकाग्र नहीं हो पाता इसीलिए सूर की भांति रसखान भी प्रभु के सगुण रूप के ही परम भक्त हैं। जो इस सचराचर सृष्टि का कर्ता, धर्ता और संहर्ता है, जो महान, विराट और निरंजन है, वह भी अपने सगुण-साकार-रूप में साधारण बालकों की भांति नंद जी के घर में मिट्टी खा रहा है। कैसा विलक्षण प्रभु है।

"कहा कहूं आली कछु कहती बनै न दसा,
नंदजी के अंगना में कौतुक एक देख्यौ मैं।
जगत के ठाटी महापुरुष विराटी जो निरंजन
निराटी ताहि माटी खात देख्यौ मैं॥"

कृष्ण के सगुण भक्त-कवियों ने उन्हें अन्यान्य विशिष्टताओं से रेखांकित किया है। ये महत्वपूर्ण विशिष्टताएं ही उनकी लीलाओं (बाल लीला, रास-लीला फाग लीला, कुंज लीला आदि) के रूप में गृहीत हैं।

रसखान ने बाललीला अर्थात् कृष्ण के बचपन की अन्यान्य झांकियां प्रस्तुत की हैं। माटी खाना, धूल-धूसरित होना, चुराकर माखन खाना, विभिन्न प्रकार के आभूषण धारण करना, अन्यान्य प्रकार से शरारतें करना, गोपियों को तरह-तरह से सताना तथा नंद-जसोदा का प्रेम प्रदर्शित करना आदि—से सम्बद्ध क्रिया व्यापार बाललीला के अन्तर्गत वर्णित हैं। यथा—

"धूरि भरे अति सोभित स्यामजू तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरैं अंगना पग पैंजनी बाजति पीरी कछोटी॥
वा छवि को रसखान विलोकत बारत काम कला-निधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सौं लै गयो माखन रोटी॥"

कृष्ण की किशोरावस्था से सम्बद्ध रासलीला के दृश्य बड़ी सफलतापूर्वक रसखान ने प्रस्तुत किए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आज भटू मुरली-बट के तट नन्द के साँवरे रास रच्यो री।
नैननि सैननि बैननि सों नहिं कोऊ मनोहर भाव बच्यो री॥
जद्यपि राखन कौं कुल-कानि सबै ब्रज-बालन प्रान पच्यो री।
तद्यपि वा रसखानि के हाथ बिकानी को अंत लच्यो पै लच्यो री॥"

फाग-लीला में राधा-कृष्ण और गोपियों के फाग खेलने के सुन्दर चित्र रसखान ने उतारे हैं। फागुन लगते ही ब्रजमंडल में धूम मच गयी है। ऐसी कौन नवयुवती है ब्रज में जो कृष्णाकर्षण से विवश न हुई हो? सभी लोकलाज त्याग कर कृष्ण-दीवानी हो रही हैं और सुबह से शाम तक कृष्ण के साथ फाग खेलने में तल्लीन हो रही हैं।

"फागुन लाग्यो सखी जब तें तब तें ब्रजमंडल धूम मच्यो है।
नारि नवेली बचै नहिं एक बिसेख मरै सबै प्रेम अंच्यो है॥
सांझ सकारे वही रसखानि सुरंग गुलालन खेल मच्यो है।
को सजनी निलजी न भई अरु कौन भटूजिहि मान बच्यो है॥"

रसखान ने कृष्ण की कुंज लीला, दान लीला, चीरहरण आदि का भी मनोहारी वर्णन किया है। कुंज-लीला की एक छवि दृष्टव्य है—

"रंग भर्यो मुसकात लला निकस्यो कल कुंजन तें सुखदाई।
मैं तबहीं निकसी घर तें तकि नैन बिसाल की चोट चलाई॥
घूमि गिरी रसखानि तबै हरिनी जिमि बान लगें गिरिनाई।
टूटि गयो घर को सब बन्धन टूटिगो आरज-लाज बड़ाई॥"

उक्त वर्णन से स्पष्ट है कि रसखान व्यवहारतः कृष्ण के सगुण स्वरूप के ही चहेते थे किन्तु कृष्ण के निर्गुण, निराकार रूप को मान्यता भी वे बराबर देते रहे हैं। यही कारण है कि उनके अलौकिकत्व की ओर उनकी दृष्टि बराबर रही है। उनके कृष्ण परम ब्रह्म हैं। वे चतुरानन, शिव आदि महादेवों के बंदित महाप्रभु हैं, फिर भी गोपियों के संकेतों पर नाचते हैं। यथा—

"संकर से सुर जाहि जपें, चतुरानन ध्यानन धर्म बढ़ावैं।"

शेष, गनेस, महेस, दिनेस, सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं।
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड अछेद अभेद सुवेद बतावैं॥

ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भरि छाछ पर नाच नचावैं।"

सौन्दर्य-विधान

रसखान स्वच्छन्द भावधारा के कवि हैं। उनके काव्य में आवेग की बराबर सृष्टि हुई है। भावावेश का सहज उच्छलन, गहरी विरहानुभूति आत्माभिव्यंजक वक्रोक्तियां आदि अन्यान्य ऐसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व उनकी कविता में हैं जो उन्हें सहज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वच्छंद और भावुक कवि प्रमाणित करते हैं। उनकी कविता आत्मानुभूति का निरायास प्रतिफलन है। शास्त्रीय नियमों से अपरिचित रसखान ने अपने अनुभूति-विधान के लिए स्वानुकूल मार्ग बनाया है। उनके विशुद्ध प्रेम की अनुभूति प्रवण किन्तु अनावृत्त अभिव्यक्ति 'सुजान रसखान' में हुई है। भावों और वर्णनगत चेष्टाओं में वे प्रेम के औदात्य को कभी नष्ट नहीं होने देते। भाव अथवा शिल्पगत कृत्रिमता से उनके काव्य का दूर का संबंध भी नहीं है। प्रेम और रति-कामना-सूचक हाव-भाव, मुद्राओं और चेष्टाओं की तन्मयतापूर्ण, अकृत्रिम और सजीव अभिव्यक्ति ने उनके काव्य को अत्यन्त मर्मस्पर्शी बना दिया है :

रसखान सौन्दर्य के सफल चितेरे हैं। उनका सौन्दर्य चित्रण स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति का सौन्दर्य है। उनका काव्य आंतर सादृश्य एवं अनुभूतिमय आत्म-स्पर्श का काव्य है। उनकी अनुभूति अभिधा और कभी-कभी लक्षणा के सहारे भाव-आवर्तों द्वारा संचरित होती है। यद्यपि सौन्दर्यशास्त्रियों ने सौन्दर्य को गोपनशील माना है किन्तु रसखान और घनानंद का काव्य इसका अपवाद हैं। यहाँ कुछ भी गोपन नहीं। सौन्दर्य विधायिनी कल्पनाओं युक्त भाव-चित्र इन कवियों की रचनाओं में बिखरे पड़े हैं। रसखान का काव्य तो स्वतः स्फूर्त काव्य है। उनकी अनुभूतियां अनिर्वचनीय आनन्द का उद्रेक करती हैं। महाकवि जयशंकर प्रसाद ने सौन्दर्य को प्रकाम्य माना है। उनके अनुसार काम, प्रेम तथा सौन्दर्य परस्पर पूरक हैं। 'आंसू' में ऐसा ही एक रूपक है।

'कामना सिंधु लहराता छवि पूरनिमा-सी छायी।
रत्नाकर बनी निरखती मेरे शशि की परछाई॥' ['आंसू'— प्रसाद]

रसखान के काव्य में सौन्दर्य, काम, प्रेम और माधुर्य परस्पर पूरक बनकर आये हैं। कृष्ण-सौन्दर्य कामना को जन्म देता है। उस सौन्दर्य का सम्मोहन ही गोपियों के रति-भाव का बीज है। यही रति-भाव विशुद्ध प्रेम और माधुर्य में परि-वर्तित हो जाता है और माधुर्य-प्रेम ही उनका जीवन-सर्वस्व है। रसखान की सौन्दर्य-चेतना स्थूल देह एवं मांसलता से ऊर्ध्वोन्मुख होकर आध्यात्म में, प्रभु-प्रेम में पर्यवसित हो जाती है। उनके रसखानि (कृष्ण) का सहज सौन्दर्य, उसकी बांकी चितवन और तीक्ष्ण कटाक्ष के साथ ही उसकी मंद-मंद मुस्कराहट का सम्मोहन प्रेम-दग्ध ही नहीं करता वरन् बिछोह-विदग्ध मन के अंतःताप को शमित भी करता है। अंतरात्मा में रस की सृष्टि करता है और प्राणों को मधुर प्रेम के आक-र्षण से भर देता है।

"गोरज बिराजै भाल लहलही वन माल
आगे गैयां पाछैं ग्वाल गावें मृदुतान री।
जैसी धुनि मधुर मधुर बांसुरी की
तैसी बंक चितवनि मंद-मंद मुसकान री॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदम विटप के निकट तटनी के तट
अटा चढ़ि देखि पीत पट फहरान री।
रस बरसावै तन तपन बुझावै
नैन प्राननि रिझावै वह आवै रसखानि री।।"

सौन्दर्य आभ्यान्तरिक (मन का) भी होता है और बाह्य (आंगिक) भी। रसखान के आभ्यान्तरिक सौन्दर्य के अंतर्गत उनका प्रगाढ़ कृष्ण-प्रेम और उदात्त भावानुभूति है। वे सच्चे हृदय से आराध्य के प्रति समर्पित हैं। वे अन्यान्य योनियों में कृष्ण सान्निध्य के अभिलाषी हैं।

"मानुष हों तो वही रसखान बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।"

'जो रसना रस ना बिलसै तेहि देहु सदा निज नाम उचारन।'

'खास निवास मिलै जु पै तो वही कालिंदी-कूल-कदम्ब की डारन।'

रसखान का आंगिक (रूप) सौन्दर्य-विधान वैविध्यपूर्ण है। उन्होंने राधा-कृष्ण की देह को देव-मंदिर मानकर विविध अंगों-प्रत्यंगों का रूपांकन किया है। परन्तु उनका रूप-वर्णन अंशतः रीतिकालीन नख-शिख-परम्परा से भी कहीं-कहीं प्रभावित प्रतीत होता है; यथा—

"बागन काहे जाओ पिया घर बैठे ही बाग लगाय दिखाऊँ।
एड़ी अनार सी मौर रही बहियाँ दोउ चंपे सी डार नवाऊँ।।
छातिन में रस के निबुआ अरु घूँघट खोल के दाख चखाऊँ।
टांगन के रसके चसके रति फूलनि की रसखानि लुटाऊँ।।"

उक्त चित्र विरल हैं। वस्तुतः रसखान का रूप-बोध असाधारण है। उन्होंने कृष्ण-रूप का अत्यंत सुरुचिपूर्ण वर्णन किया है। कवि ने कृष्ण की गौर-स्यामल कांति, मुखमंडल, नेत्र, भृकुटि-विलास, कपोल आदि और राधा की देह-यष्टि, सुगठित अंगलता, वक्ष आदि से युक्त मानव-कलेवर के भव्य-सौन्दर्य को चित्रित किया है। उन्होंने कृष्ण के लोकोत्तर (दिव्य) सौन्दर्य को बड़े मनोयोग से रूपांकित किया है। कृष्ण-सौन्दर्य लोकोत्तर है। वे साक्षात् प्रभु हैं। उनके इस सौन्दर्य का दर्शन पूर्व-संचित पुण्यों से ही होता है।

"मोतिन माल बनी लट के, लटकी लटवा लट घूंघरवारी।
अंग ही अंग जराव लसै, अरु सीस लसै पगिया जरतारी।।
पूरब पून्यनि ते रसखानि, सु मोहिनी मूरति आनि निहारी।
चार्यो दिसानि की लै छवि, आनिकै झांके झरोखे में बांके बिहारी।।"

रसखान की प्रिय रंग-स्थली कृष्ण का बाल-काल है। उन्होंने उसे भाव सौकुमार्यवश वरण किया है। कृष्ण-शैशव की कमनीय कांति ने उन्हें अत्यधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस-सिक्त किया है। अतः कृष्ण-जीवन के स्वर्णोदय प्रभात, उनके बाल-रूप, बाल-मनोविज्ञान, उनकी भावाकुल मृदुलता, मधुरिमा के चतुर्दिक चित्र हैं रसखान की कविता में। कृष्ण की विश्वमोहिनी बाल-छवि, उनका धूल धूसरित तन, उनका औत्सुक्य-प्रमुदित सहज सरलपन, उनके निराले विस्मय-विमुग्धकारी नयन, उनकी सुन्दर चोटी रसखान को बेहद प्रिय हैं।

"धूलि भरे अति सोभित स्याम जू, तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरैं अँगना, पग पैंजनि बाजत पीरी कछोटी।।
वा छवि को रसखानि बिलोकत, वारत काम कला निधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सों लै गयो माखन रोटी।।"

कवि को शैशव के साथ ही कृष्ण का तारुण्य और किशोरावस्था भी प्रिय है। प्रेम-रस संसिक्त यौवन, स्वच्छंद विहार, आवर्जनाओं का अधिकरण, मधुमय ऋतु-प्रभाव, यौवन की मादकता, उद्दाम आवेग, मद विह्वल उन्माद और उल्लास तथा प्रेयसियों से छेड़-छाड़ की सुगढ़ तस्वीरें भी रसखान-काव्य में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं। वस्तुतः तारुण्य-बोध कवि के कामाध्यात्म का केन्द्र-बिन्दु है। यही कारण है कि गोपियां कृष्ण-यौवन की लालसा में बेसुध रहती हैं। गोपियों का आकर्षण नैसर्गिक है और वह दैहिक तथा आध्यात्मिक क्षुधा-तृषा की तुष्टि चाहता है। रसखान ने न केवल कृष्ण वरन् राधा के यौवन-लावण्य, उसके आंगिक रूप-सौन्दर्य तथा दोनों के परस्पर स्पर्श-आलिंगन के अनेक चित्र उतारे हैं। कृष्ण की वक्रदृष्टिगत चेष्टाओं, उनके कटाक्षपात का, बांकी चाल का मनोहारी दृश्य कवि ने उपस्थित किया है, यथा—

"वह घेरनि धेनु अबेर सबेरनि फेरनि लाल लकुट्टनि की।
वह तीछन चच्छु कटाछन की छवि मोरनि भौंह भृकुट्टनि की।।
वह लाल की चाल चुभी चित में रसखानि संगीत उघुट्टनि की।
वह पीत पटक्कनि की चटकानि लिटक्कनि मौर मुकुट्टनि की।।"

कवि ने कृष्ण-सौन्दर्य के साथ ही राधा के शारीरिक सौष्ठव, उसके नेत्र, कपोल, मुख, अधर, चिबुक, नासिका आदि का वर्णन प्रायः परम्परित उपमानों से ही किया है। राधा की श्री-शोभा, उसकी हाव-भाव-हेला, उसका निखरता हुआ तारुण्य और कामोद्दीप्त हास-विलास का वर्णन भी रसखान ने पूर्ण मनोयोग से किया है। समग्रतः राधा का सौन्दर्य किसी तरह भी कवि का कुत्सित सौन्दर्य-बोध नहीं। उसका लावण्य ललित लोल उमंग की तरह भोवोत्तेजन और रस-सिक्त करने वाला है।

"अति लाल गुलालहु फूलतें फूल अली, अलि कुंतल राजत है।
मुकता के कदंब के अंब के मौर सुने सुर कोकिल लाजत है।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मखतूल समान के गुंज छरानन किंसुक की छबि छाजत है।
यह आपन प्यारी जू की रसखानि बसंत सी आजु बिराजत है ॥"

इसी सन्दर्भ में राधा-कृष्ण की प्रेम-केलि, उनके आलिगन-स्पर्श-बोध युक्त निम्न पंक्तियां भी दृष्टव्य हैं—

"लाड़िली काल लसैं लखिये अलि पुंजन कुंजन में छवि गाढ़ी।
ऊजरी ज्यों बिजुरी सी जुरी चहुँ गूजरी केलि कला सम काढ़ी ॥
त्यों रसखान न जानि परैं सुखमा तिहुँ लोकनि की अति बाढ़ी।
लालन बाल लिये बिहरैं छहरैं सिर मोरपखी ठग ठाढ़ी ॥"

कुल मिलाकर रसखान का कृष्ण-बाल-बोध, किशोर-किशोरी का तारुण्य-बोध तद्विषयक सौन्दर्य-चित्रण अतयंत रमणीय, भावमय एवं श्लाघ्य है।

रसखान रस सिद्धि कवि हैं। उन्होंने अपने काव्य में रस-सृष्टि तो की है। किन्तु रस-तत्त्व पर कोई चिन्तन-मनन नहीं किया। इन्द्रियों द्वारा अनुभुत सौन्दर्य में रस-सौन्दर्य की सृष्टि करने वाले रसखान रस के शास्त्रीय पक्ष से अनभिज्ञ हैं। उनके काव्य में श्रृंगार का पूर्ण परिपाक हुआ है। वस्तुतः रसानुभूति के मूल में सौन्दर्यानुभूति होती है। रसखान-काव्य सौन्दर्यानुभूति की दृष्टि से उसी तरह महत्त्वपूर्ण है जिस प्रकार से घनानंद-काव्य। किन्तु सौन्दर्य और उसकी अनुभूति के अन्यान्य पहलुओं को रेखांकित करने वाले रसखान-काव्य को रस (श्रृंगार) के शास्त्रीय पहलुओं की दृष्टि से भी विश्लेषित किया जा सकता है।

श्रृंगार के दोनों पक्षों(संयोग एवं वियोग)के अन्यान्य आयामों —रूप-सौन्दर्य, प्रेम-व्यापार अथवा सघन प्रेम-प्रसंग तथा विप्रलम्भ श्रृंगार के चारों सोपान (पूर्वराग, मान, करुणा, प्रवास) आदि—का सुन्दर प्रस्तुतीकरण रसखान-काव्य में हुआ है। यथा—

"जाको लसैं मुख चंद समान कमानी सौं भौंह गुमान हरैं।
दीरग नैंन सरोजन तैं मृग खंजन मीन की पांत डरैं।
रसखान उरोज निहारत ही मुनि कौन समाधि न जाहि टरैं।"

रसखान ने सौन्दर्य वर्णन की दृष्टि से नायक और नायिका दोनों की सम्मोहक छवियों को रेखांकित किया है। नटवर कृष्ण की सघन घुंघराली केश-राशि, गोचारण के समय की विमोहक कांति, मधुर वाणी, दृष्टि-भंगिमा, चेष्टागत सौन्दर्य, बांके नयन, त्रिभंगी शरीर-मुद्रा, वाणीगत माधुर्य आदि वर्णन के साथ ही कृष्ण-सौन्दर्य के समग्र प्रभाव का रेखांकन भी कवि ने बड़े मनोयोग से किया है। कृष्ण के आंगिक सौन्दर्य का विलक्षण प्रभाव दृष्टव्य है।

"नैंननि बंक बिसाल के बाननि झेलि सकै अरु कौन नवेली।
बेधत है हिय तीछन कोर सुमार गिरी तिय कोटिक हेली ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ँ नहीं छिनहूँ रसखानि सु लागी फिरै द्रुम सों जनु बेली।
रोरि परी छवि की ब्रज़मंडल कुंडल गंडनि कुंतल केली।।"

राधा की देहयष्टि, उसके नेत्रों, उसके शारीरिक गठन, उसकी चिबुक आदि के सौन्दर्य की चर्चा रसखान ने बराबर की है। शरीर पर चंदन का लेप किये हुए राधा की शोभा अतुलनीय है। यथा—

"तन चन्द खोर के बैठी भटू रही आजु सुधा की सुता मनसी।
मनो इन्दु बधून लजावन को सब भांतनि काढ़ि धरी गन-सी।।
रसखानि विराजति चौकी कुचौ बिच उत्तमताहि जरी तन-सी।
दमकै दृग-वान के घायन कौं गिरि संत के संधि के जोवन सी।।"

राधा और गोपी-कृष्ण के प्रेम-व्यापार का विस्तार से वर्णन रसखान-काव्य में हुआ है। रसिक शिरोमणि का अनन्त लीला-व्यापार, उनके गहन प्रेम का परिचायक है। उनका कुंजों में, वृक्षों के नीचे रास-करना, फाग खेलना आदि प्रेम क्रीड़ाएं संयोग शृंगार को पुष्ट एवं परिपक्व करने वाली हैं।

"अधर लगाइ रस प्याइ बाँसुरी बजाइ;
मेरो नाम गाइ हाइ जादू कियौ मन मैं।

रस रास सरस रंगीलो रसखान प्रानि,
जान और जुगुति विलास कियों तन में।"

इसी प्रकार फाग वर्णन में संयोग के अभिनव चित्र दर्शनीय हैं।

"आवत लाल गुलाल लियें मग सूने मिली इक नार नवीनी।
त्यौं रसखानि लगाइ हियें भटू मौज कियौ मन माहिं अधीनी।।
सारी फटी सुकुमारि हटी अंगिया दरकी सरकी रस भीनी।
गाल गुलाल लगाइ लगाइ कै अंक रिझाय विदा करि दीनी।"

इस तरह रसखान-काव्य में शृंगार के सम्भोगपक्ष के रूप-चित्र प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। रसखान आचार्य कवि नहीं, भावुक कवि हैं। अत: उनके काव्य में नायिका-भेद-वर्णन का निर्वाह प्राय: नहीं हुआ है किन्तु प्रयास करने से कुछ उद्धरण खोजे जा सकते हैं। 'आगत पतिका' की मुरझाई देह बल्लरी प्रियतम आगमन के सुसंवाद से प्रमुदित हो गई है।

"नाह-वियोग बढ़्यौ रसखानि मलीन महा दुति देहतिया की।
पंकज सौ मुख गौ मुरझाय लगीं लपटें बरि स्वांस हिया की।।
ऐसे में आवत कान्ह सुने हुलसै तरकींजु तनी अँगियाँ की।
यों जग जोति उठी तन की उकसाइ दई मनौ बाती दिया की।।"

रसात्मक-सौन्दर्य के विप्रलम्भ-पक्ष की दृष्टि से रसखान का काव्य बड़ा विलक्षण है। वियोग काल की संचित मानस-छवियों को रूपायित करने में कवि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णतः सिद्धहस्त है। रसखान पूर्वराग संबंधी सूक्ष्मातिसूक्ष्म उद्भावनाओं के धनी हैं। कृष्ण के नेह-स्नेह में निमग्न गोपियों की कल्पना प्रवण अनुभूतियां सविशेष मुखर हुई हैं। यथा—

"उनहीं के सनेहन सानी रहैं उनहीं के जु नेह दिवानी रहैं।
उनहीं की सुनैंन औ बैंन त्यौ सैंन सौं चैंन अनेकन ठानी रहैं।।
उनहीं संग डोलन मैं रसखानि सबै सुख सिन्धु अघानी रहैं।
उनहीं बिन ज्यौं जलहीन ह्वै मीन आँखि मेरी अँसुवानी रहैं।।"

रागात्मक संवेदनाओं में मानिनी प्रिया का रूठना अत्यधिक स्पर्शी होता है। नायिका का मान संबंधी वर्णन भी रसखान ने रस-प्रेरित होकर किया है। यथा—

"प्रिय सों तुम मान कर्यो कत नागरि आजु कहा किनहूँ सिख दीनी।"

प्रवास की विविध अनुभूतियों से रस-स्निग्ध है रसखान का काव्य। मदन-दहन जैसा प्रवास काल में होता है वैसा पूर्वराग में कहां? रसखान की कविता में प्रवास की टीस और तज्जन्य प्रकल्पनाएं बड़ी हृदयस्पर्शी बन पड़ी हैं। यथा—

"मग हेरत धूंधरे नैन भये रसना रट वा गुन गावन की।
अंगुरी गनि हार थकी सजनी सगुनौती चलै नहिं पावन की।।
पथिकौ कोउ ऐसो जु नाहिं कहै सुधि है रसखानि कै आवन की।
मन भावन आवन सावन में कही औधि करी डग बावन की।।"

समग्रतः रसखान का रस-सौन्दर्य उनकी आंतर अनुभूतियों और मूल संवेदनाओं से सम्पन्न है। कवि की रागात्मक चेतना, उसकी आत्मिक सौन्दर्यानुभूति, उसकी रस-चर्वणा सर्जनात्मक शक्ति के सहारे प्रतिच्छवित हुई है। रसखान रस-धर्मी सौन्दर्यदर्शी हैं। उनका शृंगार वर्णन भावक और भावुक दोनों के लिए आस्वाद्य है, अस्तु वह रसमयी है।

शिल्प वैशिष्ट्य

भारतीय संस्कृति में 'शिल्प' को सौन्दर्य-भावना का मूल संस्कर्ता और चित्र, मूर्ति, नृत्य, गीत, वाद्य (संगीत) आदि कलाओं का समाहर्ता माना गया है।[1] वस्तुतः शिल्प प्रतिरूपात्मक अनुकृति अथवा सादृश्य विधायनी वृत्ति है और कलाओं और काव्य का अभिन्न अंग है।

मध्यकालीन कवि काव्य (अथवा काव्यकला) के अतिरिक्त अन्य ललित कलाओं के प्रति उतने सचेष्ट नहीं थे। वे काव्य के प्रति ही अधिक अनुरक्त हैं। उनके लिए कविता ही जीवन-सौन्दर्य की विधायिनी है। अतः वे काव्य के प्रति

1. डॉ० जगदीश गुप्त : वैदिक साहित्य में शिल्प का स्वरूप : भारतीय कला के पदचिह्न, पृष्ठ 80

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकृष्ट हैं। उनके लिए काव्य-शिल्प और भाव में अपार्थक्य है। दोनों 'गिरा अरथ जल बीचि सम' अभिन्न हैं। इस संदर्भ में रसखान की काव्य-भाषा, शब्द-शिल्प, अभिव्यंजना कौशल, अलंकार-विधान और छंदोबंध पर विमर्श अपेक्षित है।

रसखान की कविता की महत्त्वपूर्ण शिल्पगत विशेषता निरलंकृति है। अलंकारों का प्रयोग रसखान-काव्य में हुआ है किन्तु अत्यल्प। प्रेम की दृढ़ता, अनन्यता, हृदय वेधक सरलता तथा अनुभूति और स्पंदन की चरमावस्था में रसखान के पास अलंकार-प्रयोग का उतना अवकाश ही नहीं रहा है। वैसे भी रसखान रससिद्ध कवि हैं, शास्त्रज्ञ काव्यशास्त्री कवि नहीं। फिर भी रसखान के काव्य में यमक, श्लेष तथा उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास आदि के उदाहरण ढूंढ़े जा सकते हैं।

यमक—एक ही शब्द की भिन्न अर्थ में दोबार आवृत्ति 'यमक' में होती है।

"बैन वही उनको गुन गाइ और कान वही उन बैन सों सानी।"

"त्यौं रसखानि वही रसखानि जु है रसखानि सों है रसखानी।"

यहाँ भिन्न अर्थ में 'रसखानि' शब्द की आवृत्ति है।

उपमा—अर्थालंकारों में उपमा का प्रयोग अनायास ही बन पड़ता है। 'उपमा' के अनायास प्रयोग रसखान-काव्य में भी हुए हैं, यथा—

'तिरसी बरछी सम मारत हैं दृग बान कमान सुजान लग्यो।'

'जाको लसै मुख चन्द समान सुकोमल अंगनि रूप लपेटी।'

'चंद सो आनन मैन मनोहर बैन मनोहर मोहत हौं मन।'

रूपक—रसखान की कविता में 'सांगरूपक' अथवा 'सावयव रूपक' के प्रयोग अपेक्षाकृत कम हैं और निरावयव रूपक के प्रयोग प्रचुर। सांगरूपक का एक सुन्दर उदाहरण दृष्टव्य है, जहां कृष्णागमन पर वर्षा ऋतु का आरोप है।

"दमकै रबि कुंडल दामिनी से धुरवा जिमि गोरज छाजत है।
मुकताहल-बारन गोपन के सु तौ बूंदन की छबि छाजत है।।
ब्रजबाल नदी उमही रसखानि मयंक-बधू दुति लाजत है।
यह आवन श्री मनभावन की बरषा जिमि आज विराजत है।।"

उत्प्रेक्षा—उत्प्रेक्षा के सुष्ठु प्रयोग भी रसखान ने यदा-कदा किये हैं। एक सुन्दर उदाहरण दृष्टव्य है—

'रसखानि सुन्यो है वियोग के ताप मलीन महा दुति देह तिया की।
चन्द्रमुखी तन गो मुरझाइ लगी लपटैं बिस स्वांस हिया की।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐते मैं आवत कन्हाई के हुलसे सरके तरकी अँगियाँ की ।
यों जग जोति उठी तन की उकसाइ दई मनौ बाती दिया की ॥'

विरोधाभास—अपने कथन को विरोधी उक्तियों द्वारा प्रस्तुत करने में भी रसखान प्रवीण हैं। एक सुष्ठु उदाहरण दृष्टव्य है—

'संकर से सुर जाहि जपैं चतुरानन ध्यानन धर्म बढ़ावैं ।

जा पर देव अदेव भू अंगना वारत प्रानन प्रान न पावैं ।'

'वारत प्रानन प्रानन पावैं' में विरोधाभास है अर्थात् कृष्ण ऐसे प्रभु हैं जिनके लिए प्राणों का उत्सर्ग करने पर सच्चे अर्थों में जीवन (प्राणों) की प्राप्ति होती है।

'सुजान रसखान' में कहीं-कहीं 'अतिशयोक्ति,' 'उल्लेख' तथा 'व्यतिरेक' आदि अलंकारों के भी एक-दो प्रयोग हुए हैं। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि रसखान अलंकार-प्रिय कवि हैं अथवा उन्होंने अलंकारों का वैसा साधिकार और विस्तृत प्रयोग किया है जैसा सूर-तुलसी जैसे भक्त-कवियों या बिहारी और घनानंद जैसे रीतिकालीन कवियों ने किया है।

शब्द-सम्पदा, अर्थ-गौरव, भाव-गरिमा, प्रांजलता, सम्प्रेषण-शक्ति और भावाभिव्यंजना की दृष्टि से रसखान-काव्य गुणात्मक एवं विशिष्ट है। यद्यपि रसखान घनानंद की भांति ब्रज-भाषा प्रवीण और बिहारी की भाँति ब्रजभाषा-पंडित नहीं हैं तथापि उनकी ब्रजभाषा की अपनी विशेषता है और वह है उसका ग्राम्य-संस्कार, उसकी निरलंकृति और सरलता। सहज और सरल भाषा अर्थात् चिर-परिचित शब्दावली का मार्दवयुक्त प्रयोग वे ही रचनाकार कर पाते हैं जिनका सम्बल निष्ठा है। निष्ठा शब्दाडम्बर में नहीं होती। कहना न होगा कि रसखान ऐसे ही निष्ठावान कवि हैं।

वस्तुतः रचनाकार के शब्द-चयन और छन्द-विधान पर समकालीन रचनाधर्मिता और सर्जनात्मक प्रवृत्तियों का गहरा प्रभाव पड़ता है। उसकी संवेदना का सांचा समकालीन रचनात्मक प्रवृत्तियां निर्मित करती हैं। निश्चय ही इसमें व्यक्ति रचनाकार की वैयक्तिक विशेषताएं सक्रिय भूमिका अदा करती हैं। रसखान के शिल्प-संस्कार का उत्स भक्त-कवियों की निष्ठा और सहज-स्वाभाविक भाषा-प्रवाह से है। गहन-प्रेम की अभिव्यक्ति अलंकृत हो भी नहीं सकती। अलंकृति के नाम पर रसखान अनुप्रास के ही प्रेमी ठहराये जा सकते हैं। अन्य भक्त कवियों की भाँति ही रसखान-काव्य का सौन्दर्य ध्वनियोजना में भी निहित है। भक्त कवियों की भाँति ही दोहा, कवित्त और सवैया छन्द उन्हें प्रिय हैं।

रसखान-काव्य की रमणीयता, उसका विशिष्ट सौन्दर्य, उसकी भावविह्वल वाग्धारा और सहज-सरल शब्द-योजना युक्त वाक्य-प्रवाह ध्वनि सामंजस्य में निहित है। यथा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कहा कहूँ आली कछु कहती बनै न दसा
नंद जी के अँगना में कौतुक एक देख्यौ मैं।
जगत के ठाटी महापुरुष विराटी जो निरंजन
निराटी ताहि माटी खात देख्यौ मैं।।"

भाव-प्रवणता, ध्वनिमूलक शब्द-चयन और भाषागत प्रवाह की दृष्टि से रसखान-काव्य अत्याधिक चित्ताकर्षक है। यथा—

"दृग दूने खिचे रहैं कानन लौं लट आनन पै लहराइ रही।
छवि छैल छबीली छटा लहराइ कै कौतुक कोटि दिखाइ रही।।
झूकि-झूकि झभाकनि चूम अमी चहि चाँदनी चन्द चुराइ रही।
मन पाइ रही रसखानि महा छबि मोहन की तरसाइ रही।।"

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि रसखान का शब्द-चयन, शब्द-विन्यास और प्रसंगानुकूल शब्द-प्रयोग भावाभिव्यंजक तथा अत्यधिक प्रभावोत्पादक है। उनकी भाषा अनुप्रासों से युक्त, प्रसाद और माधुर्य गुणों से आप्लावित सतत प्रवाहशील, रस-पोषिका और भावानुवर्त्तिनी शुद्ध ब्रजभाषा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट पाँच

भाव-सौन्दर्य

पद संख्या

1. धर्म और सम्प्रदाय की सीमाओं का अतिक्रमण कर रसखान कृष्ण-दीवाने हो गये हैं। कृष्ण-प्रेम के बिना लोक-परलोक अकारथ हैं। मनुष्य-जीवन व्यर्थ है। मानव-योनि तभी सार्थक है जब कृष्ण की लीला-स्थली में जन्म मिले। मानवेतर योनियों में जन्म भी मिले तो कोई हर्ज नहीं, बशर्ते कि कृष्ण की गायों, गोवर्धन पर्वत और यमुना की कछारों और कदम्ब की डालियों में विचरने का अवसर मिल सके। इसी भाव की, अनन्यता की अभिव्यक्ति इस सवैया में हुई है। रचनाकार का जीवन-धर्म मात्र लीला प्रभु श्रीकृष्ण का सान्निध्य है। अत्यंत सरल शब्दावली में गहरी भावासक्ति की अभिव्यंजना कवि के शिल्प-वैशिष्ट्य की परिचायक है।

विशेष—(i) 'कालिन्दी-कूल-कदम्ब' में छेकानुप्रास अलंकार और समस्त पदावली का सुष्ठु प्रयोग हुआ है।

(ii) **तृतीय पंक्ति में**—श्रीकृष्ण-प्रेरित ब्रजवासियों द्वारा इन्द्र की पूजा के स्थान पर गायों की पूजा किये जाने के परिणामस्वरूप पुरन्दर का कुपित हो अति-वृष्टि से ब्रजभूमि को जलमग्न करने का प्रयास और कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत को छत्र के रूप में धारण कर ब्रज की रक्षा करने का उपक्रम सम्बन्धी अन्तर्कथा का संकेत है।

2. ब्रज के वन-बाग, गो-ग्वाल, पशु-पक्षी, करील-कुंज, कालिन्दी-कूल-कदम्ब आदि के प्रति कवि की गहरी आसक्ति कृष्ण-प्रेम का ही सहज उच्छलन है। आलम्बन हैं कृष्ण और ब्रज की सचराचर सृष्टि है आलम्बनत्व के नाना भावों की प्रतिच्छाया। इसी शीतल छांव में रसखान और उनके आराध्य कृष्ण दोनों का तन-मन शांति पाता है। और यही कारण है कि कृष्ण स्वयं अपने ग्वाला रूप पर (लकुटी और कांवरिया धारण किया हुआ रूप) पृथ्वी की सारी सम्पदा, सारा वैभव लुटाना चाहते हैं। प्रस्तुत पद में 'रसखानि' शब्द श्लिष्ट है जो कृष्ण और रचनाकार दोनों ही पक्षों से समान रूप से जोड़ा जा सकता है। कृष्ण के पक्ष में विचार करें तो कृष्ण (द्वारिकाधीश) रुक्मिणी से अपने ब्रजवास की चर्चा करते हुए स्मृति-रूप-विधान द्वारा रसमग्न होते हैं और अपने गोचारण से सम्बद्ध अन्यान्य वस्तुओं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लकुटी, कामरिया, करील, यमुना, वन-वापी आदि—पर आठों सिद्धियों और नवों निधियों तथा सोने-चाँदी के महल अर्थात् लोक-वैभव को न्यौछावर कर देना चाहते हैं। 'रसखानि' को रचनाकार का उपनाम मानकर अर्थ भी किया जा सकता है अर्थात् रसखान अपने आराध्य कृष्ण के साधारण ग्वाला रूप पर बलिहारी हैं। उनकी ब्रज-लीला के समक्ष कवि को उनका द्वारिकाधीश का गरिमा और गौरव-शाली रूप, राजत्व की सारी प्रभुता, सारा वैभव तुच्छ प्रतीत होता है।

विशेष—(i) सिद्धियां आठ मानी गयीं—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वाशित्व। अणिमा शरीर को अदृश्य बनाने, महिमा शरीर का विस्तार करने, गरिमा शरीर को भारी करने, लघिमा शरीर को लघु रूप देने, प्राप्ति सब कुछ प्राप्त करने, प्राकाम्य इच्छा-पूर्ति, ईशित्व प्रभुता प्राप्त करने, वाशित्व वशीकरण की विलक्षण यौगिक शक्तियां हैं।

(ii) निधियां नौ मानी गई हैं—पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व।

3. प्रियतम कृष्ण से एकात्म होने, तादात्म्य स्थापित करने के अनेक मार्ग हो सकते हैं। एक है कृष्ण-रूप-धारणता का। प्रीति की यह विलक्षण रीति है। स्वयं कृष्णमय होने की अलभ्य लालसावश सखी के सुझाव पर गोपी कृष्ण की भांति मोरपंखों का सिर-मुकुट बनाने, गुंजों की माला पहनने, लकुटी लेने, पीताम्बर ओढ़ने, निरंतर मुरली धारण करने जैसे सारे उपक्रम करने को सहमत हैं। दुर्लभ आकांक्षा यही है कि वह कृष्ण की हो जाये।

विशेष—'अधरान धरी अधरानि धरौंगी' में यमक अलंकार का सुष्ठु प्रयोग हुआ है।

4. रसानंद के सागर कृष्ण ने कहीं एक बार प्रेयसी का नाम भर ले लिया। तब से उस प्रियतमा के मन में कृष्ण-सामीप्य की, उस पीताम्बरी के वक्ष-सौंदर्य से साक्षात्कार करने की अलभ्य अभिलाषा कुलबुला रही है। संयोगवश उस मनो-हारी मनचोर पर नजर भी पड़ गई तभी से वह मन में अटक गया है और हृदय विदग्ध हो गया है।

5. श्रीकृष्ण की भक्त-वत्सलता, भक्तों की मान-रक्षा और उनका लीला-विलास अद्भुत है। जिस सर्वशक्तिमान प्रभु के अपार गुणों का गान अप्सरा, गंधर्व; स्वयं मां सरस्वती और शेषनाग भी नहीं कर पाते; जिस ब्रह्म के रहस्य को भगवान भूतनाथ और प्रजापति ब्रह्मा भी नहीं जानते तथा जिसके ध्यान में योगी, तपस्वी, सिद्ध-साधक निरंतर समाधिस्थ रहने पर भी उसे प्राप्त नहीं कर पाते; उसे ग्वालिनें थोड़ी-सी छाछ के लिये छका देती हैं, नाच-नचा देती हैं; क्योंकि प्रभु प्रेम के वशीभूत हैं।

6. राधा-कृष्ण फाग खेल रहे हैं। चहुं ओर कुंकम; गुलाल और केसरिया रंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की पिचकारी छूट रही हैं। अद्भुत दृश्य है। मनमोहिनी राधा मौजमस्ती से उल्लसित हैं। प्रेमी-हृदय की सारी आकांक्षाओं की तृप्ति से मदहोशी छाई हुई है। राधा आज मनमोही कृष्ण से मनमानी कर सकी हैं, कदाचित इसीलिये कृष्ण का हृदय-हरण करके जा रही हैं।

विशेष—(i)

'खेलत फाग सुहाग भरी अनुरागहिं लालन कों धरि कै।
गेरत लाल गुलाल लली मनमोहिनी मौज मिटा करि कै।
जात चली रसखानि अली मदमस्त मनों मन कों हरि कै।।'

भाव एवं प्रभाव साम्य की दृष्टि से पद्माकर की निम्न पंक्तियां दृष्टव्य हैं—

'फाग की भीर अभीरन में, गहि गोविंद लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मन की पद्माकर ऊपर नाई अबीर की झोरी।।'

(ii) प्रथम पंक्ति में सुहाग भरे अनुराग की जो लालिमा है वह गुलाल-अबीर की लालिमा को और द्विगुणित कर रही है। जीवन की लालिमा और रसानंद, फाग की लालिमा और उल्लासमय आनंद का अद्भुत सामंजस्य है।

(iii) अंतिम पंक्ति में अनुप्रास के साथ ही उत्प्रेक्षा अलंकार का सटीक प्रयोग हुआ है।

7. सपत्नीक डाह की पराकाष्ठा है कि कृष्ण का संसर्ग जड़ पदार्थ बांसुरी से भी गोपियां सह नहीं सकतीं। कृष्ण उनके हैं। अहर्निश उन्हीं के साथ रहें।

8. प्रणय-खण्डिता गोपी की कृष्ण-प्रतीक्षारत निशा कितनी अकुलाहट में व्यतीत होती है और मनभावन कृष्ण अन्यत्र निवास करते हैं। खण्डिता के अन्तरदाह का सुन्दर वर्णन है।

9. कृष्ण-बांसुरी-वादन के विलक्षण प्रभाव की चर्चा है। आज मनमोहन ने विचित्र मायावी ढंग से बांसुरी बजाई है। सचराचर सृष्टि रस-सिक्त हो रही है। इस अद्भुत रसमयी ध्वनि को सुनकर गोपियां लोक-लाज और मर्यादा को भूल गई हैं। प्रेम-रस में सद्यःस्नाता राधिका नंदजी के द्वार पर बार-बार आ-जा रही हैं। आज सम्पूर्ण ब्रज-प्रदेश में ऐसी कौन रमणी है जो बांसुरी के रमणीय प्रभाव से मंत्र-मुग्ध न हुई हो। रसिक शिरोमणि कृष्ण की बंशी-ध्वनि में यह कैसी सम्मोहन-शक्ति है ?

10. वात्सल्य-भाव से भावाकुल स्त्री का कथन है। जसोदा द्वारा बाल-कृष्ण का शृंगार करना और उस मनोहारी रूप के अवलोकन से उत्पन्न अनुराग का वर्णन है।

विशेष—जसोदा द्वारा बालक-कृष्ण के तेल-उबटन, काजल आदि लगाना और हमेल-हार आदि पहनाना ब्रज की विशिष्ट लोक-संस्कृति को रेखांकित करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

11. बंशी बजाते हुए कृष्ण का कटाक्ष करना जादू जैसा प्रभाव डालता है। वैसे ही कटाक्षाघात से आहत राधा तन-मन की सुध-बुध खो अचेतावस्था में पड़ी है। बिरहोन्माद असह्य है। सारी गोपियाँ राधा की जीवन-डोर से बंधी हैं। कृष्ण-दर्शन के अभाव में राधा के साथ ही नंद बाबा की देहलीज पर विष पीकर प्राणोत्सर्ग करने को दृढ़ संकल्प हैं।

विशेष—यदि शास्त्रीय शब्दावली में विचार करें तो तृतीय और चतुर्थ पंक्ति में उन्माद और व्याधि नामक संचारी भावों तथा 'जड़ता' नामक विरहावस्था का उन्मेष माना जा सकता है।

12. इस पद में कृष्ण की प्रेममयी धृष्टता, नटखट स्वभाव और गोपियों के उपालम्भ का वर्णन है।

13. कृष्ण के सलोने रूप-सौन्दर्य का मनोहारी वर्णन है। गोपी का अपनी सखी के प्रति कथन है। जब से कृष्ण की उस विलक्षण रूप-राशि को देखा है, तभी से उन्माद जैसी स्थिति पैदा हो गई है और लोक-मर्यादा तथा समाज की लज्जा जैसी भावनाओं का विस्मरण हो गया है। अब मैं खुलेआम कृष्ण प्रेम-दीवानी हो गई हूँ। कृष्ण के सुन्दर नेत्र खंजन, मीन और कमल के उपमानों का भी अतिक्रमण करने वाले हैं। उनकी भौंहें कमान की भांति वक्र हैं और नेत्र दृष्टि-रूपी बाणों से निरंतर सभी को बींधते रहते हैं। भला इतनी अप्रतिम रूप-राशि को देखकर भी ऐसी कौन स्त्री है जो स्वयं को संभाल सके अर्थात् कृष्ण प्रेम-दीवानी न हो जाए ?

विशेष—(i) अंतिम पंक्ति में रूपक अलंकार है।

(ii) खंजन, मीन, सरोज—तीन-तीन उपमानों का सार्थक प्रयोग हुआ है जिसमें नेत्रों की चपलता, स्निग्धता, बांकपन, लालिमा आदि का एक साथ अंतर्भाव है।

14. कृष्ण के रूप-जाल में प्राण-रूपी पक्षी का फंसना और तड़पना, आँख से आँख लड़ना अर्थात् प्रथम-दर्शन में ही गम्भीर प्रेम हो जाना और तदुपरान्त बिछोह की आग में आँखों का दिन-रात अश्रु प्रवाह करना तथा कृष्ण-प्रेम की अधीनता और तज्जन्य विवशता से लोक-लाज का परित्याग करना आदि मनोभावों की सुष्ठु अभिव्यक्ति हुई है।

विशेष—द्वितीय पंक्ति में रूपक अलंकार है।

15. कृष्ण-रूप की दुहाई फिरी है। ब्रज-मण्डल में ढिंढोरा पिट रहा है। नवयुवतियों का घर से निकलना दूभर हो गया है। शृंगार-वर्णन की रीतिकालीन पद्धति का प्रयोग हुआ है।

16. नायिका का सर्वांग ही बगीचे के समान है। उपमा और रूपक अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

17. प्रेम-रस में सिक्त गोपी-कृष्ण अथवा राधा-कृष्ण की रति-क्रीड़ा का चित्र है। राधाकृष्ण के युगल को प्रगाढ़ आलिंगन-बद्ध देख एक गोपी अपनी सखी से कह रही है। वृक्ष की छाया में वे दोनों अंग-प्रत्यंग से गहरे स्पर्श सुख में डूबे हुए हैं। वह राधा प्रियतम कृष्ण के गले में बाँहें डालकर काम-रस-रंग में भीगी हुई है। वे बाहु-पाश में एक-दूसरे को बांधे कामासक्त वार्तालाप और क्रीड़ाओं में निमग्न हैं। प्रेमी-युगल रति-क्रीड़ा का हृदय से आनंद भोग रहा है। प्रियतम प्रियतमा के स्वर्ण आभा युक्त कुम्भ के समान सुडौल कुचों का और उसके अधोवस्त्र का स्पर्श कर नीबी-संधान करने का जब-जब प्रयास करता है तब-तब सम्भोग-सुख में अंतर्लिप्त नायिका नहीं-नहीं शब्द का उच्चारण करती है।

विशेष—(i) अन्तिम पंक्ति का भाव-साम्य रसिक सम्प्रदाय के एक कवि की इन पंक्तियों में दृष्टव्य है; यथा--

"नीबी करखत बरजति प्यारी,
रस लम्पट सम्पुट कर जोरत,
पद परसत पुनि-पुनि बलिहारी।"

इसी भांति—

"हाथन सौं गहि नीबी कह्यौ पिय,
नाहीं जु नाहीं जु नाही जु नाहीं।"

[हरिश्चन्द्र]

(ii) अनुप्रास और रूपक अलंकार।

(iii) रीतिकालीन पद्धति पर आधारित सम्भोग (शृंगार) का खुला चित्र है।

19. कृष्ण-प्रेम से सम्पूर्ण ब्रज आच्छादित है। ब्रज की सभी स्त्रियां अपने प्राण कृष्ण के ग्वाला-रूप पर न्योछावर करती हैं। पद-मैत्री और अनुप्रास की छटा निराली है।

2'. ब्रजराज के प्रेम का डंका बजा हुआ है। यह प्रेम सभी को पराभूत कर देता है। अतः एक गोपी दूसरी गोपी से बाहर दही-दूध बेचने को कहती है ताकि रसिक शिरोमणि से भेंट न हो और व्यर्थ में अंखियां उस प्रेम प्यासे के रूप की प्यासी न बन जायें।

21. कृष्ण की विलक्षण रूप-राशि पर मुग्ध गोपी का सखी से कथन है। कृष्ण के मोर-पंखी मुकुट में मोर पंख का चंदवा शोभायमान है और सुन्दर पगड़ी भी सिर पर शोभित हो रही है। वक्ष पर वन माला धारण किये तथा मस्तक पर गोरज लगाये हुए उस सलोने रूप को देखकर मैं बेसुध हो गई हूँ। इतना कहकर गोपी ने नेत्र बन्द कर लिए और घूंघट खींच लिया। सखी के बार-बार कहने पर भी वह नेत्र नहीं खोलती क्योंकि मनमोहन की जो रूप-छटा मानस-नेत्रों में समाई हुई है, उसे नष्ट नहीं करना चाहती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—(i) पूर्वराग की स्थिति है। मुग्धा नायिका का संज्ञालोप होना पूर्वराग की पराकाष्ठा है।

(ii) सखी के बार-बार कहने पर भी घूंघट और नेत्र न खोलना मुग्धा की प्रेमासक्ति और लोकलाज का प्रतीक भी है।

(iii) नेत्र न खोलना उस स्मृति रूप-विधान में डूबे रस-समाधिस्थ मन को विचलित न करने के कारण भी हो सकता है।

22. कृष्ण की रूप-माधुरी (सुन्दर घनी भौंहें एवं बौरानियां, लाल अधर, सुंदर कपोलों से क्रीड़ा करते कुण्डल आदि) को देखकर गोपियां बेहाल हैं। उन्हें तन की सुधि नहीं, मार्ग नहीं दिखाई देता, राह भूल गई हैं, शारीरिक नियन्त्रण खो गया है फलतः सिर रखी दधि की मटकी भी गिरकर टूट गई है और बात यहां तक ही नहीं उनका हृदय कृष्ण पर ऐसा रीझा है कि नेत्रों से लाज का नाता ही टूट गया है अर्थात् प्रेम के प्रबल झंझावात से धराशायी होकर लोक-लाज का शीशा ही चकनाचूर हो गया है। अब उन्हें परिजनों और पुरजनों की परवाह नहीं। वे कृष्ण-दीवानी हैं। दीवानों का समाज से क्या सम्बन्ध, लोकलाज से क्या नाता ?

विशेष –(i) रसात्मक बोध की दृष्टि से उक्त पद में प्रत्यक्ष रूप-विधान द्वारा रसानुभूति की ओर संकेत है। कृष्ण के प्रत्यक्ष रूप को देखकर गोपियों को योग-क्षेम का परिज्ञान नहीं रहता। शुक्लजी के शब्दों में वे हृदय की मुक्तावस्था वाली स्थिति में पहुँच गई हैं।

(ii) भाव-साम्य की दृष्टि से मीरा की निम्न पंक्तियां दृष्टव्य हैं—

"छोड़ि दई कुल की कानि कहा करिहै कोई।
संतन ढिग बैठि-बैठि लोक लाज खोई।"

27. रसखान प्रभु की प्रेमाधीनता का वर्णन करते हैं। उस निराकार गुणातीत ब्रह्म को वेदों-पुराणों आदि में ढूंढ़ा। उसका लीला-गान साम्प्रदायिक-धार्मिक साहित्य में खोजा। वेद-ऋचाओं को बड़े मनोयोग से सुना परन्तु वह प्रेम-प्रभु इन्द्रियातीत ही रहा। उसकी तलाश में जगह-जगह भटकता फिरा, किसी ने उसके स्वरूप और स्वभाव का परिचय नहीं दिया। ब्रह्म की इस अकारथ तलाश से थका रसखान प्रेम भक्ति से जब परिचित हुआ तो उसने विचित्र रूप में उस पार ब्रह्म परमेश्वर को पाया। देखा कि वह निराकार प्रभु साकार हो कुंज-कुटीर में प्रेम-देवी राधिका के पैर पलोट रहा है।

विशेष—(i) ज्ञान से ऊपर भक्ति को प्रतिष्ठित कर भक्त कवि रसखान प्रभु को प्रेमाधीन प्रमाणित करते हैं।

59. गोपी राधा-कृष्ण-प्रेम की चर्चा अपनी सखी से करती है। इन दिनों राधा-कृष्ण की प्रेम उन्मत्तता अद्भुत है। दोनों समाज की मर्यादा का परित्याग कर एक-दूसरे पर प्रेम प्रदर्शित करने से नहीं चूकते। यह प्रेम-संबंध क्या छिपाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से छिप सकता है ? क्या चन्द्रमा को हथेलियों में बाँधकर छुपाया जा सकता है ? आज ही यमुना तट पर दोनों मिले। एक दूसरे को देखा और मुड़कर मुस्कराने लगे। तदुपरान्त ऐसे प्रेम-दीवाने हुए कि पैर पड़-पड़ कर एक दूसरे पर बलिहारी होने लगे। प्रेम की तन्मयता तो देखो कि राधा गगरी उठाना भूल गई और कृष्ण गायों को चराना।

विशेष—अंतिम दो पंक्तियों का भाव-साम्य की दृष्टि से महाकवि देव की निम्न पंक्तियाँ उल्लेख्य हैं। राधा कृष्ण की नई-नई प्रेम-प्रीनि में फंसने पर क्या दशा है ? दोनों पर प्रेमोन्माद छाया हुआ है ?

'दुहुन को गुन रूप दोऊ बरनत फिरैं,
घर न थिरात, रीति नेह की नई नई।
मोहि मोहि मोहन को मन भयो राधामय,
राधा मन भयो मोहि मोहन मई मई॥'

64. रसखान के रसखानि (कृष्ण) आनंद के पारावार हैं। कवि को जीवन और जगत में उनके आगमन की निरंतर प्रतीक्षा है। कवि के प्रतीक्षा-रत मानस में उसका आगमन दृश्य कितना हृदयहारी है और कैसी प्रेम-वृष्टि करने वाला है ? वह गायें चराकर आ रहा है। उसकी केशराशि गो-धूल-धूसरित है। आगे गायें हैं। पीछे प्रेमी ग्वालों की टोली है। उसकी बांसुरी की ध्वनि जितनी विमोहित करने वाली है उतनी ही सम्मोहक उसकी तिरछी चितवन और मंद-मंद मुस्कान है। वह आनंद-राशि कृष्ण अब यमुना के किनारे कदंब-वृक्ष के पास आ गया है। उसका पीताम्बर फहरा रहा है। वह प्रेम-रस की वर्षा करने वाला, तन-मन के ताप को बुझाने वाला, नेत्रों और प्राणों को आकर्षण-पाश में बांधने वाला, रसखानि (आनंद का पारावार या भण्डार) ब्रजेश्वर कृष्ण आ गया है।

विशेष —(i) जीवन और जगत में कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा-रत है कवि, ताकि समाज का वैमनस्य, दुख-दारिद्र्य मिट सके और समाज में प्रेम एवं सौहार्द की वर्षा हो सके।

87. कृष्ण की छेड़छाड़ के प्रत्युत्तर में गोपी कहती है कि हे कान्ह मेरा चीर छोड़ दो। मैं तुम्हें दूध-मक्खन पेट भर खिलाने को तैयार हूँ किन्तु तुम गोरस के बहाने जिस रस को चाहते हो वह रस तुम्हें कदापि नहीं मिलेगा अर्थात् तुम्हारी रति-कामना कभी पूरी न हो सकेगी।

92. राधा-कृष्ण के संयोग-शृंगार का सुन्दर चित्र है। कृष्ण प्रियतमा राधिका के साथ आनन्दपूर्वक विहार कर रहे हैं। उनके पारस्परिक आलिंगन-स्पर्श से राधा की साड़ी के फुंदने टूट-टूट कर छितरा रहे हैं। उस प्रगाढ़ आलिंगन की कसमसाहट से नवयौवना राधा सिहर-सिहर उठती है। उसके नेत्रों की कोरों से गहन अनंग-रंग उद्दीप्त हो रहा है। रति-रंग-तरंगिणी इस उद्दाम आवेग से बह रही है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि उसके किनारे पर खड़ी ब्रज-वनिताएं कांप रहीं हैं अर्थात् राधा-कृष्ण के गहन प्रेम-प्रसंग से विचलित हो उठी हैं। राधा-कृष्ण को इस प्रकार आनंद-उन्मत्त देख-कर अन्य विरही जन विछोह की आग से और अधिक उत्तप्त हो रहे हैं।

विशेष—रूपक और अनुप्रास अलंकार।

105. कृष्ण-भक्ति के अभाव में संसार की सारी प्रभुता, सारा वैभव, सारी साधना निष्फल और अकारथ है। यदि मनुष्य सच्चे हृदय से भगवद् भक्ति और कृष्ण-प्रेम में निमग्न नहीं होता तो उसका जीवन निष्फल है। रसखान मनुष्य मात्र को प्रबोधित करते हुए कहते हैं कि कृष्ण-प्रेम के बिना ये सोने के महल जो लाल मोतियों की माला से सदा देदीप्यमान रहते हैं और जिनकी आभा आंखों को चकाचौंध कर देती है; व्यर्थ हैं। यह अप्रतिम प्रभुत्व जिसके समक्ष बड़े-बड़े राज-राजेश्वर भी प्रतिहारों की भांति उपस्थित रहते हैं, प्रभु-प्रीति के बिना यह प्रभुत्व भी निस्सार है। रसखान कहते हैं कि मनुष्य का सारा धर्म-कर्म (गंगा-स्नान तथा मुक्त हस्त से मोतियों का दान), वेद-पाठ, ज्ञान-ध्यान तथा चिन्तन अकारथ है। ये साधनाएं निष्फल हैं। यदि वह पीताम्बरधारी कृष्ण-प्रेम का दीवाना नहीं है।

विशेष—रसखान सच्चे अर्थों में भक्त-कवि हैं, इसीलिए ज्ञान-ध्यान कर्मकांड की असारता पर बल देते हैं और कृष्ण-प्रेम (भक्ति) को ही सर्वोपरि मानते हैं।

130. भक्ति-भाव से ओत-प्रोत कवि अपने आराध्य कृष्ण से प्रार्थना करता है कि हे प्रभु, मुझे निरंतर अपने नाम-स्मरण की शक्ति दो ताकि मेरी जिह्वा उत्तम रसानंद में डूब जाये। भगवद् भक्ति से बड़ा कोई आनन्द इन्द्रियों के लिए हो ही नहीं सकता। हाथों को कुंज-कुटीर (आपका निवास स्थल) में झाड़ू लगाने के सर्वोत्तम कार्य में प्रवृत्त होने की शक्ति दो। अणिमा आदि आठों सिद्धियों का सुख मुझे तभी मिलेगा जब मेरा शरीर ब्रज-धूलि से धूसरित हो सकेगा। हे प्रभु यदि आप मुझे विश्राम (खास निवास) ही देना चाहते हों तो मुझे अपनी क्रीड़ा-स्थली (ब्रज-भूमि), कालिंदी के कूल पर तथा कदंब की डालों के नीचे निवास देने की परम कृपा करें।

विशेष—(i) प्रथम पंक्ति में यमक तथा सभी पंक्तियों में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग हुआ है।

(ii) अन्य भक्त-कवियों की भांति ही रसखान ने भी भक्तिगत अनन्यता के भाव को अभिव्यक्त किया है।

138. गोपियों के कृष्ण-प्रेम और बिछोह का वर्णन है। गोपी का कथन है कि जबसे कृष्ण इस मार्ग से गोवर्धन सम्बन्धी लोकगीत गाते हुए निकले हैं तबसे लोकलाज और सामाजिक मर्यादा की कितनी ही दीवारें खड़ी करूँ, सब निरर्थक हैं; क्योंकि हृदय उस बंसी वाले पर अनुरक्त हो गया सो हो गया। अब मन वश में नहीं। अब तो प्रेम हो ही गया है लोग परिहास करें, निन्दा करें, मेरे प्रेम-का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर हँसें तो हँसें मुझे कोई परवाह नहीं। पर दु:ख कातरता नहीं है लोगों में, वे दूसरे के हृदयगत दाह को नहीं जानते। मेरी अन्त:वेदना तो वही जान सकता है जिसके हृदय में रसखानि (आनन्द के भण्डार कृष्ण) बसे हुए हैं अथवा जो कृष्ण-प्रेम में मेरी ही भांति मर्मान्तक वेदना सह रहा हो और मेरी ही भांति मन की आसक्ति के हाथों विवश हो।

विशेष—भाव-साम्य की दृष्टि से मीरा की यह पंक्ति उल्लेखनीय है—

"घायल की गति घायल जानै, कँ जिन लाई हो।"

142. विछोह की आग में झुलसी गोपी कृष्ण-आगमन के समाचार से इस प्रकार प्रफुल्लित हो जाती है जैसे बुझते हुए दीपक की लौ (बत्ती) को ऊपर बढ़ा दिया गया हो। मनमोहन कृष्ण के वियोग से उत्तप्त गोपी के शरीर की धवल कांति द्युतिहीन और मलिन हो रही है। हृदय की विरहाग्नि से उसका मुख-कमल मुरझा गया है। विरह की ऐसी ही दशा में प्रियतम कृष्ण के आगमन का समाचार मिलने ही मुरझाई देह और मलिन देह यष्टि खिल उठती है। आंतरिक उल्लास-जन्य वक्ष ऊभ-चूभ करने लगता है। फलत: अंगिया की तनी कसने और चटकने लगती हैं। शरीर की आभा इस भाँति प्रकाशित हो उठती है मानो दीपक की लौ बढ़ाने से सर्वत्र प्रकाश फैल गया हो।

विशेष—द्वितीय पंक्ति में उपमा तथा अंतिम पंक्ति (उकसाय दई मानौं बाती दिया की) में उत्प्रेक्षा अलंकार का सुष्ठु प्रयोग हुआ है।

155. कृष्ण के अलौकिकत्व, उनके मायावी, निराकार और साकार स्वरूप का एक साथ ही वर्णन है। गोपी का कथन है। जिस निराकार परम प्रभु के ध्यान में स्वयं देवाधिदेव महादेव शिव निरंतर निमग्न रहते हैं उस लीला प्रभु सा महान इस ब्रह्मांड में कोई दूसरा दृष्टिगत नहीं हो सकता। परन्तु आश्चर्य यह है कि वही अरूप, अदृश्य, निराकार ब्रह्म बालक के रूप में विद्यमान है और उसका स्वरूप कुछ अद्भुत-सा है। कवि चमत्कृत है। इस दृश्य का वर्णन उसकी सामर्थ्य में नहीं। इसीलिए गोपी से इस रूपाकृति का वर्णन नहीं हो पा रहा है, कुछ कहते बनता ही नहीं। यह विलक्षण कुतूहल है कि निराकार, गोतीत और महाविराट पुरुष (प्रभु) जो सम्पूर्ण सृष्टि का रचनाकार है, आज नंदजी के आंगन में बालक कृष्ण के रूप में मिट्टी खा रहा है।

विशेष—दर्शन पक्ष प्रबल है।

164. ग्वालों के श्रृंगार की चर्चा करते हुए गोपी कहती है कि आज सभी ग्वालों की पगड़ियाँ अत्यन्त सुन्दर लाल रंग की हैं। सभी के वस्त्र नाना प्रकार के इत्रादि से सुगंधित हैं। सभी के अंग-प्रत्यंग अन्यान्य प्रकार के आभूषणों से सुशोभित हैं और सभी की गर्दनों में मोतियों की मालायें शोभा पा रही हैं। किन्तु साधारण बेश में ही कृष्ण सबको सम्मोहित किये हुए हैं। उस ग्वाल-मंडली में वे इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोभित हैं जैसे वन में सिंह।

विशेष—(i) रसखान के जीवन को रेखांकित करने की दृष्टि से यह पद महत्त्वपूर्ण है। कदाचित् रसखान ने अपने यौवन-काल में राज दरबारों का वैभव और सुख देखा-भोगा था उसी की ध्वनि प्रथम तीन पंक्तियों में है।

(ii) अंतिम पंक्ति में (हरि ही हरि ही) यमक अलंकार है।

187. गोपी अपनी सखी से कहती है कि कल रसखानि (कृष्ण) ने मुरली बजाते हुए मेरा नाम भर लिया था; तभी से मेरी सास शत्रुवत् व्यवहार कर रही है। मुझे दरवाजे पर झांकने भी नहीं देती। सर्वत्र अपयश (बदनामी) हो रहा है किन्तु मुझे इसकी कोई परवाह नहीं। मात्र लालसा इतनी है कि प्यारे कृष्ण को आंख भर देख पाती। देखने पर (सास आदि) किसी का प्रतिबंध न होता। यद्यपि वह रसनिधि कृष्ण तो राह से गुजरता ही है और राह में ठिठक भी जाता है। परन्तु मेरा उसे देखना प्रतिबंधित है और मार्ग में उसके रुकने भर से रास्ता भी रुक जाता है, फिर कैसे देख पाऊँ? अर्थात् मार्ग मे प्रेमी-प्रेमिकाओं का जमघट जो इकट्ठा हो जाता है। फिर उस रसवारे पर दृष्टि पड़े तो कैसे पड़े?

215. गोपियों और राधा के साथ कृष्ण होली खेल रहे हैं। राधा के साथ फाग खेलने की प्रक्रिया में परस्पर सान्निध्य बढ़ने से अनुराग और अधिक घनीभूत हो रहा है। दोनों आनंद की अठखेलियां कर रहे हैं। कमल के समान सुन्दर आनन वाली राधा हाथ में कुंकुम लेकर प्रियतम कृष्ण के नेत्रों (मुंह) पर लगाने की घात में है। गुलाल फेंकने का अवसर ताक रही है। बड़ा ही मनोहारी दृश्य है। कवि उत्प्रेक्षा के द्वारा गोपियों और कृष्ण की फाग-लीला का रेखांकन प्रकृति से सादृश्य उपस्थित करके करता है। गुलाल की धूल चहुं ओर उड़ रही है। व्रज का वातावरण, अनुराग और गुलाल की लालिमा से आच्छादित है, उसमें ब्रजबालाओं की देहयष्टि, उनकी अप्रतिम रूप-राशि इस तरह चमक रही है मानो सावन की सांझ में लोहित गगन हो और चारों दिशाओं में चपला (बिजली) चमक रही हो।

विशेष—(i) अंतिम पंक्ति में उत्प्रेक्षा का प्रयोग सराहनीय है।

(ii) गुलाल की धूंधर (धूल) के मध्य गोपियों के शारीरिक सौन्दर्य को रूपायित करने हेतु रचनाकार ने सावन के महीने में सूर्यास्त के बाद छायी हुई लालिमा तथा चारों दिशाओं में दामिनी की द्युति को सादृश्य के रूप में प्रस्तुत किया है। यहाँ रचनाकार का उद्देश्य मात्र पार्थिव साम्य को रेखांकित करना नहीं वरन् प्रभाव-साम्य को प्रस्तुत करना भी है। क्योंकि फाग की गुलाल-गर्द में गोपियां थिर नही हैं, चलायमान हैं। उनके इसी चपल सौन्दर्य की तुलना चपला (विद्युत) से की गई है। सादृश्य-विधान का सुष्ठु प्रयोग है।

217. सखी राधा से उसके सौन्दर्य की चर्चा करते हुए कहती है कि हे राधिके! यदि तू दिन में घर से बाहर कहीं निकलती है तो सूर्य ठहर जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि एकटक तेरे सौन्दर्य को ही देखता रहता है। परिणामस्वरूप रात्रि नहीं होती और बटोही (राहगीर) को विश्राम नहीं मिलता। इसी भाँति रात्रि में भी दशा कुछ अच्छी नहीं क्योंकि तेरे रूप-लावण्य पर मुग्ध रसलोभी चन्द्रमा तेरे आंगन से टलता ही नहीं और रात्रि समाप्त नहीं होती। फलतः विरहदग्ध प्रेमी और अधिक त्रस्त होते हैं। इधर वायु (पवन) की दुर्दशा है क्योंकि वह दिन में तो चलता ही है रात्रि में भी नहीं ठहर पाता। विवश है। यह गंधलोलुप पवन तेरे शरीर की सुवास के कारण अहर्निश तेरे पीछे ही लगा रहता है। फलस्वरूप बेचारे बटोही को पवनावरोध के कारण मार्ग चलना दूभर हो जाता है।

विशेष—(i) समग्र पद में अतिशयोक्ति के साथ ही व्याज स्तुति अलंकार भी है।

(ii) राधा की रूप-राशि से प्रकृति भी प्रभावित है।

226. कृष्ण-विछोह में गोपी विचित्र विरहानल से जल रही है। इस कामाग्नि और विरहाग्नि से शांति पाने हेतु गोपी यमुना के जल में प्रवेश करती है। किन्तु विरहाग्नि के प्रबल ताप से जमुना-जल सूख जाता है और मछलियाँ भुनकर जमुना-तल से पाताल में गिर जाती हैं क्योंकि विरह की अग्नि से जमुना-जल तो सूख ही गया साथ ही उत्तप्त होने से तल के रेत में भी दरारें पड़ गईं। यह अग्नि यहीं शमित नहीं होती। पाताल-लोक भी इसकी जलन से बच नहीं सका। स्वयं शेषनाग भी जल उठे। भूतल और पाताल को जलाने वाली वियोगाग्नि, गोपी कहती है, तभी शांत होगी जब मनमोहन उसे आलिंगनबद्ध करेंगे, उसके हृदय से लग जायेंगे। प्रिय-मिलन से विरह-उत्ताप शमित होगा और प्रकृति शीतल एवं शान्त।

विशेष—विरह का रीतिकालीन ऊहात्मक वर्णन।

244. कृष्ण-छवि, कृष्ण-शोभा का सुन्दर वर्णन है। गोपी का सखी के प्रति कथन है अथवा रचनाकार का कृष्ण के कल्पित रूप-विधान को प्रस्तुत करने का प्रयास है। कृष्ण देर-सबेर गायें घेरने या चराने जाते हैं उस समय उनकी शोभा देखने योग्य होती है। विशेष रूप से गोचारण के समय उनका लाठी घुमाना, उनका भृकुटि-विलास, तीक्ष्ण कटाक्ष-पात और भंगिमा युक्त ढंग से चलना तथा बांसुरी से मधुर संगीत की तानें छेड़ना आदि अत्यन्त शोभादायक होते हैं। यही नहीं सिर पर बांकपन से धारण किया हुआ उनका मोर-मुकुट तथा चटकीला लटकता हुआ उनका पीताम्बर विलक्षण शोभा की सृष्टि करते हैं।

विशेष—कठोर वर्णों की आवृत्ति से रूप-सौन्दर्य को रेखांकित करने का रसखान का प्रयास उनके शिल्प-वैशिष्ट्य का परिचायक है।

260. राधा के अप्रतिम सौन्दर्य का वर्णन है। गोपी का सखी के प्रति कथन है। वृषभान की पुत्री राधा के उज्ज्वल रूप का वर्णन तो स्वयं कृष्ण भी अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मुख से नहीं कर सकते। अर्थात् राधा का धवल रूप अवर्णनीय है। दूसरा अर्थ भी ग्रहण किया जा सकता है कि राधा के मुख की श्री (शोभा) का वर्णन नहीं किया जा सकता। उसकी मुख-कांति अत्यन्त प्रकाशवान है। समग्रत: राधा का रूप-सौन्दर्य अकथनीय है, वर्णनातीत है। फिर मनुष्य की तो बिसात ही क्या है? उसमें इतनी भाव एवं रूप-बोध शक्ति कहाँ? वह तो अनुपम रूप पर मुग्ध ही हो सकता है। उसके लिए जैसे नक्षत्रों की अनुपम प्रभा सम्मोहित करने वाली है, उसी प्रकार राधा का सौन्दर्य विमोहित करने वाला है। अर्थात् जिस प्रकार मनुष्य नक्षत्रों की प्रभा से चमत्कृत होते हैं किन्तु उनकी थाह नहीं पाते, उसी प्रकार राधा-सौन्दर्य चमत्कृत करने वाला है। उस गहन रूप-राशि का समग्र अव-बोध सम्भव नहीं वह सौन्दर्य मन्त्र-मुग्धकारी है। बोध-गम्य नहीं। बुद्धि और कल्पना द्वारा अगम्य राधा की रूप-राशि को, उसकी रूप-माधुरी को रेखांकित करने हेतु उत्प्रेक्षा का सहारा लेते हुए कवि कहता है कि राधा के मस्तक पर सिन्दूर का जो सुन्दर लाल टीका लगा हुआ है वह ऐसा प्रतीत होता है मानो चन्द्रमा की गोद में मंगल सुशोभित हो।

विशेष—(i) चतुर्थ पंक्ति में उत्प्रेक्षा का सटीक प्रयोग हुआ है।

(ii) 'घनस्याम के सारे कौ सारे कौ सारौ।' अर्थात् घनस्याम का साला चन्द्रमा; चन्द्रमा का साला मंगल। चन्द्रमा की स्त्री वीरबहूटी मानी जाती है और वीरबहूटी का भाई मंगल माना जाता है। अर्थ लगाने में कठिनाई होती है अत: पद में क्लिष्टत्व दोष है।

'दान लीला'

पद संख्या

11. दान लीला के ग्यारह पदों में अधिकांश राधा-कृष्ण अथवा गोपी-कृष्ण की प्रेम-कलह से सम्बद्ध हैं। कृष्ण गोरस बेचने जाती गोपियों को निरन्तर छेड़ते हैं। उनसे कर-रूप में रसानंद प्राप्त करना चाहते हैं। यही पारस्परिक प्रेम-विग्रह, उपालम्भ आदि अति सरल शब्दावली में दानलीला में वर्णित हैं। दान का, कदा-चित्, अर्थ रति-दान अथवा प्रेमानंद-दान से ही है। प्रस्तुत पद में भी गोपी उपा-लम्भ भरे स्वर में कृष्ण को झिड़क रही है। हमने तो सुना था बाबा नंद के घर नौ लाख गायें हैं? उनके तुम प्रिय पुत्र होकर भी गोरस मांगते फिरते हो। क्या नौ लाख गायों के दूध-दही से भी तुम्हारी तृप्ति नहीं होती? प्रतीत होता है कि गोरस तो बहाना है और तुम्हारा सब वार्तालाप मिथ्या है। तुम्हारा उद्देश्य गोरस प्राप्त करना नहीं वरन् स्त्रियों से तुम कुछ और ही रस प्राप्त करना चाहते हो। तुम्हें लज्जा नहीं आती। लोक-मर्यादा को ताक पर रखकर तुम पराई स्त्रियों का मुंह ताकते फिरते हो। कुछ तो गम्भीरता धारण करो। अपनी नहीं तो दूसरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की लाज की परवाह करो। परिजनों की शर्म करो। अब तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम यहाँ से अपने घर या वृन्दावन कहीं भी चले जाओ। अकारथ अपना अपयश न करो।

'स्फुट पद'

यद्यपि इन पदों की प्रामाणिकता संदिग्ध है, तथापि इनके कथ्य और शिल्प से ये रसखान विरचित ही प्रतीत होते हैं। इन पाँच पदों में से प्रथम दो कृष्ण और गोपियों की पारस्परिक प्रेममय छींटाकशी से और तीन फाग-वर्णन से सम्बन्धित हैं। व्याख्या की दृष्टि से अत्यन्त सरल हैं।

पद संख्या

35. किसी गोपी का अन्य गोपियों से कथन है। कृष्ण आज उसी दिन की वेश-भूषा में गोपों की सुन्दर मण्डली के साथ आकर्षण भरे गीत गाते फाग खेलने को आये हैं। अतः हे सखियो ! अब परिजनों (सास, ननद आदि) की परवाह न करके फाग खेलने को तैयार हो जाओ। लोक-लाज की चिन्ता छोड़ो। मनमोहन के मोहक स्वरूप के दर्शन कर अपनी आँखों को सफल बनाओ। क्योंकि कृष्ण-दर्शन ही चक्षुओं और दृष्टि की सही अर्थों में सफलता है, सार्थकता है। उन नेत्रों की ही ज्योति सार्थक है जो कृष्ण-रूप को देखते हैं। तभी वृषभानु कुमारी राधा कृष्ण-मुरली का मनोरम संगीत सुन हँस पड़ीं। कुल मर्यादा का परित्याग करने वाली राधा के हास्य के प्रत्युत्तर में कृष्ण भी हँस पड़े।

'प्रेम वाटिका'

प्रेम वाटिका में 53 दोहे संकलित हैं। मूल विषय है प्रेम। प्रेम क्या है ? कहाँ जन्म लेता है ? प्रेम का स्वरूप और क्षेत्र क्या है ? प्रेम का महत्त्व क्या है ? आदि। अन्यान्य प्रसंगों में प्रेम को रेखांकित करने का रचनाकार का प्रयास अनुपम है। इस रचना के अधिकांश दोहों का सार इस प्रकार है। प्रेम वाटिका के माली हैं लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण और मालिन हैं राधा। वस्तुतः राधा ही प्रेम का मूल स्रोत या भण्डार है। प्रेम की चर्चा तो सांसारिक मनुष्य करते हैं किन्तु उसके रहस्य को कोई नहीं जानता और यदि प्रेम के रहस्य को जान लिया जाये तो रोना किस बात का ? प्रेम (ब्रह्म की भांति) अगम, अनुपम और अमित है। यह वह सागर है जहाँ एक बार प्यासा पहुँच जाए तो उसे अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं रहती। यह वह वारुनी है जिसे पान कर वरुण जलधीश हो गये और शंकर विश्व-पूज्य हो गये।

प्रेम कमलतंतु से भी क्षीण और तलवार की धार से भी तीक्ष्ण है। रसखान ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-वर्णन विरोधमूलक उक्तियों से किया है। उनकी दृष्टि में प्रेम का मार्ग अत्यंत सीधा भी है और टेढ़ा भी। किन्तु विधि-निषेध की भावना का तिरोभाव करता है प्रेम। लोक और वेद की सभी मर्यादाओं का अतिक्रमण करता है प्रेम। इस प्रेम पंथ में अज्ञान का अंधकार कहाँ ? यह तो अनवरत स्वयं प्रकाश पंथ है। प्रेम, ज्ञान, कर्म, उपासना तथा नाना पुराण निगमागम का सार है। मनुष्य की सारी वासनाओं (काम, क्रोध, मद, लोभ आदि) को उदात्तीकृत करता है प्रेम। प्रेम ही ब्रह्मानंद है। मित्र, पुत्रादि के लौकिक स्नेह में वह शुद्धता नहीं जो भगवद् प्रेम में है। भगवद् प्रेम अत्यन्त सूक्ष्म और कोमल है। प्रेम ही ईश्वर का प्रतिरूप है और प्रभु प्रेमस्वरूप ही हैं। दोनों में पार्थक्य का कोई प्रश्न ही नहीं। दोनों एक दूसरे से इस प्रकार अभिन्न हैं, जैसे सूरज से धूप और धूप से सूरज। यथा—

"प्रेम हरी को रूप है, त्यौं हरि प्रेम सरूप।
एक होई द्वै यों लसैं, ज्यौं सूरज और धूप।।"

अन्यान्य सम्प्रदाय और सिद्धान्त, ज्ञान-ध्यान, विद्या-बुद्धि आदि अकारथ हैं, यदि सच्चा प्रेम नहीं। इस तरह रसखान ने प्रेम वाटिका के दोहों में प्रेम को प्रभु-रूप ही प्रमाणित किया है। उनका प्रेम धर्म और सम्प्रदाय की सीमाओं से परे है। वह अगोचर और अगम्य है। वह ब्रह्मानंद की अनुभूति के समान सूक्ष्म और विलक्षण है।

प्रेम वाटिका के अन्तिम दोहे उनके जीवन-वृत्त की ओर संकेत करते हैं। इस दृष्टि से कुछेक की व्याख्या अपेक्षित है।

दोहा संख्या

48-49. साहिबी अर्थात् बादशाहत को हासिल करने सम्बन्धी गृह-युद्ध में दिल्ली वीरान हो गयी थी। दिल्ली की इस वीरानियत और श्मशानियत को देख कर रसखान ने शाही प्रभुत्व (ठसक) का मोह क्षण भर में त्याग दिया और व्रज में आकर राधा-कृष्ण की भक्ति में चित्त लगाया।

विशेष—उक्त दोहों में जो ध्वनि है उससे रसखान का दिल्ली दरबार से सम्बन्ध प्रमाणित होता है।

50. रसखान का यौवन-काल का लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम में परिवर्तित हुआ। प्रेम के उदात्तीकरण के सम्बन्ध में कवि लिखता है कि उस मानवती प्रेयसी पर अनुरक्त मन को बलपूर्वक हटाया। उस मोहिनी की सम्मोहक रूप-राशि के दर्प को चूर्ण कर सैयद इब्राहीम खाँ का मन मनभावन प्रेम-प्रभु, रसिक शिरोमणि भगवान श्रीकृष्ण के अप्रतिम सौन्दर्य का दीवाना हो गया और इस तरह इब्राहीम सच्चे अर्थों में रसखान हो गया।

विशेष—इस दोहे से स्पष्ट है कि अपने यौवन काल में रसखान लौकिक प्रेम में उन्मत्त थे और कालांतर में वही लौकिक प्रेम उदात्तीकृत हो कृष्ण-प्रेम में परिवर्तित हो गया।

122042

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

G
LIBRARY
Acc. प्रिंस 30/03/02
Class R E 6.6.2002
Cat R E 11
Tag etc. [illegible] 11
Filing R E 11
E.A.R. 22-6-02
R E 6.6.2002

Compiled
2002–2003
Recommended By Dr. V.D. Rakesh

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत रचनावली तैयार करने में पं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र और बाबू अमीर सिंह जी के संकलनों के साथ ही अन्य प्रकाशित संग्रहों से भी सहायता ली गई है। अभी तक प्रकाशित रसखान के काव्य-संग्रहों में से अधिकांश संकलनों के पाठों का विश्लेषण-विवेचन करने के उपरान्त प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत करने का प्रयास इस रचनावली में है। प्रकाशित छन्दों के अतिरिक्त जो नए कवित्त-सवैये उक्त पाण्डुलिपि से प्राप्त कई ऐसे नए पदों को, जो भाषा की दृष्टि से अत्यन्त संक्रमित और भ्रष्ट प्रतीत हुए हैं, इस संकलन में स्थान नहीं दिया जा सका है। मात्र वे ही पद स्थान पा सके हैं जिनमें 'रसखान' की छाप है अथवा जो रसखान की भावभूमि और भाषाशैली के निकट प्रमाणित हुए हैं। पद-ग्रहण की इस प्रक्रिया में कवि की भावधारा और भाषा-शैली को निरन्तर दृष्टि-पथ में रखा गया है। आदान की इस क्रिया में प्रकाशित संकलनों से उन पदों को भी छोड़ दिया गया है जिनकी प्रामाणिकता किसी तरह भी संदिग्ध प्रतीत हुई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसखान सच्चे अर्थ में मरजीवा कवि हैं, ऐसी बेखुदी के शिकार हो गये हैं कि वे रसखान भी नहीं रह पाते, वे सब-कुछ भूल जाते हैं पर वह भूल नहीं भूलते जो उनसे एक बार हो गयी है। वह भूल यह हुई कि वह श्रीकृष्ण से प्यार कर बैठे। जिस प्रकार वह गोपी प्यार करने की भूल कर बैठी जो तीर्थयात्रा की भीड़ में भटक गई थी। धाय की बाँह छूट गई भटकती हुई यशोदा के भीतर की तरफ चली गई और वहाँ एकाएक श्रीकृष्ण की मुसकान पर उनको प्यार करने की भूल कर बैठी और सब तो भूल गई, भटकना भूल गई, पर श्रीकृष्ण से प्यार करने की भूल नहीं भूलती, न उनके पीछे रात-दिन का भटकाव भूलता है—

तीरथ भीर में भूलि परी अलि छूट गई नेकु धाय की बाँही।
हौं भटकी भटकी निकसी सु कुटुम्ब जसोमति की जिहि धाँहिं।
देखत ही रसखान मनौ सु लग्यौ ही रह्यौ कब को हियरा हीं।
भाँति अनेकन भूली हुती उहि द्यौस की भूलनि भूलत नाहीं।।

यह बेखुदी बड़ी संक्रामक है, जो भटकाते हैं, वे भी भटक जाते हैं, जो लुभाते हैं वे भी लुभ जाते हैं, जो छलते हैं वह भी छले जाते हैं और बेखुदी का एक आलम छा जाता है जब यह स्थिति होती है कि प्रेमी और प्रेमिका को अपनी-अपनी भूमिका भूल जाती है। श्रीकृष्ण को गायें भूल जाती हैं, राधा को गागर उठाना—

एरी आज काल्हि सब लोक लाज त्यागि दोऊ,
सीखे हैं सबै विधि सनेह सरुसायबो।
यह रसखान दिन द्वै में बात फैलि जैहै,
कहाँ लौ सयानी चन्द हाथनि छुपायबो।
आज हौं निहार्‌यौ वीर निपट कालिंदी तीर,
दोउन को दोउन सों मुख मुसकायबो।
दोऊ परे पैयाँ दोऊ लेत है बलैयाँ
उन्हें भूलि गई गैयाँ इन्हें गागर उठायबो।।

जो गागर लेकर राधा जमुना किनारे गई थी वह गागर जल से नहीं भरी थी। वह स्मृतियों से भरी हुई थी, वे स्मृतियाँ एक पारावार पूरन अनुभव के आगे कहाँ टिक पाती हैं, वे जहाँ रखी गई वहीं रखी हैं और एक जादू दोनों पर छा जाता है।

रसखान प्रेम को एक शिखा के रूप में देखते हैं जो वियोग के ताप में सुलगती रहती है। खौलते हुए स्नेह में तपती रहती है, थोड़ी-थोड़ी भीतर भभकती भी रहती है। पर जब प्रिय के आने की बात सुनती है तो जैसे कोई बाती उकसा दे वैसे ही बल उठती है, तब भीतर की आग बाहर प्रकाश बन जाती है—

रसखान केवल रूप की प्यास नहीं जगाते, वे नाद की विद्वता भी जगाते हैं और इसीलिए उनके मन में सबसे अधिक गाँस अगर किसी वस्तु की है तो बाँस की बाँसुरी से। ब्रज में उससे बड़ी बैरिन कोई नहीं। बाँसुरी बजती है तो सारे काम-काज बिला जाते हैं, कुछ करते-धरते नहीं बनता। मन में यही होता है कि सारे के सारे बाँस कटा डालें। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। इसके मारे जो जल में है वह घड़ा भर नहीं पाता। जो रास्ते में है चल नहीं पाता। जो घर में है कुछ कर नहीं पाता। तन-मन ऐसा बेहाल हो जाता है कि कुछ कहते नहीं बनता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar